ISSN-0971-8400

विशेषांक

योजना

दिसंबर 2015 | विकास को समर्पित मासिक | ₹ 20

जलवायु परिवर्तन और संपोषणीयता

जलवायु परिवर्तन व संपोषणीय विकास: अनुकूलन रणनीति
के जी सक्सेना

आर्थिक विकास एवं जलवायु परिवर्तन की कीमत
पूर्णामिता दासगुप्ता

जलवायु परिवर्तन, प्रौद्योगिकी एवं ऊर्जा संपोषणीयता
मालती गोयल

विशेष आलेख

समानता व वैश्विक जलवायु समझौता
टी. जयरामन

फोकस

जलवायु परिवर्तन का असर व संपोषणीय कृषि
एम एस स्वामीनाथन

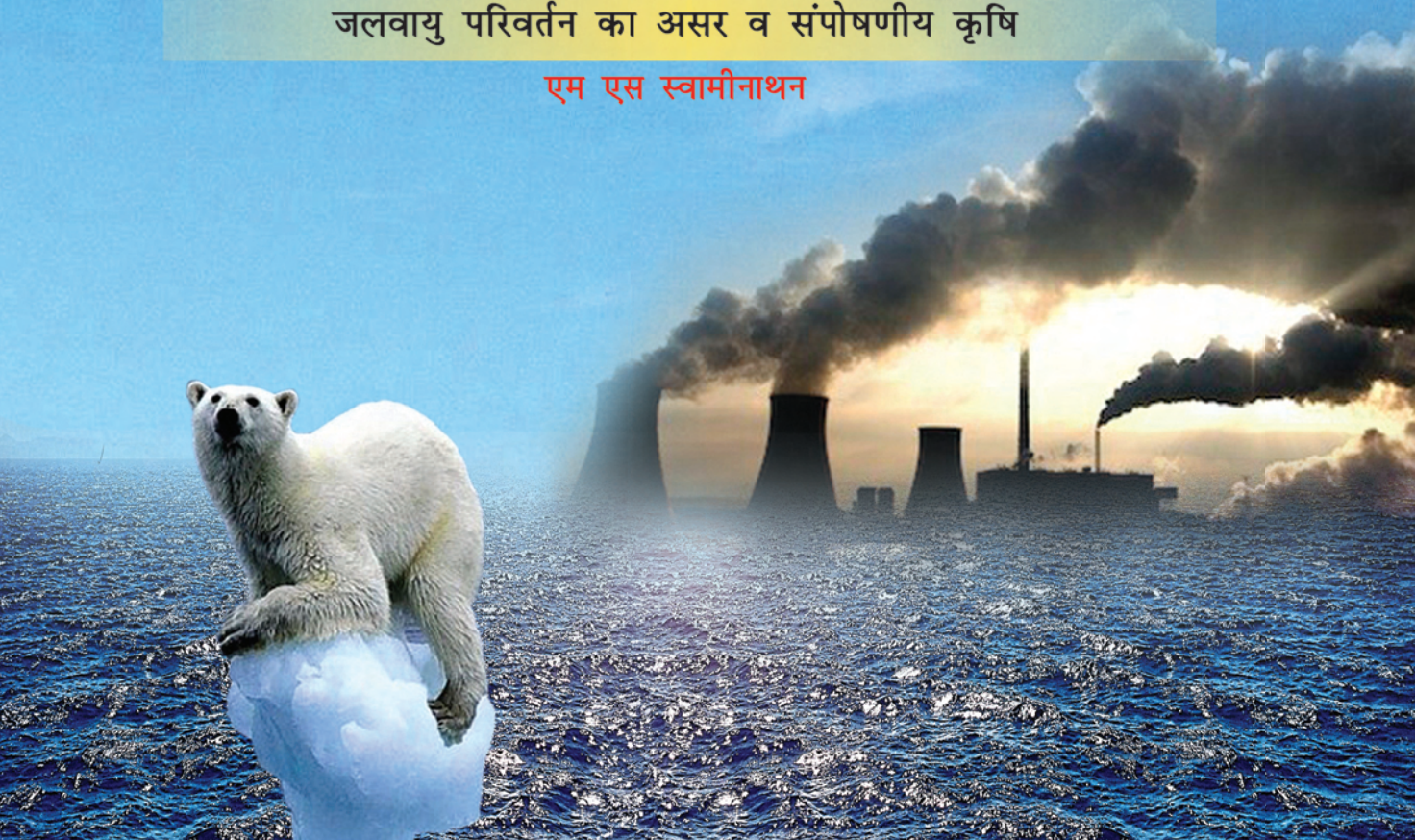

IAS

GS World

PCS

Committed to Excellence

ISO 9001:2008 Certified

राष्ट्रीय/राज्य स्तर की प्रतियोगी परीक्षा, देश के सर्वश्रेष्ठ विशेषज्ञों के मार्गदर्शन में...

Ashok Singh

Manikant Singh

Alok Ranjan

R. Kumar

Guest Faculty

Prof. Pushpesh Pant

Prof. Majid Hussain

Niraj Singh
Managing Director

Abhay Kumar

Deepak Kumar

Rajesh Mishra

Dr. V.K. Trivedi

Divyasen Singh
Co-ordinator

Delhi Centre

सामान्य अध्ययन

नया फाउंडेशन बैच

8 Dec.
11:30 am

WhatsApp No.
9654349902

Allahabad Centre

हिन्दी/Eng. Med.

GS Gateway Batch

Complete prepration for IAS Pre/ PCS

11 Dec.
2 pm

Lucknow Centre

सामान्य अध्ययन नया फाउंडेशन बैच

हिन्दी माध्यम
English Med.

14 Dec.
9 am

दिल्ली, इलाहाबाद, लखनऊ के बाद 'GS World' अब जयपुर में भी...

(For Enquiry Call: 09015457736)

http://www.gsworldias.com http://www.facebook.com/gsworld1

705, 2nd Floor, Main Road, Mukherjee Nagar, Delhi - 9
PH. 011-27658013, 7042772062/63

GS World House, Stainly Road, Near Traffic Choraha, Allahabad
PH. 0532-2266079, 8726027579

A-7, Sector-J, Near Puraniya Chauraha, Aliganj, Lucknow
PH. 0522-4003197, 8756450894

YH-220/15

योजना

वर्ष : 59 • अंक 12 • दिसंबर 2015 • अग्रहायण-पौष, शक संवत 1937 • कुल पृष्ठ : 76

हिंदी, असमिया, बांग्ला, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, तमिल, तेलुगु, मराठी, उड़िया, पंजाबी तथा उर्दू में एक साथ प्रकाशित

प्रधान संपादक: दीपिका कच्छल
संपादक: ऋतेश पाठक
उपसंपादक: भुवनेश
संपादकीय कार्यालय
648, सूचना भवन, सीजीओ परिसर,
लोधी रोड, नयी दिल्ली-110 003
दूरभाष (प्रधान संपादक): 24362971
ईमेल: yojanahindi@gmail.com
वेबसाइट: www.yojana.gov.in
www.publicationsdivision.nic.in
http://www.facebook.com/yojanahindi
संयुक्त निदेशक (उत्पादन): वी.के. मीणा
सहायक निदेशक (प्रसार): पद्म सिंह
(प्रसार एवं विज्ञापन)
ईमेल: pdjucir@gmail.com
आवरण: जी. पी. धोपे

पत्रिका मंगवाने, सदस्यता, नवीकरण, पुराने अंकों की प्राप्ति एवं एजेंसी आदि के लिए मनीऑर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर 'अपर महानिदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवा कर निम्न पते पर भेजें:
सहायक निदेशक (प्रसार एवं विज्ञापन)
प्रकाशन विभाग, कमरा सं. 48-53
भूतल, सूचना भवन, सीजीओ परिसर
लोधी रोड, नई दिल्ली-110003
दूरभाष: 011-24367453
सदस्य बनने अथवा पत्रिका मंगाने के लिए हमारे निम्नलिखित विक्रय केंद्रों पर भी संपर्क किया जा सकता है।

इस अंक में

- **संपादकीय** 7
- जलवायु परिवर्तन और संपोषणीय विकास
  के जी सक्सेना 9
- **फोकस**
  जलवायु परिवर्तन एवं संपोषणीय कृषि
  एम एस स्वामीनाथन 13
- **विशेष आलेख**
  समानता और एक वैश्विक जलवायु समझौता
  टी जयरामन 16
- आर्थिक विकास और जलवायु परिवर्तन की कीमत
  पूर्णमिता दासगुप्ता 21
- जलवायु परिवर्तन, प्रौद्योगिकी एवं संपोषणीय ऊर्जा
  मालती गोयल 25
- वैकल्पिक ऊर्जा, पर्यावरण और विकास
  रवि शंकर 31
- जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और आपदा प्रबंधन
  अनिल कुमार गुप्ता 35
- जलवायु परिवर्तन: संकट में मानवीय स्वास्थ्य
  आशुतोष कुमार सिंह 41
- भारतीय पथ: अतिभोग नहीं, सदुपयोग से बचेगा जीवन
  अरुण तिवारी 45
- पर्यावरण संरक्षण: संवैधानिक दायित्व
  संध्या त्रिपाठी 48
- हरित जीडीपी: संपोषणीय विकास का मार्ग
  उमेश चतुर्वेदी 51
- चुनौतियों के बीच भारत का मजबूत रुख
  अजीत प्रताप सिंह 54
- जलवायु परिवर्तन के कुप्रभावों में कमी: तकनीक की भूमिका
  शशांक द्विवेदी 57
- जलवायु परिवर्तन का मजबूत सामना
  शरद गुप्ता 61
- जलवायु परिवर्तन और जलचक्र पर उसका प्रभाव
  धीप्रज्ञ द्विवेदी 65
- एक और हिमयुग की आहट
  आलोक कुमार 69
- **क्या आप जानते हैं?** 72

प्रकाशन विभाग के विक्रय केंद्र

सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110003 (दूरभाष: 24367260, 5610)
हाल सं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 (दूरभाष: 23890205)
701, सी- विंग, सातवीं मंजिल, केंद्रीय सदन, बेलापुर, नवी मुंबई-400614 (दूरभाष: 27570686)
8, एसप्लानेड ईस्ट, कोलकाता-700069 (दूरभाष: 22488030)
'ए' विंग, राजाजी भवन, बंसल नगर, चेन्नई-600090 (दूरभाष: 24917673)
प्रेस रोड नयी गवर्नमेंट प्रेस के निकट, तिरुअनंतपुरम-695001 (दूरभाष: 2330650)
ब्लॉक सं-4, पहला तल, गृहकल्प, एमजी रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001 (दूरभाष: 24605383)
फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलुरु-560034 (दूरभाष: 25537244)
बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ, पटना-800004 (दूरभाष: 2683407)
हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर-एच, अलीगंज, लखनऊ-226024 (दूरभाष: 2225455)
अंबिका कॉम्प्लेक्स, फर्स्ट फ्लोर, अहमदाबाद-380007 (दूरभाष: 26588669)
के. के. बी. रोड, नयी कॉलोनी, कमान संख्या-7, चेनीकुटी, गुवाहाटी-781003 (दूरभाष: 2665090)

- योजना का लक्ष्य देश के आर्थिक विकास से संबंधित मुद्दों का सरकारी नीतियों के व्यापक संदर्भ में गहराई से विश्लेषण कर इन पर विमर्श के लिए एक जीवंत मंच उपलब्ध कराना है।
- योजना में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। जरूरी नहीं कि ये लेखक भारत सरकार के जिन मंत्रालयों, विभागों अथवा संगठनों से संबद्ध हैं, उनका भी यही दृष्टिकोण हो।
- प्रकाशित विज्ञापनों की विषयवस्तु के लिए योजना उत्तरदायी नहीं हैं।

दरें: वार्षिक: ₹ 100 द्विवार्षिक: ₹ 180, त्रिवार्षिक: ₹ 250, विदेशों में वार्षिक दरें: पड़ोसी देश: ₹ 530, यूरोपीय एवं अन्य देश: ₹ 730

आपकी राय

परिवहन विकास की नब्ज टटोलती ''योजना''

योजना का हर अंक लाज़वाब होता है। विगत डेढ़ दशक से मैं ''योजना'' का सक्रिय पाठक और संग्रहकर्ता रहा हूं। विश्वसनीय जानकारी और तथ्यों का समावेश इस पत्रिका को दूसरी किसी अन्य से बेहतर बनाता है।

विकास के सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक पहलू और समस्याओं पर सटीक समग्र और संतुलित दृष्टिकोण संघ और राज्य स्तरीय लोकसेवा परीक्षा की तैयारी कर रहे प्रतियोगियों को बदलते परिदृश्य में नवाचार और विचारधारात्मक आयाम प्रदान करता है और उनकी लेखन और विश्लेषण की शैली में धार और पैनापन प्रदान करता है। इसी प्रस्तुत अंक (नवंबर 2015) में परिवहन और विकास के संबंधों की जिस बारीकी से जांच पड़ताल की वह काबिल ए तारीफ है।

''भारत में ग्रामीण सड़क परिवहन परिदृश्य'' आलेख में लेखक की केस स्टडी के आंकड़ों और ग्राफिक्स के माध्यम से प्रस्तुति सराहनीय रही।

''आंतरिक जल परिवहन चुनौतियां व संभावनाएं'' अत्यधिक ज्ञानवर्धक रहा और इस क्षेत्र में सीमित जानकारी वाले पाठक वर्ग को जल परिवहन के प्रति निश्चित ही यह आलेख जागरुकता प्रदान करेगा।

देश जहां ''सबका साथ, सबका विकास और सबको न्याय'' के मार्ग पर अग्रसर हो रहा है। समग्र सतत और समावेशी विकास के लिए तय लक्ष्यों को प्राप्त करने में परिवहन क्षेत्र की भूमिका को हमें सर्वोच्चता प्राथमिकता देनी ही होगी।

सतत विकास की अवधारणा को सही मायने में जनमानस तक पहुंचाने और विकास को प्रक्रियागत तात्विक और लोककल्याणकारी स्वरूप को जमीनी हकीकत पर उतारने के लिए हमें अपनी परिवहन तंत्र को सुचारू और मजबूत करना होगा। जो वर्तमान में अपने लक्ष्यों से दूर है। श्री शिशिर सिन्हा का हवाई यात्रा की चुनौतियों पर विश्लेषण और हरित परिवहन और पूर्वोत्तर में परिवहन के आलेख शानदार रहे। सागर माला परियोजना और भारतीय रेल से संबंधित आलेख उल्लेखनीय रहे।

उम्मीद है योजना की पूरी टीम प्रतियोगियों और आम लोगों में ज्ञान का निरंतर संचार करती रहेगी।

भास्कर
गांधी विहार, मुखर्जी नगर, दिल्ली-9
ईमेलः kbhaskar24.ind@gmail.com

''परिवहन विभाग के बढ़ते चरण''

भारत में परिवहन देश की अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण भाग है। लगभग 32,87,240 वर्ग किमी क्षेत्रफल और 121 करोड़ की जनसंख्या वाले भारत में परिवहन एक अनिवार्यता भी है और सुविधा भी। 1990 के आर्थिक उदारीकरणों के बाद से देश में भौतिक आधारभूत ढांचे का बहुत तेजी से विकास हुआ है और आज, देश में थल, जल और वायु परिवहन के अच्छे से विकसित विविध प्रकार के परिवहन साधन उपलब्ध हैं लेकिन, भारत की अपेक्षाकृत निम्न जीडीपी के कारण इन साधनों तक सभी लोगों की पहुंच समान नहीं है। अभी भी केवल 10 प्रतिशत के पास ही मोटरसाइकिलें हैं (लगभग 10,28,73,744)। कारों के स्वामी तो केवल कुछ धनवान लोग ही हैं। 2007 में केवल 0.7 प्रतिशत लोगों के पास ही कारें थी (72,01,163)। सार्वजनिक यातायात अभी भी परिवहन का प्रधान साधन है और भारत का सार्वजनिक परिवहन विश्व का सर्वाधिक उपयोग किया जाने वाला साधन है।

सुधारों के पश्चात भी, परिवहन के बहुत से पहलू अभी भी पुराने पड़ चुके आधारभूत ढांचे और निरंतर बढ़ती जनसंख्या के कारण जूझ रहे हैं। अभी भी ट्रक द्वारा गुड़गांव से मुंबई के बंदरगाह तक सामान लाने-ले जाने में 10 दिन का समय लग जाता है। राज्यीय सीमाओं पर घूसखोरी और कर आम बात है और ट्रांस्पेरेंसी इंटरनेशनल एक के अनुमानानुसार ट्रक वाले वार्षिक 5 अरब डॉलर की घूस देते हैं। यद्यपि भारत के पास विश्व परिवहन का केवल 1

प्रतिशत ही है लेकिन यहां होने वाली यातायात दुर्घटनाएं विश्व का 8 प्रतिशत हैं। भारत के नगर बहुत ही संकुचित हैं: बहुत से महानगरों में बस की औसत गति केवल 6-10 किमी/घंटा है। भारत का रेल तंत्र विश्व का सबसे बड़ा है और विश्व का चौथा सर्वाधिक उपयोग में लाया जाने वाला। भारत के बढ़ते अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के कारण देश के बंदरगाहों पर दबाव बढ़ रहा है। परिवहन ढांचे और सेवाओं की मांग प्रतिवर्ष 10 प्रतिशत की दर से बढ़ रही है। कुल मिलाकर, भारत में परिवहन तंत्र पुरानी पड़ चुकी तकनीकों, अक्षम प्रबंधन, भ्रष्टाचार, आवश्यकता से अधिक कर्मचारियों और निम्न कर्मी उत्पादकता के कारण भुगत रहा है।

प्रदीप शर्मा
एम.एड, गोरखपुर, उ.प्र.
ईमेल: pradeepsharma796@gmail.com

घटते वन क्षेत्र, बढ़ती मुसीबतें

ब्रिटिश दैनिक 'द गार्डियन' में प्रकाशित एक रिपोर्ट में मौसम विभाग ने कहा है कि वर्ष 2016 में गर्मी के अब तक के सारे रिकॉर्ड टूट जाएंगे। मौजूदा समय में ही सौरमंडल के इस अद्वितीय ग्रह पर जलवायु की जो चिंतनीय स्थिति है, वह उक्त रिपोर्ट पर मुहर लगाने को काफी है। जलवायु परिवर्तन पर आज अंतर्राष्ट्रीय जगत चिंतित है। प्रतिवर्ष वैश्विक स्तर पर नाना प्रकार के सभा-सम्मेलन के आयोजन के बावजूद पर्यावरण संरक्षण की दिशा में हम कच्छप गति से ही आगे बढ़ रहे हैं, जो चिंता का विषय है। हालांकि हम प्रतिवर्ष पर्यावरण दिवस जरूर मनाते हैं, उस दिन जब विश्व के हर कोने से पर्यावरण संरक्षण को लेकर आवाजें बुलंद होती हैं। नारे गूंजते हैं और पौधे भी लगाए जाते हैं। इतना ही नहीं नाना प्रकार से अपने को पर्यावरण संरक्षक दिखाने की लोगों में होड़ लगी होती है लेकिन दुर्भाग्य से सिर्फ एक दिन। दूसरे दिन लगाए गए पौधे मरेंगे या बचेंगे, देखने वाला कोई नहीं। ऐसे दिवसों का ढकोसला बंद होना चाहिए। क्यों हम पर्यावरण संरक्षण से संबद्ध इन दिवसों को मात्र कर्मकांड की तरह मानकर अपने कर्तव्यों की इतिश्री समझ लेते हैं?

पर्यावरण हमारे दैनिक जीवन को प्रत्यक्ष तौर पर प्रभावित करता है। अत: इसके संरक्षण के लिए पल-पल सचेत रहने की जरूरत है लेकिन ऐसा हो नहीं पाता। हमारा देश वन-संपदा और जैव-विविधता के मामले में आदिकाल से ही संपन्न रहा है लेकिन समय बीतने के साथ-साथ औद्योगिक विकास की चाह (आवश्यकता) ने पेड़-पौधों को वृहत् पैमाने पर क्षति पहुंचाई है। परिणामस्वरूप कई फलदार और औषधीय पौधे आज केवल किस्सों-कहानियों तक ही सीमित रह गए। वनों के ह्रास की प्रक्रिया पर्यावरण को सीधे तौर पर प्रभावित करती है, बावजूद इसके भारत सहित दुनिया के अधिकांश देशों के वन क्षेत्रों में तेजी से कमी आ रही है। राष्ट्रीय वन नीति के मुताबिक हमारे देश में 33 फीसदी वन की उपलब्धता पर्यावरण के लिए अनुकूल होती है जबकि हमारे यहां केवल 23 फीसदी वन शेष बचे हैं। कितनी विचित्र बात है कि वनों की गोद में पल्लवित व पुष्पित सभ्यता में आज वन ही उपेक्षित हो गए। वन के साथ हमारा अस्तित्व जुड़ा है, बावजूद इसके हम बेफिक्र हैं। दुर्भाग्य यह है कि पर्यावरण संरक्षण की दिशा में काम करने की बजाए अपने क्रियाओं से प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण को नुकसान पहुंचा रहे हैं। औद्योगिक विकास और मानवीय स्वार्थों की पूर्ति को प्रतिदिन लाखों पेड़-पौधों का गला घोंटा जा रहा है। कुछ वर्ष पहले पेड़ों की संख्या अधिक थी तो समय पर बारिश होती थी और गर्मी भी कम लगती थी लेकिन जैसे-जैसे समय बीतता जा रहा है, पानी तरसा रहा है और गर्मी झुलसा रही है। औद्योगिक कूड़ा, कचरा, सभी प्रकार के प्रदूषण, कार्बन उत्सर्जन, ग्रीनहाऊस प्रभाव और ग्लोबल वार्मिंग से पूरा पर्यावरण दूषित हो गया है।

संयुक्त राष्ट्र की जीएफआरए (ग्लोबल फॉरेस्ट रिसोर्स असेसमेंट) 2015 रिपोर्ट में यह पता चला कि वर्ष 1990 और 2015 के बीच कुल वनक्षेत्र में तीन प्रतिशत की कमी आई है। बढ़ती आबादी और उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति के चक्कर में निर्दोष पेड़-पौधों की बलि चढ़ाई जा रही है। इसी का नतीजा है कि पर्यावरणीय चक्र बिल्कुल विच्छेद हो गया है। बढ़ते वैश्विक ऊष्मण के कारण आसमान से आग बरस रही है। मानसून की अनियमितता से देश में आंशिक सूखे की स्थिति उत्पन्न हो गई है। असमय दस्तक दे रही इस आपदा का नकारात्मक असर कृषिगत उत्पादन व जनसंख्या के एक बड़े हिस्से पर पड़ना निश्चित है। दूसरी तरफ, हमारी संवेदनहीनता की यह हद है कि हमने पृथ्वी को तो दूषित कर दिया। अब इसे स्वच्छ बनाने की बजाए मंगल जैसी अन्य ग्रहों पर जीवन खोजने को लालायित हैं। मनुष्यों की हठधर्मिता ने संपूर्ण पर्यावरणीय चक्र को पलट कर रख दिया है। नतीजतन न समय पर बारिश होती है और ना ही गर्मी और सर्दी ही आती है।

सच तो यह है कि औद्योगिक विकास की बदलती परिभाषा मानव सभ्यता के अंत का अध्याय लिख रही है लेकिन बेफिक्री के रथ पर सवार होकर हम अंधाधुंध विकास का गुणगान कर रहे हैं। ऐसे में व्यक्तिगत व पारिवारिक स्तर पर पौधे लगाने की प्रक्रिया शुरू करनी होगी तभी जाकर जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियां मानव जाति के अनुकूल होंगी। मनुष्यों की बुद्धि जड़ हो चुकी है। हमारे पूर्वजों ने हमें कितना शुद्ध और स्वच्छ वातावरण दिया था। क्या हम आगे आने वाली पीढ़ियों को उसे स्थानांतरित कर पाएंगे? शायद नहीं। जरूरी यह है कि हम व्यक्तिगत स्तर पर पौधारोपण में बल दें और उसकी यथासंभव सुरक्षा करें। यह भविष्य के लिए आवश्यक है।

सुधीर कुमार
गोड्डा, झारखंड
ईमेल: sudhir@jnv@yahoo.com

लगातार निखरती योजना

योजना टीम को ढेर सारी शुभकामनाएं प्रेषित कर रही हूं और आशा करती हूं कि आप लोग इसी तरह प्रत्येक अंक में नई-नई जानकारियों से हमें लाभान्वित कीजिए।

योजना की नियमित पाठक हूं। योजना के अंक लगातार बेहतरीन होते जा रहे हैं। कौशल-विकास पर आधारित अक्तूबर-2015 के अंक ने हमारे जैसे युवा के मन में उत्साह का संचार किया है। सच में यदि हम खुद व्यवसायिक कौशल के साथ जोड़ लें, तो हमारा जीवन खुशहाल हो जाए। इतना ही नहीं मेरा मानना तो यह है कि यदि हम अपने दैनिक जरूरतों से जुड़े काम को सीख लें तो एक तरफ तो हमें आर्थिक रूप से फायदा होगा, वहीं दूसरी तरफ दूसरे पर हमारी निर्भरता भी कम होगी। इससे हम अपने समय की भी बचत कर सकते हैं। पिछले कुछ अंकों से योजना (हिंदी) का कलेवर बदला-बदला सा नज़र आ रहा है। योजना का साज-सज्जा बेहतर हुआ है।

रिंपी कुमारी
कालिंदी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

दृष्टि The Vision

Most trusted & renowned institute among IAS aspirants

हिंदी माध्यम के IAS/PCS टॉपर्स क्या कहते हैं 'दृष्टि करेंट अफेयर्स टुडे' पत्रिका के बारे में...

निशांत जैन (IAS - राजस्थान कैडर)

'दृष्टि करेंट अफेयर्स टुडे' स्वयं में एक अनूठी और बहुआयामी पत्रिका है। इसका सभी विद्यार्थियों के लिये उपलब्ध होना प्रतियोगिता जगत की एक बड़ी ज़रूरत पूरी करता है। मैंने खुद इस पत्रिका का लाभ उठाया है।

सिविल सेवा परीक्षा पर ही पूरी तरह केन्द्रित यह पत्रिका कई मायनों में विशिष्ट है। इंटरव्यू खंड, निबंध खंड, एथिक्स आदि पर विशेष ध्यान देना इस पत्रिका को बाकी पत्रिकाओं से अलग बनाता है। समसामयिक घटनाओं का सिविल सेवा परीक्षा के नज़रिये से विश्लेषण और फिर उनकी बिन्दुवार प्रस्तुति बेहद उपयोगी और प्रासंगिक है।

'दृष्टि करेंट अफेयर्स टुडे' आपकी सफलता में सार्थक भूमिका निभाएगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

राजेन्द्र पेंसिया (IAS - उत्तर प्रदेश कैडर)

हिंदी माध्यम के अभ्यर्थियों के सामने सबसे बड़ी समस्या यह है कि पत्रिका कौन सी पढ़ी जाए? इसके लिये सबसे अच्छा, श्रेष्ठ, प्रामाणिक और सारगर्भित स्रोत 'दृष्टि करेंट अफेयर्स टुडे' के माध्यम से मिलता है। इंटीग्रेटेड एप्रोच से तैयारी के लिये हिंदी माध्यम में ऐसी किसी पत्रिका का अभाव था जो प्रिलिम्स, मुख्य परीक्षा और साक्षात्कार की ज़रूरतों को पूरा कर सके। विकास सर के मार्गदर्शन में यह पत्रिका निश्चित ही इन सभी मानकों पर खरी उतरती है। हिंदी माध्यम के अभ्यर्थी गूगल ट्रांसलेटेड मैटीरियल पढ़ने की बजाय यह पत्रिका पढ़ें जो पूर्णतः मौलिक व अनुभवी टीम की मेहनत का परिणाम है। मुझे विश्वास है कि यह पत्रिका उनके लिये निश्चित रूप से वरदान साबित होगी। शुभकामनाएँ।

आई.ए.एस., पी.सी.एस. तथा अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी को समर्पित पत्रिका

वर्ष 1 | अंक 6 | दिसंबर 2015

दृष्टि The Vision

करेंट अफेयर्स टुडे

महत्त्वपूर्ण लेख

- न्यायिक नियुक्ति आयोग : न्यायपालिका और कार्यपालिका फिर आमने-सामने
- जापान की रक्षा नीति और एशिया-प्रशांत क्षेत्र में बढ़ता शक्ति-संतुलन
- क्या मीडिया ट्रायल पर कानून बनाने का समय आ गया है?
- भारत-जर्मनी संबंधों के फलक का विस्तार ज़रूरी
- वायदा बाज़ार आयोग का सेबी में विलय
- ट्रांस-पैसिफ़िक पार्टनरशिप और भारत के लिये अवसर
- देश में बढ़ती नवाचार की कमी
- शांति का नोबेल पुरस्कार
- देशज लोगों के अधिकारों के प्रति जागरुक मिज़ोरम

रणनीतिक आलेख

- मुख्य परीक्षा 2015 : बचे हुए समय के लिये ज़रूरी टिप्स
- सिविल सेवा परीक्षा (2016) की तैयारी को कैसे बनाएँ आसान?

टॉपर्स से बातचीत

- गरिमा तिवारी- सिविल सेवा में उच्च स्थान पर चयनित
- बृजेश कुमार त्रिपाठी - तृतीय स्थान, उत्तर प्रदेश पी.सी.एस.

एथिक्स विशेषांक

- संपूर्ण पाठ्यक्रम पर अचूक सामग्री
- केस स्टडीज़ को हल करने के प्रभावी तरीके
- लगभग 50 केस स्टडीज़ एवं उनका समाधान
- वाद-विवाद : भारत में अनिवार्य मतदान उचित है या नहीं?

₹ 100

और भी बहुत कुछ....

मनीष कुमार (IPS)

यह पत्रिका (दृष्टि करेंट अफेयर्स टुडे) हिन्दी माध्यम में उपलब्ध पाठ्य सामग्री की कमी को पूरा करने की एक गंभीर कोशिश है। इसके सभी खंडों का व्यवस्थित अध्ययन तैयारी को संपूर्णता प्रदान करता है। पत्रिका के 'समसामयिक मुद्दों पर संभावित प्रश्नोत्तर' खंड से मुझे मुख्य परीक्षा की तैयारी में विशेष मदद मिली थी।

प्रदीप कुमार (IRS)

'दृष्टि करेंट अफेयर्स टुडे' एक मानक पत्रिका है। पिछले दो अंकों में तो इसने 'गागर में सागर' भर दिया है। वस्तुतः बाज़ार में उपलब्ध स्तरहीन सामग्री ने अभ्यर्थियों को दिशा-भ्रमित ही किया है। ऐसे में 'दृष्टि करेंट अफेयर्स टुडे' ने विद्यार्थियों की राह आसान कर दी है।

अंकित तिवारी (IRS IT)

'दृष्टि करेंट अफेयर्स टुडे' एक सारगर्भित एवं विविध आयामी पत्रिका है जो सिविल सेवा परीक्षा के तीनों चरणों- प्रिलिम्स, मुख्य परीक्षा एवं साक्षात्कार के लिये आवश्यक पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराती है। हिंदी माध्यम के अभ्यर्थियों के लिये सबसे बड़ी चुनौती समसामयिक मुद्दों पर प्रामाणिक कंटेंट की उपलब्धता की थी परंतु 'दृष्टि करेंट अफेयर्स टुडे' ने इस चुनौती को स्वीकारते हुए उत्कृष्ट एवं प्रामाणिक अध्ययन सामग्री उपलब्ध कराई है, जो सिविल सेवा अभ्यर्थियों के लिये वरदान साबित हो रही है। समसामयिक मुद्दों पर 'प्रश्नोत्तर खण्ड' तो मुख्य परीक्षा की तैयारी हेतु विशेष रूप से उपयोगी है। विकास सर का सम्पादकीय लेख अभ्यर्थियों को निरंतर प्रोत्साहित करता रहता है।

जय प्रकाश (IRTS)

विद्यार्थियों के समक्ष उच्च स्तर की पाठ्य सामग्री का सदैव अभाव रहा है जिसके कारण हिंदी भाषी छात्र हीन भावना का शिकार रहते हैं। यह पत्रिका (दृष्टि करेंट अफेयर्स टुडे) इस मानक पर खरी उतरती है। इसमें परीक्षा के अनुरूप बहुआयामी समसामयिक खंडों को विश्लेषित करने तथा रोचक ढंग से प्रस्तुत करने की क्षमता है। खास तौर पर निबंध, एथिक्स और इंटरव्यू के लिये किया गया प्रयास इसे अन्य पत्रिकाओं से बेहतर बनाता है जो अवश्य ही विद्यार्थियों की सफलता में निर्णायक सिद्ध होगा। मैं दृष्टि परिवार की अनुकरणीय पहल का आभार व्यक्त करता हूँ।

विवेक यादव (UPPCS, I-Rank)

राज्य व संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं की दृष्टि से यह पत्रिका मुझे बहुत उपयोगी लगी। यह पत्रिका समसामयिक घटनाचक्र के विषयों में आपकी समझ बढ़ाने के साथ ही साथ उस विषय पर बहुआयामी दृष्टिकोण का सृजन करती है। इस पत्रिका का निबंध व मॉक इंटरव्यू खण्ड तमाम डाउट्स को क्लियर करने में सहायक है।

आदित्य प्रजापति (UPPCS, II-Rank)

मुख्य व प्रारंभिक परीक्षा के दृष्टिकोण से यह पत्रिका मुझे बहुत उपयोगी लगी। पत्रिका के लेख, निबंध व एथिक्स खण्ड परीक्षार्थियों के लिये निश्चित रूप से बहुत लाभदायक सिद्ध होंगे।

641, Ist Floor, Dr. Mukherji Nagar, Delhi-9 Ph.: 011-47532596, (+91)8130392354,56,57,59
E-mail:info@drishtiias.com, drishtiacademy@gmail.com * Website: www.drishtiias.com

YH-216/2015

संपादकीय

धरती मां की रक्षा

कहा जाता है कि ''धरती मानव की नहीं होती बल्कि मानव धरती का होता है।'' किंतु मानव जाति ने बिना हिचके हुए सदैव अपने लाभ के लिए धरती पर नियंत्रण करने एवं उसका शोषण करने का प्रयास किया है।

एक हालिया रिपोर्ट के अनुसार 2015 में ''अर्थ ओवरशूट डे''– वह दिन, जब प्राकृतिक संसाधनों की वैश्विक मांग पृथ्वी के पारिस्थितिक तंत्र द्वारा एक वर्ष में तैयार किए जा सकने वाले संसाधनों की मात्रा से भी अधिक हो जाती है– 2014 की अपेक्षा 6 दिन पहले आ गया है। बताया गया कि पिछले 15 वर्ष में अर्थ ओवरशूट डे कैलेंडर में लगातार आगे खिसकता रहा है, 2000 में यह 1 अक्टूबर को था, पिछले वर्ष 19 अगस्त को पड़ा और इस वर्ष 13 अगस्त को ही आ गया। इसका अर्थ है कि 2015 के लिए निर्धारित पारिस्थितिक संसाधनों को हम पहले ही खर्च कर चुके हैं।

बढ़ती वैश्विक जनसंख्या और अपने जीवन स्तर के उन्नयन की मनुष्य की लगातार बढ़ती आकांक्षा के कारण सभी प्रकार के नए तकनीकी आविष्कार हुए हैं। इन आविष्कारों और नवाचारों ने जीवन को अधिक आरामदेह बना दिया है किंतु इसके बदले भोजन, वायु, जल, खनिज और ऊर्जा की मांग बढ़ गई है। किंतु नवीकरण की पृथ्वी की क्षमता सीमित होने के कारण ये संसाधन भी सीमित हैं। हमारे चारों ओर प्राकृतिक संसाधनों के त्वरित क्षरण ने वैश्विक जलवायु में अभूतपूर्व परिवर्तन किए है, जिनके परिणामस्वरूप पृथ्वी पर मानव और प्राणी जातियों के अस्तित्व पर गंभीर प्रभाव पड़े हैं। जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूल नहीं हो पाने के कारण डायनोसॉर के विलुप्त होने की बात सभी जानते हैं। डर है कि पृथ्वी की एक चौथाई प्रजातियां 2050 तक विलुप्त हो सकती हैं।

प्राकृतिक, मशीनी एवं नृवैज्ञानिक प्रक्रियाओं जैसे कार्बन डाई ऑक्साइड, मीथेन आदि ग्रीनहाउस गैसों के कारण पृथ्वी की जलवायु में हुए दीर्घकालिक परिवर्तनों को जलवायु परिवर्तन कहा जाता है। ये गैस वायुमंडलीय क्षेत्र में जमा हो जाती हैं और गर्मी को वातावरण में ही रोके रखती हैं, जिससे ग्लोबल वार्मिंग होती है और जलवायु में परिवर्तन होता है। ऋतु परिवर्तन, वैश्विक तापमान में वृद्धि, समुद्र के स्तर में बढ़ोतरी, फसल चक्र में बदलाव के कारण न केवल हमारे बल्कि हमारे बच्चों और उनके बच्चों के लिए भी भूस्खलन, सुनामी, अकाल, महामारी, जन पलायन तथा स्वास्थ्य के लिए बड़ी आपदाएं हैं।

इस समय ऐसे संपोषणीय समाधान विचारने की आवश्यकता है, जो अस्थाई न हों बल्कि उनमें भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं का ध्यान रखा गया हो। यह भी समझना होगा कि प्राकृतिक संसाधन असीमित नहीं होते, इसीलिए उनका उपभोग तर्कसंगत होना चाहिए और उसकी योजना सतत विकास सुनिश्चित करने के दृष्टिकोण से बनाई जानी चाहिए। बिजली बनाने के लिए विंड फार्म, पनबिजली, सौर ऊर्जा, भूतापीय तथा बायोमास जैसे प्रकृति के अनुकूल विकल्प तलाशे जाने तथा उन्हें समुचित रूप से क्रियान्वित किए जाने की आवश्यकता है।

मानवता को जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से बचाने की दिशा में कार्य करने का दायित्व किसी एक राष्ट्र का नहीं बल्कि पूरे विश्व का है। रियो में 1992 में संयुक्त राष्ट्र प्रारूप संधि (यूएनएफसीसीसी) को औपचारिक रूप दिए जाने के साथ ही इस दिशा में गंभीर वैश्विक प्रयास आरंभ हुए। दिसंबर 2015 में पेरिस में संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन के 21वें सत्र में देश अपने वांछित राष्ट्रीय संकल्पित योगदान (आईएनडीसी) प्रस्तुत करेंगे। भारत पहले ही अपना आईएनडीसी बता चुका है, जिसका लक्ष्य स्वच्छ एवं अक्षय ऊर्जा को प्रोत्साहित कर, गैर-जीवाश्म ईंधन स्रोतों को प्रयोग कर, 2.5 से 3 अरब कार्बन डाईऑक्साइड के समतुल्य अतिरिक्त कार्बन सिंक तैयार करने के लिए वन का विस्तार बढ़ाकर, कार्बन कम उत्पन्न करने वाले एवं लचीले शहरी केंद्र विकसित कर, कचरे का प्रयोग करने वाले, सुरक्षित, कुशल एवं टिकाऊ हरित परिवहन नेटवर्क को बढ़ावा देकर ग्रीन हाऊस गैस उत्सर्जन की तीव्रता में 33 से 35 प्रतिशत तक कमी करना है। उसने विकासशील देशों से अतिरिक्त धन एकत्र करने एवं अत्याधुनिक प्रौद्योगिकियों के प्रसार एवं उनसे संबंधित सामूहिक अनुसंधान तथा विकास हेतु अंतर्राष्ट्रीय ढांचा तैयार करने का भी संकल्प व्यक्त किया है। इस आईएनडीसी के माध्यम से भारत ने जलवायु परिवर्तन से जूझने एवं ''समस्या का भाग नहीं होते हुए भी समाधान का भाग होने'' का अपना संकल्प प्रदर्शित किया है।

गांधी जी ने कहा था, ''धरती सभी की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त संसाधन हैं, उनके लालच के लिए नहीं।'' भविष्य की रक्षा करने एवं हमारी भावी पीढ़ियों को पृथ्वी की विरासत सौंपने के लिए पूरा विश्व एक साथ आ रहा है, इसलिए हम ऐसी दुनिया बनाने की आशा कर सकते हैं, जहां हम हर किसी की आवश्यकता के लिए संसाधन तैयार कर सकें। ❑

DISCOVERY®

...Discover your mettle

(THE IAS ACADEMY)

सामान्य अध्ययन

(फाउन्डेशन बैच 2016)

नया बैच प्रारंभ- 1 दिसम्बर 6:30 pm

अपने विषय क्षेत्र के सर्वश्रेष्ठ विशेषज्ञों की टीम....

सी.बी.पी. श्रीवास्तव	आलोक रंजन	रामेश्वर	उपेन्द्र अनमोल
दिवाकर गुप्ता	करूणेश चौधरी	पी.के. मिश्रा	गौतम आनन्द

मुख्य विशेषताऐं

- निश्चित समयावधि में संपूर्ण पाठ्यक्रम का समापन।
- नये पाठ्यक्रम के अनुरूप प्रत्येक टॉपिक का अद्यतन नोट्स।
- मुख्य तथा प्रारम्भिक परीक्षा की पृथक कक्षाएँ।
- प्रत्येक टॉपिक के लिए उत्तर फॉर्मेट की उपलब्धता।
- लेखन-क्षमता के विकास हेतु फाईल मेनटेनेंस सिस्टम।
- समसामयिक मुद्दों हेतु मासिक "करेंट कैप्सूल" की उपलब्धता।
- प्रारंभिक परीक्षा हेतु NCERT आधारित क्लास टेस्ट के साथ प्री टेस्ट सीरीज।
- मुख्य परीक्षा हेतु यूनिट टेस्ट व मेन्स टेस्ट सीरीज की व्यवस्था।
- कुशल एवं जबावदेह प्रबन्धन।

हमारी शाखाएं:- इन शाखाओं पर IAS एवं PCS की कक्षाएं उपलब्ध- 7 दिसम्बर

इलाहाबाद	जयपुर	इंदौर	पटना	गोरखपुर
9721174333	08890444203	9589033300	9308544441	7238939181

रायपुर - बिलासपुर - झाँसी - चंडीगढ़ - बैंगलुरू - राँची - ग्वालियर

For details call - Toll Free No. 1800-833-0020

Head Office :– B-14 (Basement), Com. Comp. Dr. Mukherjee Nagar Delhi-9, **Ph.: 0113290605O, 47076055, 9313058532**

Visit us: www.discoveryiasacademy.in, email: discoveryiasacademy@gmail.com discoveryiasacademy

YH-217/2015

जलवायु परिवर्तन और संपोषणीय विकास

के जी सक्सेना

जलवायु परिवर्तन संपोषणीय विकास के विविध आयामों में से एक है। सभी की इच्छा है कि जलवायु परिवर्तन को कम करके संपोषणीय विकास को प्राप्त किया जाए लेकिन इसके लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए समाधान पर विचारों में भिन्नता है। इसके अलावा वैश्विक स्वीकार्य समाधान तैयार करने के लिए ज्ञान की कमी है और उनके कार्यान्वयन के लिए संसाधनों की भी कमी हैं। वैश्विक साझेदारी का लक्ष्य सभी को लाभ पहुंचाने के लिए सहयोग के अवसरों का लाभ उठाने के लिए जमीनी कार्य करना है

विकास मानव को अपनी क्षमताओं की पहचान या उनमें वृद्धि कराने वाली और बेहतर जीवनशैली प्राप्त करने के लिए सक्षम बनाने वाली अनवरत प्रक्रिया है। प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग से मानव जीवन का भरण पोषण होता आया है लेकिन प्रकृति की पुनरुत्पादन क्षमता सीमित है। पिछली दो शताब्दियों में मानव जनसंख्या के फैलाव, प्राकृतिक संसाधनों की प्रति व्यक्ति मांग में वृद्धि और प्राकृतिक पर्यावरण में मानव आविष्कृत नए रसायनों (प्लास्टिक और कीटनाशक रसायन) के उपयोग के परिणामस्वरूप वैश्विक पर्यावरण और मानव जाति पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। संपोषणीय विकास की धारणा 1980 के दशक में उस समय उभरकर आई जब कुछ क्षेत्रों में बेहतरी महसूस की गई (उदाहरण के लिए वातानुकूलित प्रौद्योगिकी, हरित क्रांति की तकनीकों से खाद्यान्न उत्पादन में द्रीव वृद्धि और तीव्र आर्थिक वृद्धि) प्राप्त की गई लेकिन इसके बदले जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता की हानि, जल संसाधनों एवं मृदा अवमूल्यन जैसी नई समस्याएं उत्पन्न हुई। साथ ही पहले से उपस्थित समस्याओं जैसे अपरिहार्य विकास, मानव के लिए आवश्यक उत्पादनों में प्राकृतिक अवरोध और भूकंप ने और अधिक भयानक स्वरूप धारण कर लिया। पर्यावरणीय विज्ञान में प्रगति ने इस बात को प्रमाणित कर दिया है कि मानवीय गड़बड़ियों से उभर पाने की प्राकृतिक पर्यावरण की क्षमता सीमित है। सामाजिक विज्ञान ने न्यायसंगत आर्थिक विकास के महत्व की ओर ध्यान आकर्षित किया। ज्ञान में प्रगति ने विकास को अंतर्विषयक दृष्टिकोण के मार्ग पर आगे बढ़ाया। पर्यावरण, आर्थिक और सामाजिक समस्याओं और संभावनाओं को स्थानिक (स्थानीय से वैश्विक) और कालिक (अल्पकालीन से दीर्घकालीन) पैमाने पर एक साथ देखना संपोषणीय विकास की आधारशिला बना। विभिन्न रूपों में परिभाषित, पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग ने संपोषणीय विकास की व्याख्या एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में की है जो भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकता पूर्ति की क्षमताओं से कोई समझौता किए बिना वर्तमान पीढी की आवश्यकताओं की पूर्ति करे। वर्ष 1992 में रियो में आयोजित संयुक्त राष्ट्र के पर्यावरण और विकास सम्मेलन (पृथ्वी सम्मेलन) में बरूंडटलैंड आयोग को व्यापक रूप से स्वीकार कर इसकी सराहना की गई।

जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र के रूपरेखा समझौते (यूएनएफसीसीसी) और जैव विविधता समझौते (सीबीडी) को औपचारिक रूप देने, जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता की क्षति से बढ़ते अपोषणीयता के खतरों से मानवता की रक्षा की वैश्विक रणनीति बनाई गई और नए वैश्विक पर्यावरण-विकास निधिकरण प्रक्रियाएं जैसे वैश्विक पर्यावरणीय सुविधा (जीईएफ) की स्थापना की गई। चूंकि जलवायु परिवर्तन जैवभौतिक पर्यावरण (वातावरण संरचना और भूमि उपयोग) में परिवर्तन, भूमि की उर्वरकता खत्म होना और जैविक हमले और आर्थिक-सामाजिक-राजनीतिक पर्यावरण (जैसे वैश्वीकरण, मुक्त व्यापार, संस्कृतिग्राह्यता, नव बौद्धिक संपत्ति साम्राज्यों और द्विपक्षीय/बहुपक्षीय सहयोग/गठबंधन) में अन्य परिवर्तनों से के साथ गड़बड़ियां करता है। संपोषणीय विकास दृष्टिकोण बहुसमस्याओं

लेखक जवाहरलाल नेहरू विश्व विद्यालय में प्राध्यापक तथा राष्ट्रीय कृषि विज्ञान अकादमी, लीडरशिप इन इनवॉयरनमेंट एंड डेवलपमेंट और राष्ट्रीय पारिस्थितिकी संस्थान आदि में फेलो हैं। पारिस्थिकी व सतत विकास उनकी पसंद के शोध विषय हैं। ईमेल: kgsaxena@mail.jnu.ac.in; kgsaxena@gmail.com

के एक साथ समाधान के लिए इस क्षेत्र के महत्व को समझता है। वर्ष 2002 में संपोषणीय विकास पर संयुक्त राष्ट्र के जोहनसबर्ग सम्मेलन और संपोषणीय विकास के मूल, सामाजिक स्वीकार्य विकास, आर्थिक रूप से जीवनक्षम और पर्यावरणीय युक्तियुक्त मानव संसाधनों एवं आर्थिक संसाधनों में बहुत बड़े परिवर्तन से संपोषणीय विकास धारणा की वैश्विक स्वीकार्यता और अधिक सुदृढ़ हुई हैं।

चूंकि वातावरण में कार्बन डाइऑक्साइड की सघनता बढ़ना जलवायु परिवर्तन का प्रमुख कारण है, इसलिए इस गैस के उत्सर्जन में कमी और वातावरण से इसके पृथक्करण जलवायु परिवर्तन के खतरों को कम करने की प्रमुख आवश्यकताएं हैं। वर्तमान जलवायु परिवर्तन प्रवृतियों की अवस्थिति भविष्य में जैवविविधता संरक्षण के लिए खतरा है। तथापि जैव विविधता विशेषकर जंगल और वृक्ष आधारित जैविक कृषि जलवायु परिवर्तन के खतरे को कम कर सकती है और इस चुनौती से निपटने के लिए मानव क्षमता को बढ़ा सकती है। *जैव विविधता और पर्यावरण सेवाओं का अंतर्राष्ट्रीय मंच* (आईपीबीईएस) और विकासशील देशों में वन कटाई एवं वन निम्नीकरण से उत्सर्जन की कमी की संयुक्त राष्ट्र की योजना (यूएन-आरईडीडी) इस दशक की दो बड़ी अंतर्राष्ट्रीय पहलें हैं। जिनका लक्ष्य वैश्विक जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों और विकासशील देशों में मानव कल्याण की कमजोर स्थिति से निपटने के लिए जैव विविधता प्रबंधन करना है।

वातावरण में कार्बन डाइऑक्साइड की सघनता बढ़ना जलवायु परिवर्तन का प्रमुख कारण है, इसलिए इस गैस के उत्सर्जन में कमी और वातावरण से इसके पृथक्करण जलवायु परिवर्तन के खतरों को कम करने की प्रमुख आवश्यकताएं हैं। वर्तमान जलवायु परिवर्तन प्रवृतियों की अवस्थिति भविष्य में जैवविविधता संरक्षण के लिए खतरा है। तथापि जैव विविधता विशेषकर जंगल और वृक्ष आधारित जैविक कृषि जलवायु परिवर्तन के खतरे को कम कर सकती है।

हाल की समय में भूमंडलीय ताप की अभूतपूर्व दर निश्चित की गई है। भूमंडलीय ताप की दरों के आकलन में भारी भिन्नताएं हैं। वैश्विक पैमाने पर 21वीं शताब्दी के दौरान भूमंडलीय ताप की दरों का प्रक्षेपण 1.0 से 5.8 डिग्री सेल्सियस तक और भारत में 0.4 से 2.0 डिग्री सेल्सियस तक भिन्न है। भविष्य में इसी तरह अवक्षेपण में भी उच्च अनिश्चितता है, विशेषकर सूखे और बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं के संबंध में। वैश्विक परिदृश्य में जलवायु परिवर्तन के आकलन में उच्च श्रेणी की अनिश्चितता, परिवर्तन विश्लेषण के स्थानिक/कालिक पैमाने में विभिन्नता, कारकों के वैज्ञानिक ज्ञान में अंतर और भूत/भविष्य जलवायु अनुमानों के बहुत से उपकरणों/तकनीकों एवं जलवायु का निर्धारण करने वाली प्रतिक्रियाओं का मिला-जुला परिणाम है। फिर भी सभी वैज्ञानिक अध्ययन जलवायु परिवर्तन की अनिवार्यता और एक साथ मिलकर इन परिवर्तनों को अनुकूल बनाने एवं इनके विस्तार को कम करने की आवश्यकता को सिद्ध करते हैं। इस प्रकार जलवायु परिवर्तन परिदृश्यों के वैज्ञानिक आकलन की अनिश्चितता के सामने रखकर जलवायु परिवर्तन की गंभीरता को कम करने एवं रूपांतरण के कार्यों को समझना चाहिए। वास्तव में, अनिश्चितता का तत्व लगभग सभी वैज्ञानिक पूर्वानुमानों के साथ जुड़ा हुआ है लेकिन जलवायु परिवर्तन के मामले में यह काफी प्रमुख है। जलवायु परिवर्तन स्थानीय स्तर/सूक्ष्म पैमाने पर लोगों की प्रमुख चिंता है।

पर्वतीय क्षेत्र और द्वीप ऐसे क्षेत्र हैं जो जलवायु परिवर्तन के प्रति सबसे ज्यादा संवेदनशील हैं। वनों से समृद्ध या वनों और जैविक कृषिवानिक व्यवस्था के विकास की संभानाओं से जलवायु परिवर्तन को कम कर पाने की संभावनाएं बढ़ जाती है। जैव विविधता में समृद्ध क्षेत्र इसीलिए महत्वपूर्ण होते है चूंकि ये फसलों की नई किस्मों को विकसित करने के लिए अनुवांशिक आधार प्रदान करते हैं और पशुधन नस्लें जलवायु परिवर्तन के प्रति प्रतिरोधक क्षमता रखती हैं। इस प्रकार जलवायु परिवर्तन में खाद्य सुरक्षा होती है।

अन्य पर्वतीय क्षेत्रों की बजाए हिमालय जैसे पर्वतीय क्षेत्र वैश्विक ध्यानाकर्षण का केंद्र बनते है। चूंकि-(1) यह जलवायु परिवर्तन के महत्व को प्रदर्शित करता है और क्षेत्रीय जलवायु को नियंत्रित करता है। (2) यह वैश्विक जैव विविधता के 34 उत्तेजनशील क्षेत्रों में से एक है और यह फसल विविधता के उन 8 केंद्रों में से एक है। इस प्रकार यह विश्व समुदाय के लिए लाभकारी जैविक संसाधनों को आश्रय देता है। (3) ध्रुवीय क्षेत्रों के बाद यहां के बर्फीले क्षेत्र में सबसे बड़ी जनसंख्या निवास करती हैं, सिंधु, गंगा, ब्रह्मपुत्र, सलवीन और मेकोंग जैसी शक्तिशाली नदियां यहां करोड़ों गरीब लोगों को आजीविका प्रदान कर उनका भरण-पोषण करती है। (4) यह क्षेत्र अधिकांश/पूर्णत: 8 विकासशील देशों (भारत, चीन, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, बंगलादेश और म्यांमार) से आच्छादित है। जहां जलवायु परिवर्तन कम करने/अनुकूलन और जैव विविधता के संरक्षण को स्थानीय लोगों के सामाजिक-आर्थिक विकास के साथ जोड़ने की आवश्यकता है। ताकि इसके वैश्विक लाभ के प्रवाह की पोषणीयता सुनिश्चित की जा सके। अर्थात् विकसित देश पर्यावरण संरक्षण और स्थानीय लोगों के सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए सामंजस्य पर प्रमुखता के साथ जोर देते हैं। जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता की चिंताओं ने हिमालय के 8 विकासशील देशों के साथ-साथ विकसित और विकासशील देशों के बीच भी सहयोग को प्रोत्साहित किया है। हिमालय के वैश्विक महत्व को देखते हुए भारत ने जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्यांव्यन नीति के हिस्से के रूप में राष्ट्रीय मिशन ''हिमालय के पर्यावरण बनाए रखना'' तय किया है। (www.envfor.nic.in; www.dst.gov.in)

पर्वतीय क्षेत्र और द्वीप ऐसे क्षेत्र हैं जो जलवायु परिवर्तन के प्रति सबसे ज्यादा संवेदनशील हैं। वनों से समृद्ध या वनों और जैविक कृषिवानिक व्यवस्था के विकास की संभानाओं से जलवायु परिवर्तन को कम कर पाने की संभावनाएं बढ़ जाती है। जैव विविधता में समृद्ध क्षेत्र इसीलिए महत्वपूर्ण होते है चूंकि ये फसलों की नई किस्मों को विकसित करने के लिए अनुवांशिक आधार प्रदान करते हैं और पशुधन नस्लें जलवायु परिवर्तन के प्रति प्रतिरोधक क्षमता रखती हैं।

समय के साथ यह भी स्वीकार किया गया कि ''संपोषणीय विकास को प्राप्त करना''

तालिका 1: सहस्राब्दि विकास के उद्देश्य, लक्ष्य और उपलब्धियां

उद्देश्य	लक्ष्य	उपलब्धियां
भूख और गरीबी घटाना	1990 और 2015 के बीच प्रतिदिन एक डॉलर से कम कमाने वाले का अनुपात आधा करना।	वैश्विक स्तर पर अति गरीबी में रहने वाले लोगों का अनुपात आधा रह गया।
	सभी के लिए पूर्ण एवं लाभकारी रोजगार और उपयुक्त कार्य का लक्ष्य प्राप्त करना।	विकासशील क्षेत्रों में 1.25 डॉलर प्रतिदिन से कम में रहने वाले लोगों की संख्या 1990 के 47 प्रतिशत से गिरकर 2010 में 22 प्रतिशत रह गई
	1990 और 2015 के बीच भूख से पीड़ित लोगों को अनुपात आधा करना।	विश्व में पोषण से वंचित लोगों का अनुपात 1990-92 के 23.2 प्रतिशत से घटकर 2010-2012 में 14.9 प्रतिशत रह गया लेकिन 13 प्रतिशत (87 करोड़) भूख पीड़ित।
प्राथमिक शिक्षा	2015 तक सभी बच्चे प्राथमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम पूर्ण कर सकें, सुनिश्चित करना।	1990 से युवाओं में साक्षरता दर बढ़ रही है। लैंगिक अनुपात कम हो रहा है। विद्यालय से विमुख बच्चों की संख्या 2000 में 10.2 करोड़ से वर्ष 2011 में गिरकर 5.7 करोड़ हो गई और विकासशील देशों में 2010 में प्राथमिक शिक्षा में नामांकन 90 प्रतिशत तक पहुंच गया।
लैंगिक समानता	2015 तक शिक्षा के सभी स्तरों से लैंगिक विषमता का हटाना।	2012 तक विश्व में कृषि क्षेत्र से बाहर रोजगार में महिलाओं की हिस्सेदारी बढ़कर 40 प्रतिशत और संसद में उनका प्रतिनिधित्व बढ़कर 20 प्रतिशत हो गया।
बाल मृत्यु घटाना	1990 से 2015 के बीच में दो-तिहाई कम हुई, बाल मृत्यु दर 5 के नीचे है।	1990 की तुलना में 5 से नीचे की मृत्यु दर 47 प्रतिशत गिरी लेकिन आज भी उप-सहारा अफ्रीका में प्रतिदिन 17000 बच्चे अपनी जान गंवा रहे हैं। प्रत्येक 10 में से 1 बच्चा 5 वर्ष की आयु से पहले ही मर जाता है जो विकसित क्षेत्रों की औसत का 15 गुणा है।
मातृ स्वास्थ्य सुधार	मातृ मृत्यु अनुपात 1990 से 2015 के बीच में तीन-चौथाई कम हुआ।	पिछले 2 दशकों में विश्वभर में मातृ मृत्यु दर 47 प्रतिशत गिरी है।
	2015 तक प्रजनन स्वास्थ्य तक पहुंच प्राप्त कर ली गई।	विकसित क्षेत्रों में केवल 50 ीसडी गर्भवती महिलाओं को प्रसवपूर्व प्रस्तावित 4 देख-रेख जांच प्राप्त हो पाती है। विकासशील देशों में प्रसव के दौरान होने वाली ज्यादातर मातृ मृत्युअ समुचित पोषण, स्वास्थ्य देख-रेख, परिवार नियोजन तक पहुंच, प्रसव के दौरान कौशल युक्त सेविका की उपस्थिति और आपातकालीन प्रसूति देख-रेख के जरिए रोकी जा सकती है।
एड्स, मलेरिया और अन्य बीमारियों का सामना	वर्ष 2015 तक एचआईवी/एड्स के फैलाव लगाम लगे और स्थिति में पलटनी शुरू हो।	विश्वभर में नए एचआईवी संक्रमित लोगों की संख्या लगातार गिर रही है। यह वर्ष 2001 से 2011 तक 33 प्रतिशत गिरी है। वर्ष 2012 में वर्ष 2011 की तुलना में 15 वर्ष की आयु से कम के 290,000 कम बच्चे एचआईवी से संक्रमित हुए।
	एचआईवी/एड्स के उपचार के जरूरतमंदों तक वैश्विक पहुंच प्राप्त कर ली जाए।	वर्ष 2012 में एचआईवी ग्रस्त के 90.7 लाख लोगों का उपचार किया गया।
	2015 तक मलेरिया और अन्य बीमारियों पर भी लगाम लगे। स्थिति पलटनी शुरू हो जाए।	पिछले दशक में वर्ष 2000 से मलेरिया से 10.1 लाख लोगों को मौत के मुंह से बचाया गया और क्षय रोग के उपचार से 2 करोड़ जाने बचाई गई।
पर्यावरणीय पोषणीयता सुनिश्चित करना	संपोषणीय विकास सिद्धांत देश की नीतियों एवं योजनाओं में समाहित करना और पर्यावरणीय संसाधनों में हुई हानि को वापस लौटाना	1990 से वैश्विक कार्बन डाइआक्साइड का उत्सर्जन 46 प्रतिशत बढ़ गया।
	जैव विविधता की हानि का कम करके 2010 तक इसकी दर में महत्त्वपूर्ण कमी लाई जाए।	लगभग एक-तिहाई समुद्री मछली भंडारों को आवश्यकता से अधिक दोहन किया गया है और विश्व के मतस्य क्षेत्र लंबे समय तक अपनी पैदावार बनाए नहीं रख पाएंगे। संरक्षित क्षेत्र में वृद्धि के बावजूद पहले से ज्यादा प्रजाति विलुप्त होने का खतरा मंडरा रहा है। वन, विशेषकर दक्षिण अमेरिका और अफ्रीका के वन खतरनाक ढंग से गायब हो रहे हैं।
	2015 तक अनुपात में आधी जनसंख्या तक पीने योग्य सुरक्षित पानी और मुलभूत सफाई व्यवस्था तक पहुंचाया जाए।	1990 से ज्यादा लोगों ने बेहतर जल स्रोतों तक पहुंच हो गई है जो एमडीजी के लक्ष्य के अधिक है जबकि 1990 की अपेक्षा लगभग 200 करोड़ अधिक लोगों ने अब समुचित सफाई व्यवस्था तक पहुंच हो गई है। हालांकि 250 करोड़ अभी भी शौचालय से वंचित हैं।
	2020 तक मलिन बस्तियों में रहने वाले कम से कम 10 करोड़ लोगों के जीवन में महत्वपूर्ण सुधार का लक्ष्य हासिल करना है।	एक आकलन के अनुसार विकासशील देशों में 86.3 करोड़ लोग मलिन बस्तियों में रहते हैं।
वैश्विक साझेदारी के मामले में फिलहाल कोई निश्चित लक्ष्य नहीं		

एक आदर्श दृष्टिकोण है और समयबद्ध लक्ष्यों को साकार करने के संबंध में अभिव्यक्ति की आवश्यकता है। इस स्वीकार्यता के कारण 8वें सहस्राब्दि विकास लक्ष्य तैयार किए गए। संयुक्त राष्ट्र के 8वें उद्देश्य (वैश्विक साझेदारी को प्रोत्साहित करना) को छोड़कर प्रत्येक उद्देश्य के आगे निश्चित लक्ष्य तय किए गए हैं। पर्यावरण पोषणीयता ऐसा लक्ष्य है जो जलवायु परिवर्तन के साथ-साथ अन्य पर्यावरण ीय मुद्दों जैसे जैव विविधता, जल संसाधनों और मानव निवास को आच्छादित करता है। वर्ष 2000 से वर्ष 2015 तक विकास के सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है जैसे भूख, गरीबी, मृत्यु दर में कमी और अनिवार्य विकास को प्रोत्साहन लेकिन पर्यावरणीय विकास के क्षेत्र में बहुत सीमित सफलता प्राप्त की जा सकी है। जलवायु परिवर्तन को कम करने और जैव विविधता संरक्षण की दिशा में किए गए प्रयासों को सीमित सफलता मिली है। (तालिका 1) जैव विविधता सभी पर्यावरणीय सेवाओं की

तालिका 2: संपोषणीय विकास के लक्ष्य

गरीबी उन्मूलन
भूख को खत्म करना।
समेकित और अनिवार्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करना
लैंगिक समानता हासिल करना
देशों के भीतर और उनके बीच में असमानता को कम करना
स्वस्थ जीवन सुनिश्चित करना और कल्याण को प्रोत्साहित करना
जल एवं साफ-सफाई के संपोषणीय प्रबंधन की उपलब्धता सुनिश्चित करना
सभी तक पोषणीय, विश्वनीय, वहनीय आधुनिक ऊर्जा की पहुंच सुनिश्चित करना
अनवरत, समेकित और संपोषणीय आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करना, पूर्ण और लाभकारी रोजगार और सभी के लिए समुचित कार्य
प्रतिरोधक क्षमता वाली आधारभूत संरचना का निर्माण, समाकलित और पोषणीय औद्योगीकरण को प्रोत्साहित करना
नवीनीकरण को प्रोत्साहन देना
मानव बसावट और शहरों को समाकलित, सुरक्षित, प्रतिरोधक और पोषणीय बनाना
संपोषणीय उपभोग और उत्पादन के तरीके सुनिश्चित करना
जलवायु परिवर्तन और उसके प्रभावों का सामना करने के लिए अविलंब कदम उठाना। (यूएनएफसीसीसी फोरम के समझौते की टिप्पणियों के अनुसार)
पोषणीय विकास के लिए समुद्री संसाधनों, समुद्रों और सागरों का संरक्षण और पोषणीय उपयोग
धरती के पर्यावरण की रक्षा, पुन: निर्माण और पोषणीय उपयोग को प्रोत्साहन, वनों को पोषणीय प्रबंधन, पृथक्करण प्रतिरोधक, भूमि के निम्नीकरण पर रोक लगाकर उसे वापस पुरानी स्थिति तक लेकर जाना, जैव विविधता के नुकसान को रोकना
संपोषणीय विकास के लिए समेकित और शांतिपूर्ण समाज को प्रोत्साहित करना, न्याय तक सभी की पहुंच उपलब्ध कराना, सभी स्तरों पर समेकित, प्रभावकारी और जवाबदेह संस्थानों का निर्माण करना।
संपोषणीय विकास के लिए कार्यान्वयन के साधनों का सुदृढ़ीकरण और वैश्विक साझेदारी को अधिक मजबूत बनाना

आधारशिला है। (अर्थात् प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मानव को, पर्यावरण को लाभ पहुंचाने वाली अर्थात् प्रावधान सेवाएं, नियमन सेवाएं, सहायक सेवाएं और सांस्कृतिक सेवाएं) और दोनों मिलकर जलवायु परिवर्तन के साथ-साथ कई अन्य पर्यावरणीय या आर्थिक आघातों के प्रतिरोध की रीढ़ बनती हैं।

एमडीजी के 8 लक्ष्यों की उपलब्धियों को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र ने 8 एमडीजी के पुनर्गठन और वर्ष 2015-2030 के लिए संपोषणीय विकास के 17 लक्ष्य (एसडीजी) निर्धारित किए हैं। (तालिका 3) पर्यावरणीय पोषणीयता को प्राप्त करने के लिए एमडीजी को पहले से अधिक केंद्रित 9 एसडीजी के रूप में पुन: पदबद्ध किया गया जो पर्यावरणीय पोषणीयता के बढ़ते महत्व और पर्यावरणीय, आर्थिक और सामाजिक समस्याओं के अंतर्संबंध को रेखांकित करते है। जलवायु

जलवायु परिवर्तन के समाधान के प्रयास अब विविध पद्धतियों - उत्सर्जन में कमी, जलवायु परिवर्तन का सामना करने के लिए गरीबों की क्षमता में वृद्धि और वातावरण की कार्बन डाइआक्साइड को हटाकर इत्यादि के जरिए किए जाएंगे। देशों का अनिवार्य विकास, संपोषणीय विकास धारणा का एक और तत्व है जिसे एसडीजी की रूपरेखा में सुस्पष्ट लक्ष्य के रूप में पहचान मिली है।

परिवर्तन के समाधान के प्रयास अब विविध पद्धतियों - उत्सर्जन में कमी, जलवायु परिवर्तन का सामना करने के लिए गरीबों की क्षमता में वृद्धि और वातावरण की कार्बन डाइआक्साइड को हटाकर इत्यादि के जरिए किए जाएंगे। देशों का अनिवार्य विकास, संपोषणीय विकास धारणा का एक और तत्व है जिसे एसडीजी की रूपरेखा में सुस्पष्ट लक्ष्य के रूप में पहचान मिली है।

जलवायु परिवर्तन संपोषणीय विकास के विविध आयामों में से एक है। सभी की इच्छा है

तालिका 3: सहस्राब्दि विकास लक्ष्य

भूख और गरीबी घटाना
वैश्विक प्राथमिक शिक्षा को प्राप्त करना
लैंगिक समानता और महिला सशक्तीकरण को प्रोत्साहन
बाल मृत्यु घटाना
मातृ स्वास्थ्य सुधार
एचआईवी/एड्स, मलेरिया और अन्य बीमारियों का सामना करना
पर्यावरणीय पोषणीयता सुनिश्चित करना
वैश्विक साझेदारी को प्रोत्साहित करना

कि जलवायु परिवर्तन को कम करके संपोषणीय विकास को प्राप्त किया जाए लेकिन इसके लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए समाधान पर विचारों में भिन्नता है। इसके अलावा वैश्विक स्वीकार्य समाधान तैयार करने के लिए ज्ञान की कमी है और उनके कार्यान्वयन के लिए संसाधनों की भी कमी हैं। वैश्विक साझेदारी का लक्ष्य सभी को लाभ पहुंचाने के लिए सहयोग के अवसरों का लाभ उठाने के लिए जमीनी कार्य करना है। यूएन-आरईडीडी कार्यक्रम एक ऐसा कार्यक्रम है जो उनके वनों के संरक्षण और उच्च कार्बन भंडार के जरिए भूमि उपयोग बदलकर विकासशील देशों के लोगों को आय के नए अवसर उपलब्ध कराता है। विकसित देश कार्बन के संरक्षण के लिए पैसा दे रहे हैं और विकासशील देशों के लोग इसे छिपा रहे हैं। चूंकि जलवायु परिवर्तन विकसित और विकासशील देशों दोनों को प्रभावित करेगा, इसलिए यह अंतर्राष्ट्रीय संबंधों का निर्णायक अंग बन गया है। पोषणकारी विकास का लक्ष्य इतना विशाल है और जलवायु परिवर्तन की समस्या इतनी जटिल है कि हमें बिना देरी किए, उपलब्ध सर्वोतम समाधानों को स्वीकार करना होगा। नए ज्ञान और अनुभव से उपयोग में लाए गए समाधान के परिणामों का निरीक्षण कर उसमें आगे सुधार करना होगा। समस्या के समाधान की एक लोचशील और अनुकूलनीय रणनीति अपनानी होगी। ❑

पाठकों से

योजना में प्रकाशनार्थ आलेख व प्रतिक्रियाएं yojanahindi@gmail.com पर ईमेल के द्वारा प्रेषित की जा सकती हैं। आप हमारे फेसबुक पेज **योजना हिंदी** पर भी हमसे जुड़ सकते हैं। आपकी राय, सुझाव व सहयोग का इंतजार रहेगा।

–संपादक

जलवायु परिवर्तन एवं संपोषणीय कृषि

एम एस स्वामीनाथन

जलवायु परिवर्तन ने कृषि जींसों के मूल्यों में उतार-चढ़ाव पहले ही बढ़ा दिया है। भविष्य में किफायती कीमत पर खाद्यान्न आयात करना कठिन हो जाएगा। इसीलिए भविष्य अनाज वाले देशों का है, बंदूक वाले देशों का नहीं। जलवायु परिवर्तन जैसी संभावित आपदा को टिकाऊ कृषि का लक्ष्य प्राप्त करने के माध्यम में बदलने का असाधारण अवसर मिल गया है

संयुक्त राष्ट्र के सदस्य राष्ट्रों द्वारा हाल ही में सतत विकास के 17 लक्ष्य स्वीकार किए गए। लक्ष्य 13 में राष्ट्रों से जलवायु परिवर्तन एवं उसके प्रभावों से लड़ने के लिए त्वरित कार्रवाई का अनुरोध किया गया है। जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र प्रारूप संधि में शामिल राष्ट्रों का सम्मेलन नवंबर-दिसंबर 2015 में पेरिस में होगा। पेरिस सम्मेलन के पश्चात् संयुक्त राष्ट्र के सदस्य देशों को जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन एवं उसके शमन अर्थात् उसमें कमी लाने, दोनों में अपने-अपने योगदान की रणनीतियों को अंतिम रूप देना होगा। भारत में, जहां आजीविका का प्राथमिक स्रोत कृषि है, माध्य तापमान में प्रतिकूल परिवर्तन, वर्षा का आधिक्य अथवा कमी, अतिकारी मौसमी घटनाओं समेत मौसम का अनिश्चित व्यवहार, समुद्री जल स्तर में वृद्धि तथा बार-बार एवं गंभीर तटीय तूफान एवं सुनामी हमारे लिए विशेष चिंता के क्षेत्र हैं। सभी राष्ट्रों विशेषकर विकसित देशों द्वारा अभी तक की गई कार्रवाई से ऐसा प्रतीत होता है कि इस शताब्दी के अंत तक माध्य तापमान तीन डिग्री सेल्सियस तक बढ़ जाएगा।

माध्य तापमान में 2 से 3 डिग्री सेल्सियस वृद्धि होने से उत्तर भारत में गेहूं की फसल अवधि में कमी आएगी और परिणामस्वरूप प्रतिवर्ष 60 से 70 लाख टन गेहूं बर्बाद होगा। साइबेरिया और उत्तर कनाडा जैसे कुछ क्षेत्रों को तापमान में आंशिक वृद्धि से लाभ होगा क्योंकि इससे उनकी फसल की अवधि बढ़ जाएगी। इस प्रकार जलवायु परिवर्तन के साझे प्रभाव भी होंगे और भिन्न प्रभाव भी होंगे। ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में पारस्परिक सहमति वाली कमी करने में सहयोग की अपनी नीति को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने 1 अक्टूबर, 2015 को निम्नलिखित दो बड़े निर्णय लिए:

1. 2030 तक जीडीपी की उत्सर्जन तीव्रता में 2005 के स्तर की अपेक्षा 32 से 35 प्रतिशत तक कमी लाना।
2. 2030 तक लगभग 40 प्रतिशत बिजली का उत्पादन अजीवाश्मीय ईंधन आधारित स्रोतों जैसे परमाणु, सौर, पवन, बायोमास एवं बायोगैस से करना।

माध्य तापमान में वृद्धि एवं समुद्र के जल स्तर में संभावित वृद्धि हमारे देश के लिए विशेष चिंता के क्षेत्र हैं। हमें विशेष रूप से प्रतिकूल जलवायु के प्रतिकूल प्रभावों के खतरे वाले क्षेत्रों में जीवन एवं आजीविका की रक्षा हेतु अग्रिम कदम उठाने होंगे। हमारी रणनीति अच्छे मानसून के उत्पादन संबंधी लाभों को अधिकाधिक करने एवं जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभाव को कम से कम करने की होनी चाहिए। यद्यपि तापमान में वृद्धि एवं कमी अथवा अधिक वर्षा के परिणाम एक जैसे होंगे किंतु अनुकूलन एवं शमन के लिए कार्य योजनाएं स्थानीयता से युक्त होनी चाहिए। हमें पंचायत के स्तर पर जलवायु जोखिम प्रबंधन केंद्र बनाने होंगे और सामुदायिक जलवायु जोखिम प्रबंधकों को प्रशिक्षित करना होगा।

लेखक विश्व के अग्रणी कृषि वैज्ञानिकों में शुमार हैं। इन्हें भारत में हरित क्रांति का जनक कहा जाता है। वह रैमन मैग्सेसे पुरस्कार, पद्मश्री, पद्म भूषण, पद्म विभूषण, अल्बर्ट आइंस्टीन वैश्विक पुरस्कार, प्रथम विश्व खाद्य पुरस्कार आदि से सम्मानित किए जा चुके हैं। वह विकास के लिए विज्ञान व प्रौद्योगिकी विषय पर संयुक्त राष्ट्र के सलाहकार तथा अन्य कई वैश्विक संस्थाओं में प्रमुख भूमिका में रहे हैं। ईमेल: founder@mssrf.res.in

जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन के लिए आईसीएआर, कृषि विश्वविद्यालय और कृषि विज्ञान केंद्रों के माध्यम से कृषि प्रणालियां तैयार करनी होंगी तथा जलवायु जोखिम प्रबंधक बनने के लिए प्रशिक्षित किए गए स्थानीय पुरुषों तथा महिलाओं के माध्यम से उन्हें लोकप्रिय बनाना होगा। कृषि के जिन क्षेत्रों को परिवर्तन की आवश्यकता होगी, उनमें अग्रिम अनुसंधान करना होगा।

जलवायु से अप्रभावित रहने वाले मोटे अनाज के संरक्षण और भोजन में उनके पुनः प्रवेश के क्षेत्र में त्वरित कार्रवाई की आवश्यकता है। मिलेट तथा कम उपयोग की जा रही अन्य फसलों में सूखे और गर्मी को सहने की क्षमता अधिक होती है और वे पोषक भी होती हैं। जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन के लिए आईसीएआर, कृषि विश्वविद्यालय और कृषि विज्ञान केंद्रों के माध्यम से कृषि प्रणालियां तैयार करनी होंगी तथा जलवायु जोखिम प्रबंधक बनने के लिए प्रशिक्षित किए गए स्थानीय लोगों के माध्यम से उन्हें लोकप्रिय बनाना होगा। कृषि के जिन क्षेत्रों को परिवर्तन की आवश्यकता होगी, उनमें अग्रिम अनुसंधान करना होगा। उदाहरण के लिए गेहूं और चावल जैसी फसलों में प्रजननकर्ता को प्रति दिवस उत्पादकता के बजाय प्रति फसल उत्पादकता पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए क्योंकि फसल की अवधि कम होने की आशंका है। हम आलू के शीर्ष उत्पादक देशों में हैं। ऐसा एफिड मुक्त मौसम के दौरान बीज कंदों के उत्पादन के कारण संभव हो पाया है। एफिड विषाणु जनित रोगों के वाहक का कार्य करते हैं, इसीलिए एफिड मुक्त मौसम किसानों को रोगमुक्त बीज कंद तैयार करने में सहायता करता है। यदि माध्य तापमान में वृद्धि होगी तो यह लाभ समाप्त हो जाएगा और हमें आलू की फसल वास्तविक बीजों से तैयार करनी होगी। इस प्रकार की समस्याओं पर अनुसंधान बढ़ाने की आवश्यकता है।

बार-बार बाढ़ों तथा तूफानों के लिए तैयार रहना एक अन्य क्षेत्र है, जहां अग्रिम तौर पर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। सौभाग्य से अब ऐसे जीन उपलब्ध हैं, जो धान जैसे पौधों को बाढ़ के स्तर से ऊपर उगने में मदद कर सकते हैं। लंबाई बढ़ाने वाले ऐसे जीन बाढ़ की आशंका वाले सभी क्षेत्रों में उपलब्ध कराने होंगे। तटवर्ती क्षेत्र सबसे बड़ी चुनौती होंगे क्योंकि हमारे यहां लगभग 7,500 किलोमीटर लंबा समुद्री तट है और अंडमान-निकोबार तथा लक्षद्वीप भी हैं। इन क्षेत्रों में मैनग्रोव वनों का संरक्षण किया जाना चाहिए और उनका क्षेत्र बढ़ाया जाना चाहिए। मैनग्रोव जैव संरक्षक की तरह काम करते हैं। इसके अलावा विश्व का लगभग 97 प्रतिशत जल संसाधन समुद्री जल है। अब हैलोफाइट (नमक सहने वाले पौधों) और मत्स्यपालन के द्वारा जैवलवणीय कृषि के लिए संभावना है।

150 वर्ष से अधिक समय पूर्व केरल में कुट्टानाड के किसानों ने समुद्र के जल स्तर से भी नीचे के क्षेत्र में चावल उगाने की कला में दक्षता प्राप्त कर ली थी। इसके लिए लवणता के प्रबंधन तथा लवणता को सहन करने में सक्षम पोक्कली जैसी किस्मों, दोनों की आवश्यकता होती है। कुट्टनाड के किसानों के इस अभिनव एवं महत्वपूर्ण योगदान को मान्यता प्रदान करने हेतु एफएओ ने कुट्टनाड कृषि प्रणाली को वैश्विक रूप से महत्वपूर्ण कृषि धरोहर प्रणाली घोषित कर दिया। तटीय समुदायों को जैवलवणीय एवं समुद्र के स्तर से नीचे की कृषि के विज्ञान एवं कला में दक्ष करने के उद्देश्य से केरल ने कुट्टनाड में समुद्री स्तर से नीचे कृषि का अंतर्राष्ट्रीय अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केंद्र स्थापित करने का निर्णय किया है। सुंदरवन जैसे क्षेत्रों एवं मालदीव जैसे देशों को भी ऐसे केंद्र में रुचि हो सकती है।

समुद्री स्तर में वृद्धि का एक अन्य परिणाम होगा उन लोगों के लिए वैकल्पिक निवास स्थान तलाशने की आवश्यकता, जो लोग समुद्र के निकट रहते हैं। ऐसे जलवायु शरणार्थियों को रहने के लिए उचित स्थान उपलब्ध कराने हेतु योजना आरंभ करनी होगी।

समुद्री स्तर में वृद्धि का एक अन्य परिणाम होगा उन लोगों के लिए वैकल्पिक निवास स्थान तलाशने की आवश्यकता, जो लोग समुद्र के निकट रहते हैं। ऐसे जलवायु शरणार्थियों को रहने के लिए उचित स्थान उपलब्ध कराने हेतु योजना आरंभ करनी होगी। हैलोफाइट को संरक्षित करने और जलवायु से अप्रभावित रहने वाली तटीय कृषि प्रणालियां तैयार करने हेतु प्रजननकर्ताओं को हैलोफाइट उपलब्ध कराने हेतु एम एस स्वामीनाथन रिसर्च फाउंडेशन ने तमिलनाडु के वेदारण्यम में जेनेटिक गार्डन ऑफ हैलोफाइट्स स्थापित किया है। कृषि को ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन घटाने में योगदान करने की भी आवश्यकता है। स्थानीय समुदायों की सक्रिय सहभागिता से स्थानीय जलवायु जोखिम प्रबंधन केंद्रों द्वारा कई कदम उठाए जा सकते हैं। महिलाओं की प्रतिभागिता विशेषकर महत्वपूर्ण है क्योंकि जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों से वे ही सर्वाधिक प्रभावित होती हैं। उदाहरण के लिए पेयजल, जलाने की लकड़ी, चारा आदि इकट्ठा करने के क्षेत्रों में। इसीलिए जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन एवं शमन से संबंधित सभी कार्यक्रमों को महिलाओं के प्रति संवेदनशील होना चाहिए।

शमन के जो कदम उठाए जा सकते हैं, उनमें वनों का उन्मूलन कम करना एवं वातावरण में कार्बन डाई ऑक्साइड का बोझ कम करने में मदद के लिए जन केंद्रित तरीके से वनरोपण को प्रोत्साहित करना शामिल हैं। ग्रीन हाउस गैस मीथेन का प्रयोग बायोगैस संयंत्रों को बढ़ावा देने में किया जा सकता है। इससे वातावरण में मीथेन का जमाव रोकने में सहायता मिलेगी और किसानों को ईंधन तथा उर्वरक भी प्राप्त होंगे। उर्वरक प्रयोग के कारण होने वाले नाइट्रस ऑक्साइड उत्सर्जन को भी नीम की परत वाले यूरिया के प्रयोग द्वारा रोका जा सकता है। वास्तव में स्थानीय स्तर पर कम कार्बन के साथ विकास के मार्ग में योगदान देने का सबसे प्रभावी

कृषि को ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन घटाने में योगदान करने की भी आवश्यकता है। स्थानीय समुदायों की सक्रिय सहभागिता से स्थानीय जलवायु जोखिम प्रबंधन केंद्रों द्वारा कई कदम उठाए जा सकते हैं। महिलाओं की प्रतिभागिता विशेषकर महत्वपूर्ण है क्योंकि जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों से वे ही सर्वाधिक प्रभावित होती हैं।

तरीका ''प्रत्येक खेत में बायोगैस संयंत्र, कम उर्वरक, पेड़ तथा एक तालाब'' के सिद्धांत का पालन करना है।

ग्रामीण महिला एवं पुरुष दोनों को ही स्थानीय स्तर पर जलवायु जोखिम प्रबंधक होना चाहिए। जलवायु से अप्रभावित रहने वाली कृषि प्रणालियों, जिनमें अन्य फसलों के साथ दालें भी शामिल होनी चाहिए, को बढ़ावा देने में वे अग्रणी हो सकते हैं। दालें नाइट्रोजन को मिट्टी में बांधने में सहायक होती हैं तथा प्रोटीन की प्रचुर मात्रा वाला भोजन भी उपलब्ध कराती हैं।

तट के किनारे अब सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग की संभावना है। उदाहरण के लिए मोबाइल फोन द्वारा छोटे मछुआरों को तट से विभिन्न दूरियों से लहरों की ऊंचाई के संबंध में जानकारी प्रदान की जा सकती है ओर यह भी बताया जा सकता है कि मछलियां कहां हैं। इंटरनेट तथा मोबाइल टेलीफोनी के ऐसे मछुआरों के अनुकूल प्रयोग पारंपरिक मत्स्य पालन का कायाकल्प करने में सहायक हो सकते हैं। छोटे मछुआरे 26 दिसंबर, 2004 की भीषण सुनामी के बाद विशेष रूप से डर गए किंतु अब वे अपनी छोटी नावों में बैठकर पूरे विश्वास के साथ मछली पकड़ने समुद्र में जाते हैं।

यदि हमने अनुकूलन एवं शमन के क्षेत्र में अभी से कदम नही उठाए तो जलवायु परिवर्तन बड़ी आपदा बन सकती है। एक ओर तापमान, वर्षा एवं समुद्री स्तर में संभावित परिवर्तनों के लिए अग्रिम तैयारी से कृषि में नई प्रौद्योगिकियों के प्रयोग में सहायता प्राप्त होगी। लघु कृषि एवं मत्स्यपालन का प्रौद्योगिकी आधारित कायांतरण लाभकारी परिणाम हो सकता है। जलवायु परिवर्तन ने कृषि जिनों के मूल्यों में उतार-चढ़ाव पहले ही बढ़ा दिया है। भविष्य में किफायती कीमत पर खाद्यान्न आयात करना कठिन हो जाएगा। इसीलिए भविष्य अनाज वाले देशों का है, बंदूक वाले देशों का नहीं। जलवायु परिवर्तन जैसी संभावित आपदा को टिकाऊ कृषि का लक्ष्य प्राप्त करने के माध्यम में बदलने का असाधारण अवसर मिल गया है। ❑

लेखकों से अनुरोध

(1) 'योजना' विकास संबंधी विषयों पर केंद्रित मासिक है। पत्रिका में हर माह आगामी अंक का केंद्रीय विषय प्रकाशित किया जाता है। लेखकों से अनुरोध है कि प्रकाशन हेतु केंद्रीय विषय के अनुसार ही रचनाएं भेजें।

(2) रचनाएं भेजते समय रचना की प्रति अपने पास अवश्य रखें। सामान्यतः रचनाएं वापस नहीं भेजी जातीं। रचना की वापसी के लिए यथाउचित मूल्य के टिकट और पता लिखा लिफाफा भेजें।

(3) ई-मेल से भेजी जाने वाली रचनाएं Microsoft Word में Kruti Dev Font 010 में टाइप करके yojanahindi@gmail.com पर भेजी जा सकती है। हस्तलिखित रचनाओं का भी स्वागत है।

(5) **संपादकीय पत्र व्यवहार** का पता है: संपादक (योजना), प्रकाशन विभाग, कमरा नं. 648, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003, फोन: 011-24365920

निश्चय
IAS ACADEMY

दर्शनशास्त्र
द्वारा यशवंत सिंह

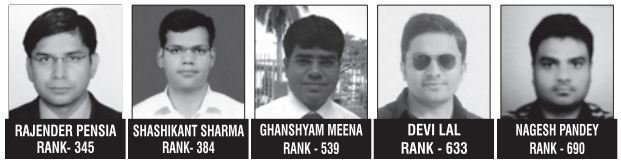

दर्शनशास्त्र में हिन्दी माध्यम में सर्वोच्च अंक
अंक-311
अरविन्द जैन

मेरी सफलता में दर्शनशास्त्र का महती योगदान है और दर्शनशास्त्र जैसे शुद्ध विषय का सहजता और सरलता के साथ अध्ययन 'निश्चय संस्थान' में 'यशवंत सर' के सधे हुए मार्गदर्शन में ही सम्पन्न हो पाया। इसके अतिरिक्त सामान्य अध्ययन, निबंध एवं साक्षात्कार की तैयारी में भी यशवंत सर का मार्गदर्शन कारगर साबित हुआ है।

Arvind Kr. Jain
AIR - 580

निश्चय I.A.S. Academy एक छात्रों के प्रति समर्पित संस्था है जहाँ 30-40 विद्यार्थी ही अध्ययन करते है उनमें से प्रत्येक वर्ष 8-10 विद्यार्थी सफल होते। जो सफलता के प्रतिशतता की दृष्टि से सबसे उच्च है। यह एक चमत्कार नहीं है बल्कि प्रत्येक विधार्थी के पीछे की गयी मेहनत को दर्शाता है।

- साप्ताहिक ही नहीं, बल्कि प्रतिदिन **written test** पर बल
- त्रुटियों में सुधार (व्यक्तिगत तौर पर)
- प्रत्येक प्रश्न की फ्रेमिंग पर बल

सामान्य अध्ययन
द्वारा
यशवंत सिंह एवं विशेषज्ञ टीम

नया बैच प्रारम्भ
5 Dec. 11 AM

102, 103, 1st Floor, Jaina House, Mukherjee Nagar, Delhi-9
011-47074196, 9891352177

YH-218/2015

समानता और एक वैश्विक जलवायु समझौता

टी जयरामन

विकासशील देशों में समानता के सिद्धांत का उपयोग रक्षात्मक अंदाज में करने की प्रवृत्ति रही है, जबकि समानता को सुनिश्चित करने बाले विशिष्ट प्रस्तावों को पूरी तरह व्यक्त नहीं किया गया है। यदि विकासशील देश विशिष्टीकरण को सुनिश्चित करते हुए प्रस्ताव व्यक्त करें, तो यह आदर्श होगा और विकास के लिए उनकी मूल चिंताओं से यह भी सुनिश्चित होगा कि वे वैश्विक कार्यवाही के बोझ का अपना उचित हिस्सा वहन करते देखे जा रहे हैं और उन पर निष्क्रियता का आरोप नहीं लगाया जा सकता है

यह वस्तुतः स्वयंसिद्ध है कि जलवायु परिवर्तन उन प्रमुख चुनौतियों में से एक है, जिनका आज दुनिया को सामना करना पड़ रहा है विशेष रूप से विकसित देशों में ऐसे बुद्धिजीवियों, राजनीतिक नेताओं, उद्योग जगत के समर्थकों और इक्का-दुक्का सेलिब्रिटी लोगों के एक निकाय की मुखर उपस्थिति के बावजूद, जिन्हें जलवायु परिवर्तन से इनकार करने वाला कहा जा सकता है, इस तरह के विचार विश्व स्तर पर तेजी से अल्पमत में आते जा रहे हैं। ऐसा कोई गंभीरता से विचार करने योग्य राजनीतिक व्यक्ति नहीं है, जो गंभीरता से सार्वजनिक तौर पर जलवायु परिवर्तन के खतरे को टालने के लिए किसी स्तर की ठोस वैश्विक और राष्ट्रीय कार्यवाही की जरूरत से इनकार करे। इस तरह की कार्यवाही और उसके सामान्य ढांचे के पक्ष में वैज्ञानिक तर्क जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल (आईपीसीसी) की ढाई दशकों की विभिन्न रिपोर्टों में विस्तार से प्रस्तुत किए गए हैं, सबसे हाल ही में उनकी पांचवीं आकलन रिपोर्ट (एआर5) में।

इसके बावजूद, एक ऐसे वैश्विक जलवायु समझौते को तैयार करने की प्रक्रिया श्रम-साध्य और दुरुह साबित हुई है, जो ग्रीन हाउस गैसों (जीएचजी) के उत्सर्जन को कम करने के लिए निश्चित लक्ष्यों को निर्धारित करता हो। मूल समझौते की रूपरेखा पर, अर्थात् जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएफसीसी), जिसमें भारी बहुमत से देशों ने उन व्यापक सिद्धांतों पर सहमति व्यक्त की थी, जिसके तहत इस तरह के एक वैश्विक समझौते पर पहुंचा जा सकता है, 1992 में अपेक्षाकृत आसानी से हस्ताक्षर किए गए थे। हालांकि इसके बाद से, इस ढांचा समझौते की शर्तों को लागू करना और विभिन्न देशों द्वारा जिन विशिष्ट कार्यों को किए जाने की आवश्यकता थी, उन पर सहमति होना मुश्किल साबित हुआ है।

इस कठिनाई के स्रोतों को पता लगाना कठिन नहीं है। इस मुद्दे की जड़ जलवायु परिवर्तन कार्यवाही के अर्थशास्त्र में निहित है। ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन, विशेष रूप से कार्बन डाइऑक्साइड का उत्सर्जन, जो इन गैसों में सबसे महत्वपूर्ण और सबसे शक्तिशाली है, जो जीवाश्म ईंधनों और उनके व्युत्पन्नों पर मानवता की विशाल और सतत निर्भरता का एक परिणाम है और जिस तरीके से उनका उपयोग होता है, वह 150 से अधिक वर्ष पहले शुरू हुई औद्योगिक क्रांति का एक अभिन्न हिस्सा, वास्तव में उसकी नींव है। नई प्रौद्योगिकियां उदीयमान हैं, जबकि उद्योगेतर उपयोग के लिए अक्षय ऊर्जा निश्चित रूप से कई मामलों में परिपक्व हो गई है लेकिन इसके बावजूद, जलवायु परिवर्तन की गति को मंद करने की लागत को लेकर काफी अनिश्चितता बनी हुई है (अर्थात, ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी की लागत को लेकर) और सभी राष्ट्र, विकसित हों या विकासशील, इन लागतों की को लेकर सतर्क हैं, जो लागत आज बैठनी है और जो भविष्य में हो सकती है। विकासशील देश पसोपेश में हैं, क्योंकि उन पर न केवल विकास की खाई को भरने का बोझ है– ताकि वे अपनी जनता के लिए एक अच्छा जीवन-स्तर सुनिश्चित कर सकें। बल्कि उन्हें

लेखक टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज मुंबई के स्कूल ऑफ हैक्टिल स्टडीज में प्रोफेसर हैं। वह विज्ञान, प्रौद्योगिकी व समाज से जुड़े विषयों खासकर जलवायु परिवर्तन पर शोध में रुचि रखते हैं। ईमेल: tjayuraman@tiss.edu

जीवाश्म ईंधन के उपयोग की सीमाओं के तहत इस लक्ष्य को हासिल करना है, जिसका कोई सानी औद्योगिक वृद्धि और विकास के विश्व इतिहास में नहीं है।

वैश्विक जलवायु कार्यवाही साझेदारी

वैश्विक जलवायु कार्यवाही की आवश्यकता की एक नैतिक अनिवार्यता है, न केवल सार रूप में, बल्कि यूएनएफसीसीसी के एक अभिन्न अंग के रूप में भी। यह समझौता, जिस पर सभी राष्ट्रों द्वारा सहमति दी गई है, इस अनिवार्यता को स्पष्ट और मुखर रूप से स्वीकार करता है। इस प्रकार वैश्विक जलवायु वार्ता में प्रमुख मुद्दा तेजी से जलवायु कार्यवाही के संबंधित वैश्विक आर्थिक बोझ का होता जा रहा है, विशेष रूप से विकसित और विकासशील देशों के बीच संबंधित हिस्सेदारी में, एक ऐसी दुनिया में, जिसमें आज भी विकसित और विकासशील देशों के बीच काफी असमानताएं हैं।

विकसित देश अपना बोझ कम करने के लिए रची गई पैंतरेबाजी की एक लंबी श्रृंखला में लिप्त हो गए हैं, जिसके लिए रणनीतियों, अवधारणाओं के ढांचे और तर्कों और कूटनीतिक हथकंडों का एक पूरा असलहा विकसित किया गया है, जिसे वार्ता में और बाहर प्रयोग किया जाता है, ताकि मोटे तौर पर दुनिया के प्रति और विशेष रूप से विकासशील देशों के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को कम किया जा सके।

यह बात स्वयं यूएनएफसीसीसी द्वारा स्पष्ट रूप से स्वीकार की गई है कि वैश्विक जलवायु कार्यवाही में इस बोझ का बंटवारा समानता के आधार पर किया जाना चाहिए। कन्वेंशन के अनुच्छेद 3.1 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि सभी पक्षों को मानव जाति की वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के हित के लिए जलवायु प्रणाली की रक्षा समानता के आधार पर और उनकी साझी लेकिन अलग-अलग की गई जिम्मेदारियों और संबंधित क्षमताओं के अनुसार करनी चाहिए। तदनुसार, विकसित देशों के पक्ष को जलवायु परिवर्तन और उसके प्रतिकूल प्रभाव का मुकाबला करने में आगे आना चाहिए।

अनुच्छेद 3.2 आगे कहता है: ''विकासशील देशों के पक्ष की विशिष्ट जरूरतों और विशिष्ट परिस्थितियों को, विशेष रूप से उनकी, जो जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों से खास तौर पर अति संवेदनशील हैं और उन पक्षों को, विशेष रूप से विकासशील देशों के पक्ष को, जिन्हें इस कन्वेंशन के तहत असंगत या असामान्य बोझ वहन करना होगा, उन पर पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए।'' कन्वेंशन में अन्य अनुच्छेद हैं, जिनमें विकसित देशों के जिम्मे आने वाली अन्य अधिक विशिष्ट जिम्मेदारियों पर विस्तार से विवरण है, जिसमें जलवायु परिवर्तन की गति को मंद करने में अग्रणी रहने, विकासशील देशों के लिए अनुकूलन के साथ सहायता और वित्त और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के तौर पर विकासशील देशों के लिए सहायता देना शामिल है।

कन्वेंशन पर हस्ताक्षर के बाद से, विकसित देश अपना बोझ कम करने के लिए रची गई पैंतरेबाजी की एक लंबी श्रृंखला में लिप्त हो गए हैं, जिसके लिए रणनीतियों, अवधारणाओं के ढांचे, तर्कों और कूटनीतिक हथकंडों की एक पूरी व्यवस्था विकसित की गई है, जिसे वार्ता में और बाहर प्रयोग किया जाता है, ताकि मोटे तौर पर दुनिया के प्रति और विशेष रूप से विकासशील देशों के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को कम किया जा सके। कन्वेंशन पर हस्ताक्षर किए जाने के प्रथम दो दशकों में, प्रयास यह था कि विकासशील देशों को इस बोझ का उनके हिस्से से ज्यादा बोझ ढोने के लिए राजी किया जाए।

अभी हाल ही में विकसित देश यह प्रयास करते रहे थे कि समानता और साझे किंतु अलग-अलग दायित्वों और संबंधित क्षमताओं के संदर्भ को ही पूरी तरह समाप्त कर दिया जाए। 2011 में डरबन में हुई जलवायु वार्ता के बाद से इस प्रवृत्ति को विशेष रूप से देखा गया है, जिसमें 2015 में यूएनएफसीसीसी की पक्षों की समिति की 21 वीं बैठक तक एक वैश्विक समझौते पर पहुंचने का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। विकासशील देश मजबूती से इस प्रवृत्ति का विरोध करते रहे हैं लेकिन इनमें से ऐसे वर्ग हैं, जो उस क्षति को लेकर चिंतित हैं, जो क्षति जलवायु परिवर्तन से उनके देशों और समाजों को हो सकती है। ऐसे देश जल्द से जल्द एक समझौते तक पहुंचने के लिए चिंतित हैं, भले ही ऐसा साफ लगता हो कि इससे इसके बोझ का एक बड़ा हिस्सा बड़ी उभरती अर्थव्यवस्थाओं, खासकर चीन और भारत पर गिरेगा।

यहां यह बात भी कहनी होगी कि विकासशील देशों में समानता के सिद्धांत का उपयोग रक्षात्मक अंदाज में करने की प्रवृत्ति रही है, जबकि समानता को सुनिश्चित करने वाले विशिष्ट प्रस्तावों को पूरी तरह व्यक्त नहीं किया गया है। यदि विकासशील देश विशिष्टीकरण को सुनिश्चित करते हुए प्रस्ताव व्यक्त करें, तो यह आदर्श होगा और विकास के लिए उनकी मूल चिंताओं से यह भी सुनिश्चित होगा कि वे वैश्विक कार्यवाही के बोझ का अपना उचित हिस्सा वहन करते देखे जा रहे हैं और उन पर निष्क्रियता का आरोप नहीं लगाया जा सकता है।

खतरा यह है कि समय के साथ विकासशील देशों पर वास्तविक बोझ, जिनमें भारत अग्रणी है, वास्तव में बहुत अधिक बढ़ जाएगा, जिसे आवधिक समीक्षा के माध्यम से ऊपर से ऊपर बढ़ाया जाता रहेगा। ऐसा विशेष रूप से इसलिए है क्योंकि विकसित देशों ने अल्प अवधि के कार्यों के साथ-साथ अपने दीर्घावधि लक्ष्यों का संकेत दे दिया है, जबकि चीन के अपवाद को छोड़कर, ज्यादातर विकासशील देशों के आधिकारिक तौर पर केवल अल्पकालिक लक्ष्य हैं।

निस्संदेह, पेरिस कन्वेंशन के लिए वर्तमान तैयारियों में, चीन और भारत सहित विकासशील देशों ने जलवायु कार्यवाही की एक विस्तृत श्रृंखला प्रस्तुत की है, जिसे वे प्रस्तावित राष्ट्रीय स्तर निर्धारित अंशदान के माध्यम से लागू करेंगे, जिसमें योगदान देने के लिए सभी राष्ट्रों ने सहमति व्यक्त की है। राष्ट्रों को यह निर्धारित करने की अनुमति देने की, कि वे क्या महसूस करते हैं कि वे क्या कर सकते हैं, इस प्रक्रिया के साथ समस्या यह है कि यह प्रक्रिया विकसित राष्ट्रों को यह अनुमति देती है कि वे उस तरह की कार्यवाही के उपक्रमों का दावा कर सकते हैं कि उन्हें क्या वास्तव में करना चाहिए। इस तरीके में खतरा यह है कि समय के साथ विकासशील देशों पर वास्तविक बोझ, जिनमें भारत अग्रणी है, वास्तव में बहुत

अधिक बढ़ जाएगा, जिसे आवधिक समीक्षा के माध्यम से ऊपर से ऊपर बढ़ाया जाता रहेगा। ऐसा विशेष रूप से इसलिए है क्योंकि विकसित देशों ने अल्प अवधि के कार्यों के साथ-साथ अपने दीर्घावधि लक्ष्यों का संकेत दे दिया है, जबकि चीन के अपवाद को छोड़कर, ज्यादातर विकासशील देशों के आधिकारिक तौर पर केवल अल्पकालिक लक्ष्य हैं।

ऐसे में महत्वपूर्ण सवाल यह है कि विकासशील देश, खासकर भारत, एक समानतापूर्ण वैश्विक जलवायु समझौते के दायरे के भीतर, अपने लिए बोझ का एक अच्छा खासा हिस्सा लेकर किस तरह भावी विकास के लिए अपनी सामरिक आवश्यकताओं को सुनिश्चित कर सकते हैं? इस लेख में आगे हम एक ऐसा दृष्टिकोण प्रस्तुत कर रहे हैं, जिससे इन प्रश्नों के समाधान को समझने में सहुलियत होगी।

कार्बन बजट दृष्टिकोण

आईपीसीसी पांचवीं आकलन रिपोर्ट में, कार्य समूह 1 की रिपोर्ट में वैश्विक कार्बन बजट का प्रमुख ढंग से उल्लेख किया गया है। मूलभूत वैज्ञानिक विचार यह है कि एक निर्धारित अवधि में वैश्विक तापमान में वृद्धि इस अवधि में ग्रीन हाउस गैसों के संचयी वैश्विक उत्सर्जन के लिए लगभग समानुपातिक है। तापमान में यह वृद्धि वह है जो इस अवधि के दौरान कि अधिकतम तात्कालिक वृद्धि हुई है। पहले के तरीकों में उत्सर्जन में वृद्धि और गिरावट की वार्षिक दर पर ध्यान दिया जाता था (और एक शीर्ष वर्ष की अवधारणा थी, जिसमें वार्षिक उत्सर्जन अधिकतम तक पहुंचता था) और तापमान में वृद्धि से आशय उस संतुलित तापमान से था, जो ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन बंद होने के बाद (और वातावरण के संतुलन की स्थिति में पहुंचने के बाद) भविष्य में होना था। हालांकि अब यह वैज्ञानिक रूप से स्पष्ट है कि उत्सर्जनों में वृद्धि और गिरावट की दर के विवरण अधिकतम तापमान में वृद्धि का निर्धारण करने में महत्वपूर्ण तत्व नहीं हैं, बल्कि प्रासंगिक मात्रा ग्रीन हाउस गैसों के कुल उत्सर्जन की है। इस तरीके में, कार्बन चक्र का ब्यौरा प्रासंगिक नहीं है (जैसे कि महासागरों और जीवमंडल द्वारा ग्रीन हाउस गैसों का अवशोषण और शेष गैसों की वायुमंडलीय सांद्रता) और प्रासंगिक मात्रा प्रत्यक्ष संचयी उत्सर्जन ही है।

यह तरीका यह गणना करने का एक तैयार शुद्ध, नीति के अनुकूल साधन प्रदान करता है कि कितने संचयी उत्सर्जन की विश्व स्तर पर अनुमति दी जा सकती है। यह वैश्विक कार्बन बजट है। इसके बाद इस बजट से प्रत्येक राष्ट्र का हिस्सा निर्धारित करना एक साधारण सी बात रह जाती है, जो कुछ वैध समानता सिद्धांतों पर आधारित होता है, जिनमें प्रति व्यक्ति का आधार वास्तव में सबसे सरल होता है, जो अतीत के एक आधार वर्ष से संचयी उत्सर्जनों पर ध्यान देता है, (जैसे 1850, जिसे कई लोगों द्वारा ऐतिहासिक जिम्मेदारी के निर्धारण के लिए एक आधार वर्ष के रूप में लिया गया है, या 1870, जिसे आईपीसीसी ने अतीत के उत्सर्जन का निर्धारण करने के लिए इस्तेमाल किया है)। वैश्विक कार्बन बजट, या वैश्विक कार्बन क्षेत्र की एक समान हिस्सेदारी प्रदान करने का यह तरीका, मूल रूप से पूरी पृथ्वी को (और न केवल वातावरण को, क्योंकि कार्बन चक्र महासागरों और स्थलीय भू और जैव क्षेत्रों के बीच भी चलता है) कम से कम कार्बन के मामले में एक वैश्विक कॉमन्स के रूप में लेने के सिद्धांत पर निर्भर करता है।

इस वैश्विक कार्बन बजट दृष्टिकोण को आईपीसीसी। आर5 के अलावा भी व्यापक वैज्ञानिक समर्थन मिला है। अमेरिका की राष्ट्रीय अनुसंधान परिषद की वातावरण की ग्रीनहाउस गैसों की सांद्रता के स्थिरीकरण लक्ष्यों पर समिति (एनआरसी, 2011) ने इसका काफी विस्तार से अध्ययन किया और राष्ट्रीय अनुसंधान परिषद द्वारा 2011 में अमेरिकी कांग्रेस को सौंपी गई *अमेरिका के जलवायु विकल्प* शीर्षक रिपोर्ट में इस्तेमाल मूलभूत नीतिगत ढांचा भी कार्बन बजट दृष्टिकोण ही था। यही मूलभूत वैज्ञानिक दृष्टिकोण जर्मन काउंसिल फॉर ग्लोबल चेंज और चाइनीज अकादमी ऑफ सोशल साइंसेज (पैन, 2009) से संबंधित चीनी वैज्ञानिकों द्वारा भी इस्तेमाल किया गया है। अभी हाल ही में अग्रणी जलवायु वैज्ञानिकों ने नेचर पत्रिका में एक टिप्पणी में इसी कार्बन बजट दृष्टिकोण का समर्थन किया है।

वास्तविक वैश्विक कार्बन बजट इस संभावना पर निर्भर करता है कि (1870 से) संचयी उत्सर्जनों की दी गई मात्रा से वैश्विक तापमान में वृद्धि 2 डिग्री सेल्सियस से अधिक नहीं होगी, इस वैश्विक तापमान में वृद्धि पर 2009 में कोपेनहेगन कन्वेंशन में सहमति हुई थी और अगले वर्ष इसकी कैनकन में पुष्टि की गई थी। वैश्विक तापमान में वृद्धि 2 डिग्री सेल्सियस से अधिक न होने की 67% से 50% तक की संभावना के लिए, वैश्विक कार्बन बजट 1212 गीगा टन कार्बन से लेकर

अनुबंध-1 देशों के लिए कार्बन बजट पात्रताएं (1870-2100) [जीटीसी] पिछले गैर कॉर्बन डाइ ऑक्साइड उत्सर्जनों के साथ जनसंख्या, सकल घरेलू उत्पाद, मानव विकास सूचकांक आधार वर्ष-2011

	अनुबंध-1 देशों के लिए कार्बन बजट पात्रताएं (1870-2100) [जीटीसी]	अनुबंध-1 देशों का विगत उत्सर्जन (1870-2011) [जीटीसी]	अनुबंध-1 देशों द्वारा कार्बन क्षेत्र का अतिक्रमण- अनुबंध-1 देशों के लिए भविष्य के लिए उपलब्ध कार्बन क्षेत्र (2012-2100) [जीटीसी]
साधारण प्रति व्यक्ति पात्रता	210	492	-281
प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद के आधार पर भारित प्रति व्यक्ति पात्रता	198		-294
गैर आय एचडीआई के आधार पर भारित प्रति व्यक्ति पात्रता	160		-332

992 गीगा टन (जीटीसी) के बीच रहता है।

992 या 1212 जीटीसी का यह बजट पूरे विश्व के लिए उत्सर्जन की भौतिक सीमा है। सभी देशों के अतीत के उत्सर्जन इस बजट का एक हिस्सा समाप्त कर चुके हैं। अनुमान है कि 445 से 585 जीटीसी (औसत 515 जीटीसी) पहले से ही उत्सर्जित कर दिया गया है। अगर हम अतीत में गैर-कार्बन डाइऑक्साइड ग्रीन हाउस गैसों उत्सर्जन को ध्यान में रखें, तो यह आंकड़ा 515 जीटीसी से बढ़ कर 667 जीटीसी हो जाता है। भविष्य में होने वाले उत्सर्जन बची-खुची कार्बन गुंजाइश को समाप्त करने में और योगदान देंगे। लिहाजा किसी भी देश द्वारा ततमंद करने वाला कोई घटक, प्रत्यक्ष रूप से या परोक्षरूप से इस कार्बन बजट पर एक दावा है। उदाहरण के लिए, 2030 तक उत्सर्जन तीव्रता में 33% की कमी से भारत का अर्थ हुआ (7 प्रतिशत की सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर के लिए) 18 जीटीसी का संचयी उत्सर्जन 2012 और 2030 के बीच करना। अमरीका द्वारा 2025 में 2005 के स्तर से 26% उत्सर्जन कम करने का अर्थ हुआ 2012 और 2025 के बीच 19 जीटीसी का संचयी उत्सर्जन करना।

जब एक बार कार्बन बजट एक देश या देशों के समूह द्वारा प्रयोग किया जाता है, तो यह दूसरों के लिए उपलब्ध नहीं रह जाता है। इसलिए अगर कार्बन बजट के संदर्भ में अब किसी देश द्वारा एक दीर्घकालिक लक्ष्य घोषित नहीं किया जाता है, तो भविष्य में इस कार्बन बजट का एक पर्याप्त हिस्सा प्राप्त करना मुश्किल साबित हो सकता है, चूंकि अन्य देश, विशेष रूप से सभी बड़े उत्सर्जक पहले से ही वैश्विक कार्बन बजट के अपने हिस्से का दावा कर चुके हैं।

सभी देशों के बीच 1870 और 2100 के बीच कुल उपलब्ध कार्बन बजट का एक साधारण प्रति व्यक्ति भागफल, अनुलग्नक-1 देशों में 210 जीटीसी की *कार्बन बजट पात्रता* में निकलता है, जो पहले से ही लगभग 380 जीटीसी (उनकी पात्रता से लगभग 169 जीटीसी अधिक) 2012 में ही उत्सर्जित कर चुके हैं। इस प्रकार विकसित देश पहले ही अतीत में कार्बन बजट के अपने उचित हिस्से से अधिक इस्तेमाल कर चुके हैं। इसे नीचे दी गई तालिका में दर्शाया गया है, जहां हमने उन परिणामों को भी प्रदर्शित किया है, अगर हम आधार के रूप में साधारण प्रति व्यक्ति आवंटन का उपयोग न करें, बल्कि प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद के विचार या प्रत्येक देश के मानव विकास सूचकांक सहित अन्य आधारों का भी आवंटन के आधार के रूप में उपयोग करें।

तालिका 1 से स्पष्ट है कि यदि हम साधारण प्रति व्यक्ति के अलावा किसी अन्य मापदंड का उपयोग करते हैं, तो विकसित देशों द्वारा कार्बन क्षेत्र का अतिक्रमण और भी अधिक हो जाता है। इससे भी बढ़कर, अब विकसित देशों द्वारा प्रस्तुत आईएनडीसी में भविष्य के लिए बचे-खुचे कार्बन क्षेत्र में उनके उचित हिस्से से भी अधिक का दावा करने का एक अनुचित प्रयास किया गया है, जैसा कि अमेरिका द्वारा प्रस्तुत निहित संचयी उत्सर्जन के हिसाब से संक्षेप में स्पष्ट होता है। इस पर रिपोर्ट में आगे मुख्य विकसित देशों के एक विश्लेषण में चर्चा की गई है।

जब एक बार कार्बन बजट एक देश या देशों के समूह द्वारा प्रयोग किया जाता है, तो यह दूसरों के लिए उपलब्ध नहीं रह जाता है। इसलिए अगर कार्बन बजट के संदर्भ में अब किसी देश द्वारा एक दीर्घकालिक लक्ष्य घोषित नहीं किया जाता है, तो भविष्य में इस कार्बन बजट का एक पर्याप्त हिस्सा प्राप्त करना मुश्किल साबित हो सकता है, चूंकि अन्य देश, विशेष रूप से सभी बड़े उत्सर्जक पहले से ही वैश्विक कार्बन बजट के अपने हिस्से का दावा कर चुके हैं। यदि विशेष रूप से भारत अब एक दीर्घावधि लक्ष्य की घोषणा नहीं करता है, तो वह उस समय, जब तक हमारी ऊर्जा और विकास का भविष्य उत्सर्जन के संदर्भ में स्पष्ट होता है, उपलब्ध एक पर्याप्त कार्बन बजट नहीं होने के जोखिम में आ जाएगा। भविष्य के वैश्विक कार्बन बजट के संदर्भ में, जिस हिस्से पर आज दावा नहीं किया जाएगा, वह उपलब्ध नहीं रह जाएगा, क्योंकि दूसरे प्रभावी ढंग से इसका एक प्रमुख हिस्सा उत्सर्जित कर चुके होंगे। इन संदर्भों से यह आवश्यक है कि भारत वैश्विक कार्बन बजट पर अपने दावे के रूप में अपने दीर्घकालिक विकास के भविष्य को पर्याप्त रक्षात्मक उपायों के साथ सुनिश्चित करे।

इस वैश्विक कार्बन बजट में भारत के लिए एक उचित हिस्सा क्या होगा? यहां हमें इस तथ्य को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि विकसित देशों द्वारा कार्बन क्षेत्र के अतिक्रमण से यह सुनिश्चित हो जाता है कि भारत सहित किसी भी विकासशील देश को, कार्बन क्षेत्र के अपने उचित हिस्से के वास्तविक भौतिक उपयोग का अवसर न मिल सके। जो भौतिक रूप से उपलब्ध है, वह बाकी बचे कार्बन क्षेत्र का केवल उचित हिस्सा है। इस दृष्टिकोण से 1870-2100 की अवधि के लिए भारत का वैध दावा लगभग 182-186 जीटीसी होगा, जो इस पर निर्भर करेगा कि गैर कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जनों को शामिल किया जाता है या नहीं। हालांकि, समानता के आधार पर भौतिक रूप से सुलभ जो होगा, वह 83 से लेकर 109 जीटीसी तक होगा, जो इस पर निर्भर करेगा कि गैर कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन शामिल किया जाता है या नहीं। भौतिक रूप से सुलभता और समग्र पात्रता के बीच की खाई विकसित विश्व से प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और वित्तीय सहायता की गणना का आधार बन सकती है, जो भारत के लिए वैध देय होगी। इस तरह का एक पात्रता परिप्रेक्ष्य सभी देशों के लिए विकसित किया जा सकता है, जो अन्य प्रकाशनों में किया गया है। विकासशील देशों में कुछेक देशों को तेल या अन्य संसाधनों के निष्कर्षण पर अपनी ऐतिहासिक निर्भरता के कारण उनके उचित हिस्से से अधिक कार्बन क्षेत्र की एक छोटी पात्रता की आवश्यकता हो सकती है (देखें विंकलर 2011 में कानिटकर आदि)।

वैश्विक कार्बन बजट में भारत के लिए एक उचित हिस्सा क्या होगा? यहां हमें इस तथ्य को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि विकसित देशों द्वारा कार्बन क्षेत्र के अतिक्रमण से यह सुनिश्चित हो जाता है कि भारत सहित किसी भी विकासशील देश को, कार्बन क्षेत्र के अपने उचित हिस्से के वास्तविक भौतिक उपयोग का अवसर न मिल सके। जो भौतिक रूप से उपलब्ध है, वह बाकी बचे कार्बन क्षेत्र का केवल उचित हिस्सा है।

कई अन्य प्रस्ताव, विशेष रूप से अन्य विकासशील देशों से प्राप्त प्रस्ताव, जलवायु

परिवर्तन को मंद करने की किसी भी व्यवस्था के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत के रूप में समानता पर ध्यान केंद्रित करते हैं और विकसित और विकासशील देशों के बीच जिम्मेदारी के एक भिन्न आवंटन का प्रस्ताव करते हैं। जलवायु परिवर्तन को मंद करने के प्रस्तावों को मोटे तौर पर दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है- स्टॉक आधारित प्रस्ताव और प्रवाह आधारित प्रस्ताव। प्रवाह आधारित प्रस्ताव मंदन में समानता सुनिश्चित नहीं कर सकते, क्योंकि भिन्न-भिन्न उत्सर्जन प्रक्षेप पथों में भिन्न-भिन्न संचयी उत्सर्जन निहित होता है। प्रवाह आधारित प्रस्ताव, जो मंदन के बोझ को *सामान्य कामकाज से विचलन प्रक्षेप पथ के रूप में* बांटता है, वह और भी अधिक समस्यास्पद है, क्योंकि मंदन का बोझ पूरी तरह *सामान्य कामकाज* प्रक्षेप वक्र के द्वारा निर्धारित किया जाता है, जिसके काफी मनमाने निर्धारण की संभावना है। इस तरह का मनमाने ढंग से निर्धारण मंदन के बोझ को महत्वपूर्ण स्तरों पर कम या अधिक कर सकता है। स्टॉक आधारित प्रस्ताव, जो शमन लक्ष्यों को आवंटित करने के लिए संचयी उत्सर्जन के आधार का उपयोग करते हैं, वे अधिक दृढ़ और वैज्ञानिक हैं। जैसा कि हमने पहले उल्लेख किया है, स्टॉक आधारित प्रस्तावों को, विशेष रूप से हाल ही में वैज्ञानिक साहित्य में महत्वपूर्ण समर्थन प्राप्त हुआ है लेकिन कई विकसित देशों के इस तरह के प्रस्ताव ऐतिहासिक जिम्मेदारी को नजरअंदाज करते हैं।

हालांकि दुर्भाग्य से, यहां तक कि विकासशील देशों के पक्ष में भी, प्रस्तावों के मुख्य भाग में मंदन दायित्वों के वितरण के लिए आधार के रूप में भूमिका (राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान) है। इस प्रकार मंदन के लिए एक बॉटम-अप दृष्टिकोण अपनाने का एक अंतर्निहित समझौता है- जिसमें पक्ष स्वेच्छा से अपने मंदन कार्यों की सीमा और उनका स्वरूप प्रस्तुत कर रहे हैं- किसी तरह की चर्चा के बिना कि यह कैसे सुनिश्चित किया जाएगा कि इन कार्यों का कुल योग समानता को सुनिश्चित करते हुए साथ-साथ ही तापमान वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे सीमित करने के लिए आवश्यक कुल प्रयासों के बराबर होता है।

अंतत: जो वैश्विक जलवायु समझौता होगा, क्या कार्बन बजट दृष्टिकोण उसका वास्तविक रूप हो सकता है? यह भविष्यवाणी करना कठिन है और फिलहाल तो, विकसित देश मजबूती से इसके खिलाफ हैं, जबकि कई विकासशील देश इस प्रस्ताव के दायरे को पूरी तरह से समझ नहीं सके हैं। फिर भी, विकसित देश संचयी उत्सर्जन सीमा के बारे में बहुत बारीकी से समझते हैं और निस्संदेह वे इसका प्रयोग किसी भावी स्थिति समझौता वार्ता में करेंगे। हमारा आग्रह है कि भारत के लिए, यह दृष्टिकोण कम से कम वह न्यूनतम मानदंड होना चाहिए, जिसके द्वारा अन्य प्रस्तावों और मंदन कार्यों की वैधता की जांच की जानी चाहिए और भारत की अपनी जरूरतों पर उनके संबंधित प्रभावों का उचित मूल्यांकन होना चाहिए। ❑

संदर्भ

फ्रामे, डी.जे., मैसी, ए.एच. और एलन, एम (2014): क्यूमुलेटिव इमीशन्स एंड क्लाइमेट पॉलिसी. नेचर जियोसाइंस, 7: 692-693।

नेशनल रिसर्च काउंसिल (2011): क्लाइमेट स्टेबिलाइजेशन टारगेट्स: इमीशन्स, कन्संट्रेशन्स, इम्पैक्ट्स ओवर डेकेड्स टू मिलेनिया. वाशिंगटन।

नेशनल रिसर्च काउंसिल (2011): अमेरिका जक्लाइमेट च्वाइसेज, नेशनल एकेडमीज प्रेस.

पैन जिया हुआ और यिंग चेन (2009): द कार्बन बजट स्कीम: एनइन्स्टिट्यूशनल फ्रेमवर्क फॉर ए फेयर एंड सस्टेनेबल वर्ल्ड क्लाइमेटरिजिम, सोशल साइंसेज इन चाइना।

WBGU **(2009):** सॉल्विंग द क्लाइमेट डिलेमा, द कार्बन बजट एप्रोच, www.wbgu.de/fileadmin/templates/dateien/... / wbgu_sn2009_en.pdf

विंकलर व अन्य (2011): ए साउथ अफ्रीकन एप्रोच- रिस्पान्सबिलिटी, कैपेबिलिटी एंड सस्टेनेबल डेवलेपमेंट, इक्यूटेबल एक्सेस टू सस्टेनेबल डेवलेपमेंट: कॉन्ट्रीब्यूशन टू द बॉडी ऑफ साइंटिफिक नॉलेज- में प्रकाशित. बेसिक विशेषज्ञों द्वारा प्रस्तुत एक दस्तावेज. कार्बन बजट दृष्टिकोण पर और संदर्भ।

कानिटकर टी., जयरामन टी., डिसूजा एम. और पुरकायस्थ पी., (2013): कार्बन बजट्स फॉर क्लाइमेट चेंज मिटीगेशन-एळ। डै बेस्ड इमीशन्स मॉडल . करेंट साइंस, 104 (9), 1200-1206।

कानिटकर टी., जयरामन टी., डिसूजा एम. (2011): ''इक्यूटी एंड बर्डन शेयरिंग इन इमीशन सिनारियोज: ए कार्बन बजट एप्रोच. हैंडबुक ऑफ क्लाइमेट चेंज एंड इंडिया: डेवलपमेंट, पॉलिटिक्स एंड गवर्नेंस में प्रकाशित, दुबाश एन.के. (सं), नवंबर 2011, रूटलेज http://www.cprindia.org/seminars-conferences/3364-handbook-climate-change-and-india-development-politics-and-governance

जयरामन टी., कानिटकर टी., डिसूजा एम. (2011): इक्यूटेबल एक्सेस टू सस्टेनेबल डेवलेपमेंट: एन इंडियन एप्रोच, बेसिक विशेषज्ञों द्वारा प्रस्तुत एक दस्तावेज - इक्यूटेबल एक्सेस टू सस्टेनेबल डेवलेपमेंट: कॉन्ट्रीब्यूशन टू द बॉडी ऑफ साइंटिफिक नॉलेज- में प्रकाशित. विंकलर ईटीएएल (2011). ww.erc.uct.ac.za/Basic_Experts_Paper.pdf

ग्लोबलकार्बन बजट्स एंड बर्डन शेयरिंग इन मिटीगेशन एक्शन्स: डिस्कशन पेपर

पूरक नोट्स और सारांश रिपोर्ट, जून 2010

http://climate.tiss.edu/attachments/carbon-budgets-2010/at_download/file

कानिटकर टी., जयरामन टी., डिसूजा एम. और पुरकायस्थ पी., रघुनंदन डी., तलवार आर. (2009): 'हाऊ मच कार्बन स्पेस डू वी हैव?' कार्बन फिजीकल कन्सट्रेंट्स ऑन इंडियाज क्लाइमेट पॉलिसी एंड इट्स इम्प्लीकेशन्स', इकॉनामिक एंड पोलिटिकल वीकलीवॉल्यूम XLIV नं 41,10 अक्टूबर 2009 http://www.epw.in/epw/uploads/articles/14044.pdf

योजना

आगामी अंक

जनवरी 2016

शिक्षा जगत

आर्थिक विकास और जलवायु परिवर्तन की कीमत

पूर्णमिता दासगुप्ता

भारत का आईएनडीसी बताता है कि 2050 तक जलवायु परिवर्तन से भारत में आर्थिक क्षति तथा नुकसान वार्षिक रूप से इसकी जीडीपी का 1.8 प्रतिशत के लगभग होगा। उदार निम्न कार्बन के विकास के लिए शमन गतिविधियों की लागत 2011 के मूल्यों पर 2030 तक लगभग 834 बिलियन अमेरिकी डॉलर होगा। आईएनडीसी के अनुसार, प्रारंभिक अनुमान इंगित करते हैं कि कृषि, वनीकरण, मत्स्य पालन के आधारभूत संरचना, जल संसाधनों तथा पारितंत्र में अनुकूलन के लिए 1015 से 2030 के बीच लगभग 206 अमेरिकी बिलियन डॉलर (2014-15 के मूल्य पर) की आवश्यकता होगी तथा नाजुक स्थिति एवं आपदा प्रबंधन को सशक्त करने के लिए अतिरिक्त निवेश की आवश्यकता होगी। भारत में, जलवायु परिवर्तन तथा राष्ट्रीय मिशन पर राष्ट्रीय कार्रवाई योजना के फ्रेमवर्क के भीतर ही ज्यादातर अनुकूलन रणनीतियां बनाई जाती हैं

आर्थिक विकास के सिद्धांत और आख्यानों/माल्थसवादी, शास्त्रीय, मार्क्सवादी तथा स्टिगलिट्ज आयोग आदि ने इस बात की समझ का निर्माण किया है कि आखिर आर्थिक विकास है क्या और वो कौन से सबसे महत्वपूर्ण कारक हैं, जो इसे निर्धारित करते हैं तथा आर्थिक विकास के आकलन के मुख्य आयाम क्या हैं? आर्थिक विकास की प्रक्रिया में प्राकृतिक संसाधनों द्वारा निभाई गई भूमिका तथा इनकी प्रासंगिकता के इन सवालों के जवाब में कुछ भी नया नहीं है। आर्थिक विकास को समझने में जनसंख्या, मानव पूंजी, सामाजिक पूंजी, संसाधन निधि, प्रौद्योगिकी, संस्थाएं तथा राजनीतिक अर्थव्यवस्था ने इसे महत्वपूर्ण रूप से दर्शाया है। विकास में प्रकृति की भूमिका को समझने में जलवायु परिवर्तन ने खासकर

जलवायु परिवर्तन तथा इसके प्रभाव के प्रति कुछ निश्चित और विचित्र विशेषताओं जैसे एक महत्वपूर्ण अतिरिक्त आयाम जोड़ा है। जलवायु परिवर्तन के इस विज्ञान तथा आम सहमति के उच्च स्तर की एक उन्नत समझ ने ग्लोबल वार्मिंग के विपरीत परिणाम को लेकर पिछले दशक में वैज्ञानिकों के बीच अपनी पहुंच बनाई है तथा इसने आर्थिक विकास से लेकर विकास प्रक्रिया की निरंतरता तक पर ध्यान केंद्रित करने की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया है। जिस तरह से निरंतर विकास की परिभाषा विकसित हुई है, उसमें भी यह प्रतिबिंबित होता है। निरंतर विकास के व्यापक पैमाने पर उपयोग होने वाली अभिव्यक्ति वही है, जो यूएनडीपी (1995) में है और वह है: विकास का वह रूप जो वर्तमान की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, मगर साथ में इस बात की चिंता कि आने वाली पीढ़ी की आवश्यकता की पूर्ति किस तरह होगी (पर्यावरण तथा विकास पर विश्व आयोग, 1987) तथा भविष्य के विकास के लिए प्राकृतिक परिसंपत्तियों के संरक्षण की कल्पना भी की गई है। अभी हाल ही में जलवायु परिवर्तन पर अपनाए गए सतत विकास के लक्ष्यों (एसडीएस) (यूएन 2015) में इस लक्ष्य को विशेष रूप से शामिल किया गया है कि जितनी जल्दी हो सके, जलवायु परिवर्तन तथा इससे पड़ने वाले प्रभाव से पार पाने के लिए कदम उठाए जाएं। एसडीजी के जलवायु लक्ष्य के अंतर्गत चर्चित पहला उद्देश्य सभी देशों में जलवायु से संबंधित खतरनाक एवं प्राकृतिक आपदा के लचीलेपन तथा अनुकूलन सक्षमता को बढ़ाना है। वास्तव में, अन्य लक्ष्यों के ज्यादातर पहलू आपस में पर्यावरण के साथ जुड़े हुए हैं तथा इन सबकी एक ही मांग है कि प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण हो तथा उनका टिकाऊ उपयोग हो। मानव समाज में प्रगति के सटीक पैमाने के रूप में सोच विचार के साथ यह मांग उसकी बेहतरी के लिए रखी गई है।

आईपीसीसी की हालिया रिपोर्ट में अनुमानित रूप से जलवायु परिवर्तन के दिखने वाले तथा संभावित प्रभाव इस बात के प्रमाण देते हैं कि विश्वभर के क्षेत्रों के लिए जलवायु परिवर्तन एक खतरा है। उन समुदायों तथा पर्यावरण तंत्र के लिए भविष्य में होने वाले ये परिणाम शायद सबसे ज्यादा खतरनाक हों, जो पहले से ही खतरे के मुहाने पर हैं। इनमें गरीब, ग्रामीण क्षेत्रों के वो लोग जो अपनी आजीविका के लिए प्राकृतिक संसाधन पर

लेखिका आर्थिक विकास संस्थान, दिल्ली में पर्यावरण अर्थशास्त्र की अध्यक्ष व कार्यकारी प्रमुख हैं। वह ब्रिटेन के कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय तथा अमेरिका के जॉन्स हॉपकिंस विश्वविद्यालय में अतिथि प्राध्यापक भी हैं। संप्रति-जलवायु परिवर्तन अनुकूलन नीतियों पर शोध कर रही हैं। इनमें ग्रीनहाऊस गैस उत्सर्जन परिदृश्य को प्रमुखता दी जाती है। ईमेल: purnamita.dasgupta@gmail.com

निर्भर हैं तथा जो पारितंत्र एवं प्रजातियां पहले से ही नाजुक स्थिति में हैं। खतरे का स्तर निम्न से उच्च दिशा की ओर है तथा यह क्षेत्र और इलाकों के हिसाब से एक दूसरे से भिन्न भी हैं। उदाहरण के लिए, कोरल रीफ का खतरा बहुत उच्च स्तर का है। यह खतरा 1डिग्री सेंटीग्रेड तापमान में भी है, जहां औसतन ज्यादातर क्षेत्रों के लिए फसल उत्पादन का जोखिम उच्च स्तर तक नहीं पहुंचता है तथा फसलें 2 डिग्री सेंटीग्रेड या उच्च तापमान पर भी बढ़ती है (आईपीसीसी एआर5 2014)।

बढ़ता तापमान श्रम उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभाव डालेगा तथा भारत में खतरनाक स्तर की गर्मी से लू का बड़ा खतरा पैदा होगा और ये खतरा उन श्रमिकों के लिए ज्यादा होगा, जो निर्माण कार्यों तथा कृषि गतिविधियों के कारण घर के बाहर कई-कई घंटों तक काम कर रहे होंगे। ऐसे कई क्षेत्र होंगे, जिस पर आर्थिक रूप से बुरा असर पड़ेगा।

एशिया के लिए तीन महत्वपूर्ण जोखिम चिह्नित किए गए हैं। इनमें शामिल हैं आधारभूत संरचना, आजीविका तथा आवास को क्षति पहुंचाने वाली बढ़ती बाढ़, ऊष्मा से संबंधित मानव मृत्यु-दर तथा सूखे के कारण भोजन तथा पानी की कमी (आईपीसीसी एआर5 2014)। संक्षेप में, जलवायु संबंधित जोखिम की मौजूदा समझ के अनुसार, जलवायु परिवर्तन के कारण पड़ने वाले संभावित प्रभाव भारत की अर्थव्यवस्था के विकास और उसकी संवृद्धि पर कुछ इस तरह से नकारात्मक होंगे कि उससे कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं होगा। इनमें से कुछ संभावित प्रभाव तो निकट भविष्य में ही महसूस किए जा सकेंगे (2040 तक), जबकि कुछ अनुमानित प्रभाव लंबे समय के दरम्यान (2100 तक) देखने को मिलेंगे। बाढ़ का जोखिम तथा उससे संबंधित नुकसान के लिहाज से भारत चोटी के उन 20 देशों में है, जहां इस तरह की परेशानियां चरम तक जाएंगी।

2050 तक इन परेशानियों में 80 प्रतिशत तक की बढ़ोत्तरी हो सकती है तथा समुद्र स्तर के बढ़ने से यह खतरा और बड़ा होगा। कोलकाता तथा मुंबई जैसे दो बड़े शहरों में जान माल का बड़ा नुकसान होगा। बढ़ता तापमान श्रम उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभाव डालेगा तथा भारत में खतरनाक स्तर की गर्मी से लू का बड़ा खतरा पैदा होगा और ये खतरा उन श्रमिकों के लिए ज्यादा होगा, जो निर्माण कार्यों तथा कृषि गतिविधियों के कारण घर के बाहर कई-कई घंटों तक काम कर रहे होंगे। ऐसे कई क्षेत्र होंगे, जिस पर आर्थिक रूप से बुरा असर पड़ेगा। ऐसे क्षेत्रों में समुद्र तट तथा पर्वतीय पर्यटन होंगे एवं इन इलाकों में मलेरिया तथा डायरिया जैसी बीमारियों से स्वास्थ्य पर बुरा असर होगा।

जलवायु परिवर्तन से भारत पर जो ठोस आर्थिक प्रभाव पड़ेंगे, वो हैं–देश के भौगोलिक क्षेत्रों में निम्न स्तर की अनुकूलन क्षमता वाले क्षेत्रों का विकास, आजीविका आधारित प्राकृतिक संसाधन पर बड़ी संख्या में निर्भरता तथा कृषि पर प्रभाव। वायु तापमान में वृद्धि के कारण खाद्य उत्पादन प्रणालियों तथा खाद्य सुरक्षा पर पड़ने वाले अनुमानित असर से संबंधित अध्ययनों से आर्थिक प्रभावों की विशालता और व्यापकता का अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है। अनुमान है कि चारा से संबंधित अनाज का उत्पादन 2020 तक 2-14 प्रतिशत तक गिर जाएगा तथा 2050 तक इसके उत्पादन में और भी जबरदस्त गिरावट देखी जाएगी, जबकि सबसे विश्वसनीय अनुमानों के मुताबिक, भारतीय गंगा के मैदान में गेहूं के उत्पादन में 51 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की जाएगी। उत्तरी भारत (अक्टूबर), दक्षिण भारत (अप्रैल, अगस्त) तथा पूर्वी भारत (मार्च-जून) में धान की खेती के विकास के विभिन्न चरणों में आवश्यक तापमान को लेकर दावा किया जा रहा है कि मौजूदा तापमान पहले ही नाजुक स्तर तक पहुंच चुका है। हाल फिलहाल में किए गए एक अध्ययन में अनुमान जताया गया है कि 2050 तक खाद्य अनाजों के उत्पादन में 18 प्रतिशत तक गिरावट आ जाएगी (दासगुप्ता 2013)।

संक्षेप में, अनुमान किया गया है कि ये प्रभाव व्यापक क्षेत्र वाले होंगे तथा यह स्पष्ट रूप से आर्थिक बोझ डालेगा। नुकसान के स्तर उन्हीं कारकों द्वारा प्रभावित हैं, जो कारक होने वाले खतरों की संभावना को प्रभावित करते हैं तथा अन्य हस्तक्षेपों द्वारा उन प्रभावों को उस समय कम जरूर किया जा सकता है, जब उस तरह की घटनाएं घटती हैं। पहला, उन गतिविधियों की व्याख्या करता है, जिससे ग्रीन हाउस गैस के उत्सर्जन कम (शमन) हो सकता है तथा बाद के पहलू में वो कार्रवाई शामिल हैं, जिससे इन प्रभावों के नाजुकपन को कम कर सकता है या जिससे सहयोगात्मक क्षमता (अनुकूलन) बढ़ सकती है। उपभोग संरचना, जनसंख्या वृद्धि, प्रद्यौगिकी तथा ज्ञान की उपलब्धता तथा संस्थागत सामर्थ्य जैसे कुछ ऐसे घटक हैं, जो अनुकूलन या शमन जैसी क्रियाओं को प्रभावित करते हैं। संसाधन आवंटन के प्राथमिकीकरण के सिलसिले में आर्थिक निर्णय निर्माण तथा आर्थिक नीति जलवायु की चुनौती को निर्धारित करने के महत्वपूर्ण उपकरण हैं। अनुमानित प्रभावों तथा उचित शमन एवं अनुकूलन हासिल करने के लिए आवश्यक संसाधनों की लागत निर्णय निर्माण में एक महत्वपूर्ण घटक है।

जलवायु परिवर्तन से संबंधित आर्थिक लागत पर विभिन्न तरीके से विमर्श किया जा सकता है। एक तरफ, विपरीत प्रभाव अर्थव्यवस्था के लिए नुकसान है, जिसका सावधानीपूर्वक आकलन किया जाना बाकी है। दूसरी तरफ, शमन तथा अनुकूलन गतिविधियों के अंगीकरण के माध्यम से नुकसान को कम करने वाली लागत हैं। उल्लेखनीय है कि दोनों एक ही बात नहीं है। मौसम विज्ञान सबूत उपलब्ध कराता है कि पड़ने वाले प्रभाव को पहले से ही अनुभव किया जा रहा है, जिनमें से कुछ अनुत्क्रमणीय हैं तथा उष्मीकरण की कुछ मात्रा अनिवार्य है। यहां तक कि प्रभावों को कम करने के लिए उठाए जाने वाले कदम की खातिर संसाधन की कमी नहीं थी लेकिन इसकी अपनी सीमाएं हैं कि अनुकूलन क्या-क्या हासिल कर सकता है।

जलवायु परिवर्तन से संबंधित आर्थिक लागत पर विभिन्न तरीके से विमर्श किया जा सकता है। एक तरफ, विपरीत प्रभाव अर्थव्यवस्था के लिए नुकसान है, जिसका सावधानीपूर्वक आकलन किया जाना बाकी है। दूसरी तरफ, शमन तथा अनुकूलन गतिविधियों के अंगीकरण के माध्यम से नुकसान को कम करने वाली लागत हैं।

उदाहरण के लिए, तापमान संबंधित मृत्यु दर के लिए खतरे का स्तर बहुत उच्च है, चाहे लंबी अवधि में एक काल्पनिक रूप से पारिभाषित उच्च अनुकूलन स्थिति क्यों न पाया जाए, जबकि कुपोषण देने वाले सूखा

संबंधित जल एवं खाद्य की कमी के बढ़ते खतरे की स्थिति में, उच्च अनुकलन निकट भविष्य में (2030-2040) खतरे के स्तर को निचले स्तर तक ले आएगा तथा इसे 2080-2100 तक तापमान में एक 2-4 डिग्री सेंटीग्रेड की वृद्धि के भीतर लंबी अवधि में निम्न से मध्यम तक कायम किया जा सकता है। तापमान संबंधित परेशानियों को प्रबंधित करने वाले इस अनुकूलन के तरीकों में शामिल

समग्र चुनौतियों से पार पाने के लिए ज्यादातर प्रारूप धारणाओं का सरलीकरण किया जाता है तथा कुछ ही क्षेत्रों पर अपना ध्यान केंद्रित किया जाता है और ऐसे में बहुत सारे पहलू वास्तव में छूट जाते हैं। इस तरह के दृष्टिकोण अपनाने से सामाजिक तथा संस्थागत पहलू एवं गैर बाजार मूल्य उपेक्षित हो जाते हैं।

हैं तापमान स्वास्थ्य उष्मीकरण प्रणालियों में निवेश, उष्मा के टापुओं को कम करने के लिए शहरी योजना तथा निर्मित पर्यावरण का उन्नयन। बाद के लिए अनुकूलन व्यवस्था में शामिल है। आपदा तैयारियों पर निवेश, शीघ्र उष्मीकरण प्रणालियां तथा स्थानीय अनुकूलित दक्षता (आईपीसीसी एआर 5 2014) में वृद्धि।

आर्थिक विकास पर प्रभाव तथा शमन के दृष्टिकोण से जलवायु परिवर्तन की लागतों को कम करने के लिए प्रारूपों की एक श्रृंखला का उपयोग किया गया है। इस तरह के कई प्रारूपों का प्रयोग भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए किया जा चुका है तथा इन प्रारूपों में छोटे से छोटे तथा बड़े से बड़े एवं एकीकृत आकलन प्रारूप शामिल हैं। आर्थिक विकास पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को प्रारूपित करना एक सामान्य दृष्टिकोण है, जिसे उत्पादकता, संसाधन देयता, उत्पादन एवं उपभोग संरचना में परिवर्तन के माध्यम से महसूस किए जाने की उम्मीद है। पारंपरिक रूप से ये अध्ययन भविष्य के लिए बिना नए जलवायु परिवर्तन (शमन) की एक संदर्भ स्थिति बनाम जीएचजी उत्सर्जन में कमी के लक्ष्य वाले विकल्प का उपयोग करते हुए वैकल्पिक स्थिति का निर्माण करते हैं। लागतें आवश्यक निवेश के संदर्भ में जलवायु संबंधित गतिविधियों के साथ हालात से निपटने के लिए तथा आम तौर पर सकल घरेलू उत्पाद की प्रतिशतता में अभिव्यक्त होती हैं। आर्थिक लागत को अर्थव्यवस्था के सकल घरेलू उत्पाद के एक नुकसान के रूप में मापा जाता है। लक्ष्यगत कार्यों को आम तौर पर इस तरह संरचित किया जाता है कि आर्थिक विकास (या बीतते समय के साथ उपभोग व्यय) ज्यादा से ज्यादा किया जाए, बचत तथा निवेश पर राष्ट्रीय आय लेखा का तादात्म्य को कायम रखने के रूप में शमन या स्थूल अर्थशास्त्र के नियम के कार्यान्वयन की लागत का न्यूनीकरण किया जाए।

समग्र चुनौतियों से पार पाने के लिए ज्यादातर प्रारूप धारणाओं का सरलीकरण किया जाता है तथा कुछ ही क्षेत्रों पर अपना ध्यान केंद्रित किया जाता है और ऐसे में बहुत सारे पहलू वास्तव में छूट जाते हैं। इस तरह के दृष्टिकोण अपनाने से सामाजिक तथा संस्थागत पहलू एवं गैर बाजार मूल्य उपेक्षित हो जाते हैं। क्षेत्रगत दृष्टिकोण, जो चिंता विशेष से जुड़े होते हैं, वह यह है कि किस हद तक स्वच्छ करने वाली प्रौद्योगिकी के अपनाए जाने के कारण किसी उद्योग विशेष में लागत बढ़ेगी या वैश्विक बाजारों में उद्योगों के बीच की प्रतियोगिता को किस सीमा तक नुकसान पहुंचाएगी। इससे और भी ज्यादा सूक्ष्म सूचनाएं उपलब्ध होती हैं। इस समय, समग्र अर्थव्यवस्था-जलवायु परिवर्तन की व्यापक लागत के उपलब्ध आकलनों के बीच एक व्यापक भिन्नता है। प्रौद्योगिक कारक उत्पादकता तथा ऊर्जा कुशलता में विकास जैसे शमन परिदृश्यों, समय सीमाओं तथा धारणाओं के संबंध में बदलते विशेषीकरण के कारण आकलन भिन्न-भिन्न होते हैं। पारीख के आकलन के मुताबिक 2005-2050 के बीच सकल घरेलू उत्पाद में 12.5 प्रतिशत हानि, शुक्ला एवं धार के अनुसार इसी अवधि के लिए सकल घरेलू उत्पाद में 6.7 प्रतिशत का नुकसान होगा , जबकि प्रधान तथा घोष का अनुमान है कि 2030 तक सकल घरेलू उत्पाद विकास दर में 1.1-1.3 प्रतिशत तक का नुकसान होगा।

यूएनएफसीसीसी (आईएनडीसी 2015) को सौंपे गए भारत के प्रपत्र में जैसा कि कहा गया है कि शमन रणनीति में 2030 तक गैर ईंधन आधारित ऊर्जा संसाधनों से संपूर्ण विद्युत् ऊर्जा स्थापित क्षमता के 40 प्रतिशत तक का एक लक्ष्य शामिल है। इस प्रपत्र में 2030 तक वन तथा वृक्ष आच्छादन के जरिए कार्बन डाय ऑक्साइड के 2.5 से 3 बिलियन टन के एक अतिरिक्त कार्बन खड्डे का निर्माण करना शामिल है। इसके अलावा, ऊर्जा कुशलता को उन्नत करना, 100 स्मार्ट शहरों में जलवायु अनुकूल आधारभूत संरचना का विकास करना, जन परिवहन प्रणलियों को विकसित करना तथा इसी तरह की भिन्न पहल जैसे अन्य उपाय हैं।

अनुकूलन से संबंधित लागत को जलवायु परिवर्तन के कारण क्षति और नुकसान के संदर्भ में जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का एक आकलन तथा इनसे संबंधित लागतों के आकलनों की आवश्यकता है। परंपरावादी दृष्टिकोण, जो सांख्यिकीय विश्लेषण या मौद्रिक मूल्यों/लागत प्रभावकारिता विश्लेषण, लागत लाभ विश्लेषण तथा अन्य लागत विचलन दृष्टिकोण) पर पहुंचने में मानक तकनीक के इस्तेमाल पर आधारित है, अपर्याप्त साबित हो सकता क्योंकि ये खतरे को आंकने में असक्षम हैं तथा इनका जो अनिश्चित पहलू है, वह जलवायु परिवर्तन विश्लेषण का केंद्र बिंदु है। उपायों में से ज्यादातर इस तरह के लागत आकलन के लिए आवश्यक है, जिसमें लागत लाभ दृष्टिकोण शामिल है तथा जो अपेक्षाकृत नया तथा समरूपता के साथ एक समय आयाम से जुड़ा हुआ है और इसमें बहु-मौसम दृष्टिकोण एवं अन्य निर्णय समर्थन उपकरण सम्मिलित हैं।

चूंकि जलवायु को परिवर्तन विश्वभर की अर्थव्यवस्थाओं तथा आबादियों को अलग-अलग तरीके से प्रभावित करने वाले घटक की तरह दर्शाया जाता है, ऐसे में मुख्य आर्थिक चिंता यह

जब अनुकूलन तथा शमन के लिए योजनाएं बनती हैं, तब संसाधन विपन्न अर्थव्यवस्थाएं विकल्प ढूंढती हैं। अपनी आबादी के लिए एक गुणवत्तापूर्ण जीवन स्तरों के द्वार तक पहुंचने के लिए उनके पास मौजूद बहुत सारे लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए कार्रवाई अवसर लागत का आकलन करता है।

है कि जलवायु प्रभावों के लागत आकलन या इनकी अनुक्रिया पर समुचित ध्यान दिया जाना चाहिए, जिनके मूल्यों को अलग किया जा सकता है या जिस पर कम चर्चाएं हुई हैं तथा पर्यवारण तंत्रों के लिए ठीक भी नहीं है, जहां पर्यावरण प्रणाली सेवाओं को लेकर अनिश्चितताएं हैं। एक दूसरे के मुकाबले लागतों का मूल्यांकन तथा

लाभ को अलग करने वाले मूल्यों के आकलन की आवश्यकता है। (शाम्वेरा, हील, 2014)। निश्चित रूप से यह एक ऐसी चुनौती है, जिसके साथ अर्थशास्त्री वर्षों से लागत लाभ विश्लेषण का इस्तेमाल करते हुए जूझते रहे हैं लेकिन इसके बावजूद प्रभावों के अनुमानित विस्तार तथा संभावना के कारण जलवायु परिवर्तन चिंताएं बढ़ रही हैं। प्रौद्योगिकीय, प्रबंधकीय, आधिकारिक तथा संस्थागत लागतों से लेकर शोध एवं विकास में निवेश करने, जागरूकता तथा कुशलता निर्माण तक में अनुकूलन तथा शमन अनुक्रियाओं के लिए भी लागत व्यय हुआ है।

जब अनुकूलन तथा शमन के लिए योजनाएं बनती हैं, तब संसाधन विपन्न अर्थव्यवस्थाएं विकल्प ढूंढती हैं। अपनी आबादी के लिए एक गुणवत्तापूर्ण जीवन स्तरों के द्वार तक पहुंचने के लिए उनके पास मौजूद बहुत सारे लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए कार्रवाई अवरसर लागत का आकलन करता है। भारत जैसी एक विकासशील अर्थव्यवस्था में जलवायु परिवर्तन के प्रति जवाबदेही के लिए आर्थिक निर्णय लेने का संदर्भ वह है, जो बहु गैर जलवायु दबाव घटकों को चिह्नित करता है तथा अनुकूलन, शमन तथा निरंतर विकास के बीच अंत:क्रिया होती है। यह जलवायु कार्रवाई के सहलाभ तथा सहलागत के मूल्यों को चिह्नित करने में शोध करने वालों को सक्षम बनाता है तथा जो अदला-बदली तथा अनुकूलन, शमन एवं अक्षय विकास के बीच सहक्रिया को बढ़ाता है।

शमन तथा अनुकूलन दोनों लागतों के वैश्विक रूप से उपलब्ध अनुमानों में स्पष्ट रूप से अंतर पाया जाता है। कार्बन डायऑक्साइड (कार्बन की सामाजिक लागत) के उत्सर्जन का बढ़ता आर्थिक प्रभाव चंद डॉलरों तथा हजारों डॉलर प्रति टन कार्बन के बीच पड़ता है। ये आकलन निम्न छूट दरों के लिए व्यापक विस्तार के साथ अनुमानित क्षति-कार्य को छूट दर के साथ मजबूती से अलग-अलग करते हैं। इसी तरह, 2010-2050 के दौरान विकासशील देशों के लिए अनुकूलन लागत का अनुमान 4 से 109 अमेरिकी डॉलर प्रतिवर्ष अनुमानित है। वैश्विक स्तर पर, अनुकूलन में एक व्यापक घाटा है और जरूरी है कि इसके लिए निधि उलब्ध हों। (आईपीसीसी सिंथेसिस रिपोर्ट)।

भारत का आईएनडीसी का प्रपत्र एक एडीबी अध्ययन को उद्धृत करते हुए बताता है कि 2050 तक जलवायु परिवर्तन से भारत में आर्थिक क्षति तथा नुकसान वार्षिक रूप से इसकी जीडीपी का 1.8 प्रतिशत के लगभग होगा। यह नीति आयोग के अनुमानों को भी उद्धृत करता है कि उदार निम्न कार्बन के विकास के लिए शमन गतिविधियों की लागत 2011 के मूल्यों पर 2030 तक लगभग 834 बिलियन अमेरिकी डॉलर होगा। आईएनडीसी के अनुसार, प्रारंभिक अनुमान इंगित करते हैं कि कृषि, वनीकरण, मत्स्य पालन के आधारभूत संरचना, जल संसाधनों तथा पारितंत्र में अनुकूलन के लिए 1015 से 2030 के बीच लगभग 206 अमेरिकी बिलियन डॉलर (2014-15 के मूल्य पर) की आवश्यकता होगी तथा नाजुक स्थिति एवं आपदा प्रबंधन को सशक्त करने के लिए अतिरिक्त निवेश की आवश्यकता होगी। भारत में, जलवायु परिवर्तन तथा राष्ट्रीय मिशन पर राष्ट्रीय कार्रवाई योजना के फ्रेमवर्क के भीतर ही ज्यादातर अनुकूलन रणनीतियां बनाई जाती हैं।

लागत को पूरा करने के ख्याल से जलवायु निधि को लाभ पहुंचाने के लिए प्रोत्साहन, नियमन तथा सटीक उपकरण उपलब्ध कराने में सार्वजनिक क्षेत्रों की भूमिका को हाल के वर्षों (आईपीसीसी एआर 5 2014) में जरूरी बताया गया है। बुनियादी सुविधाओं, जनस्वास्थ्य देखरेख के प्रावधानों, जैव विविधताओं के संरक्षण तथा प्रौद्योगिकी स्थानांतरण को बढ़ावा देने, ज्ञान की साझेदारी एवं सामाजिक एवं आर्थिक विषमता दूर करने में निवेश उपलब्ध करानेके जरिए लड़ने की क्षमताओं के निर्माण के लिए जीवन की बुनियादी गुणवत्ता को सुनिश्चित करने के लिहाज से भारतीय अर्थव्यवस्था में सरकार तथा सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका बहुत ही अच्छी नहीं है। ❑

संदर्भ

शाम्वेरा, एम.जी.हील, सी.डुब्युक्स, एस. हैलीगेट, एल लेकलर्क, ए. मार्कंडेय, बी.ए. मैक्कार्ल, आर. मेशलर, तथा जे.ई. न्यूमैन (2014): इकोनॉमिक्स ऑफ एडैप्टेशन।

इनरूक्लाइमेट चेंज 2014: इम्पैक्ट्स, एडैप्टेशन, एंड वलनेरेबिलिटी। पार्ट ए: ग्लोबल एंड सेक्टोरल एस्पेक्ट्स। कंट्रीब्यूशन ऑफ वर्किंग ग्रुप II टू द फिफ्थ एसेसमेंट रिपोर्ट ऑफ द इंटरगोवर्नमेंट पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज फील्ड, सी.बी., बैरोज, डी.जे. डॉकेन, के.जे मैक, एम.डी. मैस्ट्रांडड्रू, टी.ई.बिलिर, एम.चटर्जी, के.एल.एबी, वाई.ओ.एस्ट्राडा, आर. सी.जीनोवा, बी.गिरमा, ई.एस.किसेल, ए.एन.लेवी, ए.मैक्रेकेन, पी.आर.मैस्ट्रांडड्रू, एंड एल.एल.व्हाईट। कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैंब्रिज, यूनाइटेड किंग्डम एंड न्यू यॉर्क , एनवाई, यूएसए, पृष्ठ संख्या 945-977

दासगुप्ता, पी., ए. कुमारी एंड डी. भट्टाचार्य (2013): सोशियो-इकोनॉमिक एनालाइसिस ऑफ कलाइमेट चेंज इंपैक्ट ऑन फूडग्रेन प्रोडक्शन इन इंडियन स्टेटट्स, एनवायर्नमेंट डेवलपमेंट, एल्जेवियर, वोल्यूम 8, 2013 http://authors.elsevier.com/sd/article/S2211464513000900.

आइएनडीसी (2015), इंडियाज इंटेन्डेड नेशनली डिटरमाइन कन्ट्रीब्यूशन: वर्किंग डुवर्ड्स क्लाइमेट जस्टिस। सबमिशन टू दी यूएनएफसीसीसी, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया। (http://www4.unfccc.int/submissions/INDC/Published%20Documents/India/1/INDIA%20INDC%20TO%20UNFCCC.pdf)

आईपीसीसी सिंथेसिस रिपोर्ट (2014): इंटरएक्शन्स बिटवीन एडेप्टेशन, मिटिगेशन एंड सस्टेनेबल डेपलपमेंट (सेक्शन 4.5), सिंथेसिस रिपोर्ट, एआर5, आईपीसीसी, यूएनईपी-डब्ल्यूएमओ।

आईपीसीसी (2014), समरी फॉर पॉलिसीमेकर्स। इन क्लाइमेट चेंज 2014: इंपैक्ट्स, एडेप्टेशन, एंड वरनेरेबलिटी। पार्ट एरू ग्लोबल एंड सेक्टोरल अस्पेक्ट्स। कंट्रीब्यूशन ऑफ वर्किंग ग्रुप II टू द फिफ्थ एसेसमेंट रिपोर्ट ऑफ द इंटरगवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज ख्फील्ड, सीबी., बरोज, डी.जे.डकन, के.जे.मैक, एम. डी. मैस्ट्रन्ड, टी.ई.बिलिर, एम.चटर्जी, के.एल.एबी, वाई. ओ.एस्ट्राडा, आर.सी.जीनोवा, बी.ग्रिमा, ई.एस.किसेल, ए.एन.लेवी, एस. मैक्क्रेन, पी.आर. मैस्ट्रान्ड, एंड एल.एल. व्हाइट,। कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, यूनाइटेड किंग्डम एंड न्यू यॉर्क, एनवाई, यूएसए, पृष्ठ संख्या 1-3।

पारीख, के. (2012): सस्टेनेबल डेवलपमेंट एंड लो कार्बन ग्रोथ स्ट्रेटेजी फॉर इंडिया, एनर्जी, 40: 31.38।

पारीख, के. पारीख, जे. (2014): लो कार्बन डेवपमेंट पाथवेज फॉर अ सस्टेनेबल इंडिया, आईआरएडीई, मीमिओ फबरुअरी।

प्रधान, बी.के.एंड घोष, जे (2012): द इंपैक्ट ऑफ कार्बन टैक्सेज ऑन ग्रोथ एमीशन्स एंड वेलफेयर इन इंडियारू एसीजीई एनालाइसिस। आईईजी वर्किंग पेपर नंबर 315,2012

शुक्ला, पी.आर एंड धार, एस. (2011): क्लाइमेट एग्रीमेंट्स एंड इंडिया: अलाइनिंग ऑप्शन्स एंड अपोर्चुनीटीज ऑन ए नीऊ ट्रैक। इंटरनेशनल एनवार्नमेंटल एग्रीमेंट्स: पॉलिटिक्स, लॉ एंड इकोनॉमिक्स 11,229.243।

स्टिग्लिट्ज, जे.ई., ए.सेन, जे-पी फिटॉसी (2009: रिपोर्ट बाय द कमीशन ऑन द मेजरमेंट ऑफ इकोनॉमिक परफॉर्मेंस एंड सोशल प्रोग्रेस http://www.insee.fr/fr/publications-et-services/dossiers_web/stiglitz/doc-commission/RAPPORT_anglais.pdf

यूएन (2015): सस्टनेबल डेवलपमेंटल गोल्स, यूनाइटेड नेशन्स http://www.un.org / sustainabledevelopment/sustainable-development-goals/

यूएनडीपी (1995): http://data.un.org/Glossary.aspx?q=undp+1995

वर्ल्ड कमीशन ऑन इन्वायर्नमेंट एंड डेवलपमेंट (डब्ल्यू सीईडी) (1987), आवर कॉमन फ्यूचर: रिपोर्ट ऑफ द वर्ल्ड कमीशन ऑन एनवार्नमेंट एंड डेवलपमेंट, डब्ल्यूसीईडी, स्वीट्जरलैंड। http://www.un-documents.net/our-common-future.pdf

जलवायु परिवर्तन, प्रौद्योगिकी एवं संपोषणीय ऊर्जा

मालती गोयल

1890 के दशक में न्यूयॉर्क शहर दलदल बन गया था – तूफान से नहीं, घोड़े की बदबू भरी लीद से।
– यूएसए टुडे, 30 दिसंबर, 2013

जलवायु एवं ऊर्जा को संपोषणीय बनाने वाली नीतियां कोयले का उपभोग करने वाले सभी क्षेत्रों पर प्रभाव डालेंगी और आर्थिक गतिविधियों के केंद्र में आ जाएंगी। योजनाकारों एवं अनुसंधानकर्ताओं को अपने लक्ष्यों का पुनरीक्षण करना होगा। कई नवीनतम प्रौद्योगिकियों की वाणिज्यिक पुष्टि अभी तक नहीं हुई है। औद्योगिक वृद्धि, कृषि के बेहतर प्रबंधन एवं कृषि वानिकी प्रणालियों की ओर एकीकृत दृष्टिकोण आवश्यक हो गया है

घोड़े उस समय यातायात का प्राथमिक साधन थे। जल्दी ही तकनीक ने हजारों टन लीद से अटी सड़कों का उपचार तलाश लिया। वाहन आए, उन्होंने घोड़ों की जगह ली और सड़कें साफ हो गईं। करीब एक शताब्दी बाद वाहनों से लगातार बढ़ते धुएं ने प्रदूषण बढ़ाना आरंभ कर दिया और 1990 के दशक में यह धुआं जलवायु परिवर्तन जैसी वैश्विक चिंता का कारण बन गया। ग्लोबल वार्मिंग के संकट, बढ़ते समुद्री स्तर, मौसम की अतिकारी घटनाओं, पानी की कमी ने मानवता को हिला दिया है। आपदा का समाधान निकालने के लिए वाहनों से उद्योगों तक नई प्रौद्योगिकी के लिए उपयुक्त समय है।

कार्बन डाई ऑक्साइड समेत ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन से ग्लोबल वार्मिंग का खतरा है और उन्हें दुनिया भर में बढ़ती मानवीय एवं विकास गतिविधियों का भौतिक प्रकटीकरण माना जाता है। दुनिया भर में कोयला ही भविष्य का ईंधन बना हुआ है (दि इकनॉमिस्ट, 19 अप्रैल, 2014) और ऊर्जा उद्योग को उसकी बहुत आवश्यकता है। चित्र 1 में 2005 में ग्रीनहाउस गैसों का क्षेत्रवार वैश्विक उत्सर्जन दिखाया गया है। ऊर्जा आपूर्ति का उसमें सर्वाधिक 28 प्रतिशत हिस्सा है, जिसके बाद कृषि, यातायात एवं उद्योग क्षेत्र आते हैं।

विश्व की 17 प्रतिशत जनसंख्या भारत में रहती है। कोयले का तीसरा सबसे बड़ा

चित्र 1: 2005 में क्षेत्रवार वैश्विक उत्सर्जन

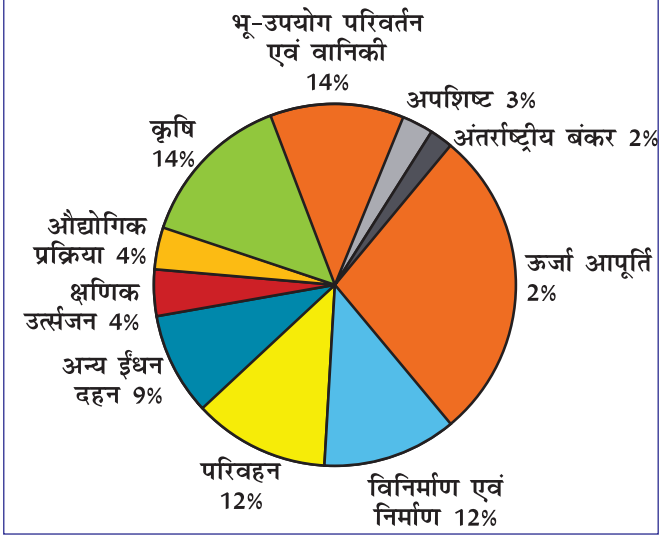

स्रोत: वर्ल्ड रिसार्सेस इंस्टीट्यूट, 2010

लेखिका जलवायु परिवर्तन शोध संस्थान से संबद्ध हैं। वह वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान पषिद (सीएसआईआर) में अमीरात वैज्ञानिक एवं विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार सलाहकार रही हैं। साथ ही वह जामिया हमदर्द के विज्ञान संकाय में अतिथि प्राध्यापक भी हैं। वह 2008 में राष्ट्रीय पर्यावरण विज्ञान अकादमी की फैलो भी बनीं। ईमेल: maltigoel2008@gmail.com

उत्पादक एवं ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जक होते हुए भी उसका कुल उत्सर्जन वैश्विक उत्सर्जन का 5 प्रतिशत ही है। विभिन्न क्षेत्रों से भारत का ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन चित्र 2 में दिखाया गया है। ऊर्जा आपूर्ति की इसमें 37 प्रतिशत हिस्सेदारी है और कृषि, परिवहन, इमारतें तथा उद्योग अन्य बड़े हिस्सेदार हैं।

जलवायु परिवर्तन में कमी

जलवायु परिवर्तन पर अंतर्राष्ट्रीय संधियां एवं समझौते – जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र प्रारूप संधि तथा क्योटो समझौता – विश्व के सभी देशों के लिए बाध्यकारी है ताकि वातावरण में कार्बन डाईऑक्साइड की सांद्रता अर्थात् उसके गाढ़ेपन में ठहराव लाने की दिशा में कार्य करने हेतु ग्रीनहाउस गैस भंडार तैयार किया जा सके। भारत समेत कोयले का अधिक प्रयोग करने वाले देशों के कार्बन डाईऑक्साइड उत्सर्जन में कमी के संकल्प/लक्ष्य तालिका 1 में दिखाए गए हैं।

कोयले के अधिक प्रयोग वाली उभरती हुई अर्थव्यवस्था के रूप में भारत को जलवायु परिवर्तन के अपने ही समाधन ढूंढने हैं। उसे ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन से निपटने के लिए हरित प्रौद्योगिकी के संदर्भ में विश्वसनीय प्रतिक्रिया की आवश्यकता है। क्योटो समझौते पर हस्ताक्षर करते समय उत्सर्जन में कमी का कोई संकल्प नहीं करना था। किंतु कोपेनहेगन शिखर बैठक में भारत ने 2020 तक जीडीपी तीव्रता में 2005 के स्तर की अपेक्षा 20–25 प्रतिशत कमी का प्रस्ताव स्वेच्छा से रख दिया। क्योटो के उपरांत के समय में संयुक्त राष्ट्र सचिवालय ने सभी देशों से उनके वांछित राष्ट्रीय निर्धारित योगदान (आईएनडीसी) देने के लिए कहा। दिसंबर 2015 में पेरिस शिखर बैठक में इन्हें अंतिम रूप दिया जाएगा। भारत ने अपने आईएनडीसी में ये लक्ष्य बताए हैं–

तालिका 1: राष्ट्रों के कार्बन डाईऑक्साइड उत्सर्जन में कमी के संकल्प

देश	डॉलर में प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद (2011)	उत्सर्जन में कमी के लक्ष्य एवं संकल्प				स्वीकार करने की तिथि	
		2020 तक (बिना शर्त)	2020 तक (सशर्त)	2050 तक (सशर्त)	अन्य	यूएनएफसीसी	क्योटो समझौता
ऑस्ट्रेलिया	67,039	2000 की तुलना में 5 प्रतिशत कमी	2000 की अपेक्षा 15 अथवा 25 प्रतिशत कमी	2000 की अपेक्षा 80 प्रतिशत कमी		30 दिसंबर 1992	12 दिसंबर 2007
अमेरिका	49,922	2005 की अपेक्षा 2020 तक 17 प्रतिशत कमी		2005 की अपेक्षा 83 प्रतिशत कमी के लक्ष्य की दिशा में	2005 की अपेक्षा 2025 में 30 प्रतिशत और 2030 में 42 प्रतिशत कमी	15 अक्टूबर 1992	नहीं स्वीकारा
दक्षिण अफ्रीका	8,090	कोई नहीं	बीएयू की अपेक्षा 34 प्रतिशत कमी	लागू नहीं	2005 की अपेक्षा 2025 तक 42 प्रतिशत कमी और 2020 तथा 2025 तक उत्सर्जन का चरम प्राप्त करने का लक्ष्य	29 अगस्त 1997	31 जुलाई 2002
चीन	5,439	कोई नहीं	2005 की अपेक्षा कार्बन डाईऑक्साइड के प्रति इकाई जीडीपी उत्सर्जन में 40 से 45 प्रतिशत कमी	लागू नहीं	2005 की अपेक्षा 2015 तक कार्बन डाईऑक्साइड के प्रति इकाई जीडीपी उत्सर्जन में 17 प्रतिशत कमी	5 जनवरी 1993	30 अगस्त 2002
भारत	1,528	कोई नहीं	2005 की अपेक्षा प्रति इकाई जीडीपी उत्सर्जन तीव्रता में 20 से 25 प्रतिशत कमी	लागू नहीं		1 नवंबर 1993	26 अगस्त 2002

*(**स्रोत:** http://unstats.un.org समेत विभिन्न स्रोतों से जानकारी का उपयोग कर संकलित)*

चित्र 2: भारत का ग्रीनहाउस गैस भंडार, 2007

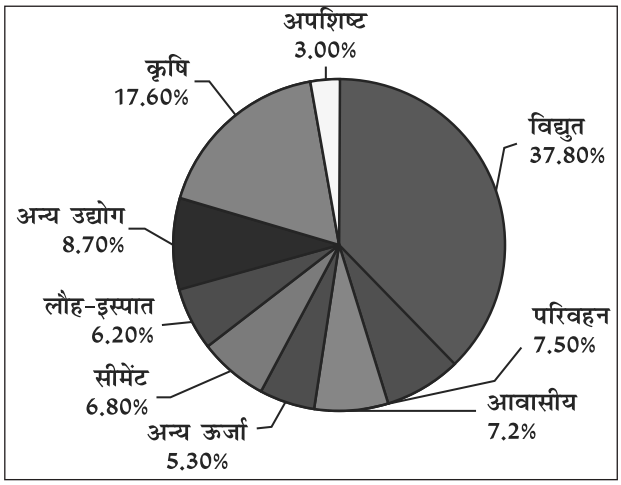

स्रोत: वर्ल्ड रिसार्सेस इंस्टीट्यूट, 2007

राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना के अंतर्गत राष्ट्रीय अतिरिक्त ऊर्जा दक्षता अभियान (एनएमईईई) का लक्ष्य सभी क्षेत्रों में ऊर्जा दक्षता में सुधार करना है। प्रदर्शन, प्राप्ति एवं व्यापार (पीएटी) प्रणाली का पहला चरण 2015 में पूरा हो गया और उसमें ऊर्जा की सर्वाधिक मांग वाले नौ निर्धारित क्षेत्र एल्युमीनियम, सीमेंट, क्लोर-अल्कली, उर्वरक, लुग्दी एवं कागज, बिजली, लौह एवं इस्पात, स्पंज आयरन तथा कपड़ा हैं।

(क) 2030 तक जीडीपी तीव्रता में 2005 के स्तर से 33-35 प्रतिशत कमी लाना

(ख) 40 प्रतिशत बिजली उत्पादन क्षमता गैर-जीवाश्म ईंधन आधारित होना

(ग) 2030 तक 2.5-3 अरब कार्बन डाईऑक्साइड के लिए कार्बन सिंक तैयार करना

हमने 31 जुलाई 2015 को 2,72,432 मेगावाट बिजली उत्पादन क्षमता प्राप्त कर ली है। इसमें लगभग 1,65,000 मेगावाट कोयले से, 23,000 मेगावाट गैस से और 993 मेगावाट डीजल से बनती है। हमारे पास कुल 1,89,313 मेगावाट ताप बिजली क्षमता है। अक्षय अर्थात् नवीकृत स्रोतों से 35,776 मेगावाट तथा पानी से 41,632 मेगावाट बिजली बनाने की और 5,717 परमाणु बिजली की उत्पादन क्षमता है। जब हम ऊर्जा के विभिन्न स्रोतों की अच्छाई और बुराई का विश्लेषण करते हैं तो हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि ऊर्जा की सतत आपूर्ति ऊर्जा के सभी स्रोतों को तलाशकर प्राप्त करनी होगी।

इस भविष्योन्मुखी नीति में सबसे महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि प्रौद्योगिकी नए अनुसंधान एवं संसाधनों के यथासंभव उपयोग के द्वारा रास्ते तलाशने होंगे। भारत में आईएनडीसी के तीन उद्देश्यों के वर्तमान परिप्रेक्ष्य को देखते हैं।

ऊर्जा दक्षता में सुधार

राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना के अंतर्गत राष्ट्रीय अतिरिक्त ऊर्जा दक्षता अभियान (एनएमईईई) का लक्ष्य सभी क्षेत्रों में ऊर्जा दक्षता में सुधार करना है। प्रदर्शन, प्राप्ति एवं व्यापार (पीएटी) प्रणाली का पहला चरण 2015 में पूरा हो गया और उसमें ऊर्जा की सर्वाधिक मांग वाले नौ निर्धारित क्षेत्र एल्युमीनियम, सीमेंट, क्लोर-अल्कली, उर्वरक, लुग्दी एवं कागज, बिजली, लौह एवं इस्पात, स्पंज आयरन तथा कपड़ा हैं। जीवाश्म ईंधन से चलने वाले बिजली संयंत्रों में ऊर्जा की दक्षता वाली प्रौद्योगिकियों जैसे सुपर क्रिटिकल एवं अल्ट्रा सुपर क्रिटिकल बॉयलर को बढ़ावा दिया गया है। इससे प्रति यूनिट बिजली उत्पादन में ईंधन की मांग और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन कम होता है। पीएटी के दूसरे चरण में तीन और क्षेत्रों - बिजली वितरण, रेलवे एवं तेल रिफाइनरी - को शामिल किया जा रहा है। निजी क्षेत्र की प्रतिभागिता से प्रोत्साहन प्राप्त कर बड़ी संख्या में प्रौद्योगिकियां क्रियान्वित की जा सकती हैं, जिनमें कई पहले से मौजूद हैं और उन्हें कई क्षेत्रों में लागू किया जा सकता है।

दक्ष प्रौद्योगिकियों को लागू करने की दिशा में प्रयास मांग वाले अन्य क्षेत्रों में भी बढ़ाने होंगे। परिवहन क्षेत्र में ईंधन की किफायत के मामले में नए मानक लागू कर दिए गए हैं और 2021-22 तक ईंधन की खपत में 15 प्रतिशत कमी का लक्ष्य रखा गया है। 2017 तक वाहन ईंधन में 20 प्रतिशत एथेनॉल एवं बायोडीजल के मिश्रण का लक्ष्य है। वैकल्पिक ईंधनों की तलाश एवं बिजली से चलने वाले वाहनों को वाणिज्यिक रूप से व्यावहारिक बनाने समेत वर्तमान प्रौद्योगिकियों का उन्नयन जलवायु परिवर्तन के समाधान की दिशा में मुख्य लक्ष्य होना चाहिए।

इमारतों तथा निर्माण के क्षेत्र में हमारे पास राष्ट्रीय सतत पर्यावास अभियान है, जो हरित भवनों एवं स्मार्ट शहरों के लिए प्रौद्योगिकियों की मांग करता है। ऊर्जा की दक्षता वाले परिवहन एवं ऊर्जा नेटवर्क, जल संरक्षण एवं कचरा प्रबंधन वाली 100 'स्मार्ट सिटी' तैयार करने का भारत का लक्ष्य शहरी योजनाकारों के सामने कई चुनौतियां प्रस्तुत करता है। कार्बन के मामले में उदासीन शहर बनाने के लिए नई प्रौद्योगिकियों को अंगीकार करना अपरिहार्य है। ऊर्जा दक्षता वाले घरेलू उपकरण एवं कार्यालयों में ठंडा तथा गर्म करने की बेहतर प्रणालियों का प्रयोग, लाइट एमिटिंग डायोड (एलईडी) बल्बों का प्रयोग, जैव-जलवायु वास्तु निर्माण संबंधी डिजाइनें एवं पर्यावरण के अनुकूल निर्माण सामग्री का प्रयोग अन्य विकल्प हैं, जिन्हें जीडीपी तीव्रता में 33-35 प्रतिशत कमी लाने के लिए उपयोग में लाया जा सकता है।

ऊर्जा दक्षता वाले घरेलू उपकरण एवं कार्यालयों में ठंडा तथा गर्म करने की बेहतर प्रणालियों का प्रयोग, लाइट एमिटिंग डायोड (एलईडी) बल्बों का प्रयोग, जैव-जलवायु वास्तु निर्माण संबंधी डिजाइनें एवं पर्यावरण के अनुकूल निर्माण सामग्री का प्रयोग अन्य विकल्प हैं, जिन्हें जीडीपी तीव्रता में 33-35 प्रतिशत कमी लाने के लिए उपयोग में लाया जा सकता है।

जीवाश्मीय ईंधन ऊर्जा प्रौद्योगिकी

अजीवाश्मीय ईंधन प्रौद्योगिकियों से कामकाज के दौरान ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन नहीं होता है और यदि उन्हें बड़े स्तर पर प्रयोग किया जा सके एवं किफायती बनाया जा सके तो वे जलवायु परिवर्तन की व्यावहारिक समाधान बन सकती हैं। एकीकृत ऊर्जा नीति 2006 में 2031-32 तक 800 गीगावाट बिजली की स्थापित क्षमता का लक्ष्य रखा गया है। इसमें से 40 प्रतिशत अर्थात् 320 गीगावाट बिजली अजीवाश्मीय ईंधन से बनेगी।

वर्तमान में अक्षय ऊर्जा, जल विद्युत और परमाणु ऊर्जा कुल 83 गीगावाट है। भारत में बनने वाली कुल बिजली में अक्षय ऊर्जा की

हिस्सेदारी अभी 13 प्रतिशत ही है। राष्ट्रीय सौर अभियान का संशोधित लक्ष्य 2022 तक 100 गीगावाट स्थापित क्षमता का है। अभी सौर ऊर्जा क्षमता 3.5 गीगावाट तक पहुंची है, जो 2010 के 47 मेगावाट की तुलना में 8 गुना है। 2022 तक अक्षय ऊर्जा के सभी स्रोतों से कुल 175 गीगावाट बिजली बनाने का लक्ष्य है। सोलर फोटोवोल्टाइक प्रौद्योगिकियों जैसे सोलर रूफटॉप एवं सोलर पार्क के प्रयोग को बहुत बढ़ाया जा रहा है।

25 सोलर पार्क एवं 4 मेगा बिजली परियोजनाएं बनने की संभावना है। अनुसंधान से पता चला है कि गैलियम आर्सेनाइड, कार्बन नैनोट्यूब जैसे नए पदार्थों में दक्षता को 50 प्रतिशत तक बढ़ाने की क्षमता है। सोलर थर्मल एवं सोलर कंसेंट्रेटर की मुख्य प्रौद्योगिकियों का भी प्रयोग किया जा रहा है। बड़े भूभाग की आवश्यकताओं एवं सेल के वृहद् प्रयोग, जिनसे 10-15 वर्ष में कचरा निस्तारण की बड़ी समस्या होगी, के स्थान पर सोलर फोटोवोल्टाइक ऊर्जा समाधान तलाशने हैं।

कोयले के जलने से उत्पन्न होने वाले प्रदूषण में कमी करने वाली सभी प्रौद्योगिकियों को स्वच्छ कोयला प्रौद्योगिकी कहा जा सकता है। कोयले से चलने वाले संयंत्र में कार्बन डाईऑक्साइड को ज्वलन से पहले अथवा ज्वलन के दौरान या ज्वलन के उपरांत प्राप्त किया जा सकता है। तीनों प्रक्रियाओं में अलगाव के भौतिक, रासायनिक अथवा जैविक साधन प्रयोग किए जाते हैं।

पवन ऊर्जा में वृद्धि के लिए 2022 तक 50 गीगावाट की ऊर्जा क्षमता का लक्ष्य है। समुद्र तट से दूर बड़े संयंत्र लगाना आवश्यक हो सकता है। आधुनिक प्रौद्योगिकियों का प्रयोग कर विंड टावर की प्रौद्योगिकी को यथासंभव परिपूर्ण बनाना होगा। इसके साथ ही जैव ऊर्जा, कचरा प्रबंधन, भूतपीय एवं समुद्री ऊर्जाओं में वृद्धि के लिए अन्य प्रौद्योगियों को बढ़ावा देना भी आवश्यक है। इसमें संतुलन जलविद्युत एवं परमाणु ऊर्जा क्षमताओं में वृद्धि से प्राप्त होगा। इनके लिए प्रौद्योगिकी में उन्नयन तथा सुनियोजित निवेश की आवश्यकता होगी।

कार्बन की प्राप्ति, भंडारण एवं उपयोग की प्रौद्योगिकियां

ऊर्जा के कुल उत्पादन में कोयले का प्रभुत्व आगामी दशकों में भी जारी रहने की संभावना है। 2020 तक 1 अरब टन कोयले और 2030 तक 2 अरब टन अतिरिक्त कोयले के लक्ष्य हैं। भारत का आईएनडीसी अगले 15 वर्ष में 2.5 से 3 टन कार्बन डाईऑक्साइड के लिए अतिरिक्त सिंक की बात कहता है। इसके लिए कार्बन डाईऑक्साइड की प्राप्ति एवं भंडारण - कार्बन डाईऑक्साइड अलगाव (सीक्वेस्ट्रेशन) जैसी प्रौद्योगिकियों का विकास अपरिहार्य हो जाता है।

कार्बन डाईऑक्साइड के अलगाव में अतिरिक्त कार्बन डाईऑक्साइड को उसके स्रोतों से प्राप्त कर लिया जाता है और भंडारण तथा वातावरण से दूर उपयोग के माध्यम से उसका स्थायी निपटारा कर दिया जाता है। प्राप्त की गई कार्बन डाईऑक्साइड को सतह प्रक्रियाओं अथवा सतह के नीचे भंडारण के तरीकों एवं ऊर्जा ईंधनों तथा खनिजों की प्राप्ति में उपयोग के द्वारा अलग किया जाता है। यदि स्रोत एवं भूमिगत भंडारण स्थल एक दूसरे के निकट नहीं होते हैं तो लंबी दूरी तक तरल कार्बन डाईऑक्साइड ले जाने की आवश्यकता होती है। कार्बन डाईऑक्साइड अलगाव बहुविषयक वैज्ञानिक एवं अभियांत्रिकी बिंदु है। चूंकि यह नया तरीका है, इसीलिए हम विविध क्षेत्रों से अनुसंधान सूचना की आवश्यकता वाली विभिन्न प्रौद्योगिकियों का विस्तृत वर्णन करेंगे।

(अ) स्वच्छ कोयला प्रौद्योगिकी: कोयले के जलने से उत्पन्न होने वाले प्रदूषण में कमी करने वाली सभी प्रौद्योगिकियों को स्वच्छ कोयला प्रौद्योगिकी कहा जा सकता है। कोयले से चलने वाले संयंत्र में कार्बन डाईऑक्साइड को ज्वलन से पहले अथवा ज्वलन के दौरान या ज्वलन के उपरांत प्राप्त किया जा सकता है। तीनों प्रक्रियाओं में अलगाव के भौतिक, रासायनिक अथवा जैविक साधन प्रयोग किए जाते हैं। ज्वलन से पूर्व प्राप्ति में कोयले को बिजली उत्पादन से पहले सिंथेटिक गैस अथवा तरल ईंधन में परिवर्तित किया जाता है। कोयले की सिन गैस में मुख्यतया कार्बन मोनोऑक्साइड और हाइड्रोजन होती हैं। प्रदूषण रहित उत्पादन में हाइड्रोजन का प्रयोग किया जाता है। कार्बन डाईऑक्साइड की प्राप्ति हेतु इंटीग्रेटेड गैसिफिकेशन कंबाइंड साइकल एवं फिशर-ट्रॉप्च सिंथेसिस के साथ हाइड्रोजन मेंब्रेन रिफॉर्मिंग, शिट गैस रिएक्शन प्रक्रियाओं का प्रयोग किया जाता है। अधिक तापमान एवं अधिक दाब पर ज्वलन उपरांत की तुलना में ज्वलन पूर्व कार्बन डाईऑक्साइड की प्राप्ति को प्राथमिकता दी जाती है। ज्वलन उपरांत प्राप्ति 'एंड ऑफ पाइप' विकल्प है, जिसमें कार्बन डाईऑक्साइड को लू गैस के ढेर से अलग किया जाता है। रासायनिक अलगाव हेतु अमीन आधारित कार्बन डाईऑक्साइड प्रौद्योगिकियों का प्रयोग विकसित किया गया है किंतु उनका प्रयोग बड़े स्तर पर करने पर बिजली के मुकाबले दोगुना खर्च आता है। इसीलिए कार्बन प्राप्ति हेतु पॉलीमरिक झिल्लियों, भौतिक एडजॉर्बेंट एवं नैनोट्यूब के प्रयोग जैसी अन्य प्रक्रियाओं के विकास हेतु अनुसंधान की आवश्यकता है।

उद्योगों के लिए कार्बन डाईऑक्साइड प्राप्ति एवं उपयोग की प्रक्रियाएं बिजली संयंत्रों के समान ही हैं। औद्योगिक कचरा एवं मैल कार्बन डाईऑक्साइड के अच्छे अवशोषक सिद्ध हो रहे हैं। क्योटो समझौते के बाद कार्बन प्रबंधन को अधिक बढ़ावा देने के लिए समुचित प्रौद्योगिकी की आवश्यकता है।

ज्वलन के दौरान कार्बन डाईऑक्साइड की प्राप्ति में दो प्रौद्योगिकी संभव हैं: (क) सुपरक्रिटिकल एवं अल्ट्रा-सुपरक्रिटिकल कोल कंवशन, जहां दक्षता अधिक होती है, प्रत्येक यूनिट बिजली उत्पादन में कार्बन डाईऑक्साइड उत्सर्जन कम होता है (ख) ऑक्सी यूल कंबश्चन एवं केमिकल लूपिंग जैसी उन्नत प्रौद्योगिकियां, जिनमें लू गैस में कार्बन डाईऑक्साइड की अधिक मात्रा निकलती है। अल्ट्रा-सुपरक्रिटिकल बॉयलरों के लिए सामग्री का विकास करने एवं ऑक्सी यूल कंवशन प्रौद्योगिकी के लिए वायु से ऑक्सीजन अलग करने की लागत कम करने हेतु अनुसंधान किए जा रहे हैं।

(आ) कार्बन डाईऑक्साइड अलगाव एवं औद्योगिक ऊर्जा: ग्रीनहाउस गैसों के कुल उत्सर्जन में औद्योगिक क्षेत्र का 37 प्रतिशत योगदान है। दुनिया भर में बनने वाली

चित्र 3: कार्बन डाईऑक्साइड के स्रोत, प्राप्ति, भूतलीय एवं भूमिगत भंडारण के विकल्प

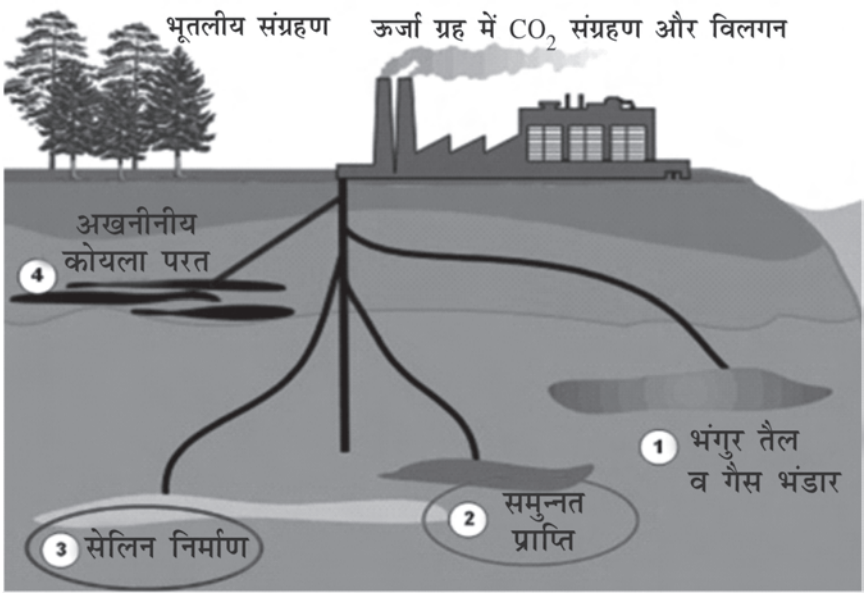

40 प्रतिशत ऊर्जा का उपभोग उद्योग करते हैं। उद्योगों के लिए कार्बन डाईऑक्साइड प्राप्ति एवं उपयोग की प्रक्रियाएं बिजली संयंत्रों के समान ही हैं। औद्योगिक कचरा एवं मैल कार्बन डाईऑक्साइड के अच्छे अवशोषक सिद्ध हो रहे हैं। क्योटो समझौते के बाद कार्बन प्रबंधन को अधिक बढ़ावा देने के लिए समुचित प्रौद्योगिकी की आवश्यकता है।

(इ) भूतलीय कार्बन डाईऑक्साइड अलगाव: भूतल पर कार्बन डाईऑक्साइड का अलगाव मुख्यतया जैविक ही होता है। जंगलों, पेड़ों, फसलों तथा मिट्टी में कार्बन अवशोषित होता है और ये सभी कार्बन डाईऑक्साइड सिंक का कार्य करते हैं। अनुसंधान एवं विकास प्रयोगशालाओं तथा विश्वविद्यालयों में अभी पौधों में बढ़ी हुई प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया, शैवाल का प्रयोग कर माइक्रो मीडिएटेड कार्बन डाईऑक्साइड अलगाव एवं कार्बनिक एनहाइड्रेटेड एंजाइम उत्प्रेरण में अनुसंधान चल रहा है। जीनोम विज्ञान में प्रगति हो रही है और कार्बन डाईऑक्साइड के निपटारे के नए तरीके प्रदान किए जा रहे हैं। परती भूमि प्राप्त करने एवं उन पर वृक्ष लगाने से भूमि के ऊपर और नीचे कार्बन डाईऑक्साइड अलगाव की संभावना है और उससे कार्बन के बाजार में भी वृद्धि हो सकती है।

(ई) कार्बन डाईऑक्साइड का भूमिगत भंडारण: कार्बन डाईऑक्साइड की प्रत्यक्ष एवं परोक्ष प्राप्ति पर अनुसंधान के प्रयास चल रहे हैं। कार्बन डाईऑक्साइड को गहरे लवणयुक्त जलीय चट्टानी परतों एवं चट्टानों तथा खनिजों में दफन किया जा सकता है। कार्बन डाईऑक्साइड का भंडारण प्रदर्शन के चरण में है और दुनिया भर में बड़े स्तर पर कई प्रयोग किए गए हैं। समुद्र तल में भूमिगत गहरी चट्टानी परतों में कार्बन डाईऑक्साइड के भंडारण के मामले में नॉर्वे के स्लाइपनर में पहली सफल परियोजना क्रियान्वित की गई है। इसने 1996 से ही लवणीय चट्टानी परतों में प्रतिवर्ष 10 लाख टन कार्बन डाईऑक्साइड

कार्बन प्रबंधन की दिशा में पहले कदम के रूप में भंडारित कार्बन डाईऑक्साइड का उपयोग इसे आकर्षक बनाता है। यह जोखिम रहित विकल्प है और इससे मूल्य-वर्द्धित उत्पाद प्राप्त होते हैं। जैविक रूप से कार्बन डाईऑक्साइड प्रकाश संश्लेषण में कार्बन सिंक उत्पन्न करने तथा वनों को बढ़ावा देने में सहायता करती है।

प्रविष्ट कराई है। बेसाल्टिक चट्टानें कैल्शियम एवं मैग्नीशियम सिलिसेट को कार्बन युक्त खनिजों में परिवर्तित करने की संभावना जगाते हैं। भूमिगत स्थानों में कार्बन डाईऑक्साइड को सुपरक्रिटिकल चरण में इकट्ठा किया जाता है, जिसके लिए 304.1 °C तापमान तथा 73.8 बार दबाव की आवश्यकता होती है। प्रत्येक भौगोलिक स्थिति अलग होती है और कार्बन डाईऑक्साइड के भूमिगत भंडारण हेतु भूसंरचना के अध्ययन की आवश्यकता होती है। प्राप्ति एवं भंडारण की जिन प्रणालियों का अध्ययन चल रहा है, उनमें भौतिक अथवा स्ट्रेटिग्राफिक ट्रैपिंग, मिनरलॉजिकल ट्रैपिंग, भूरासायनिक मिश्रण एवं अवशिष्ट गैस मिश्रण शामिल हैं। प्रविष्ट कराई गई कार्बन डाईऑक्साड की दीर्घकालिक निगरानी हेतु एवं सुरक्षित भंडारण हेतु 3डी भूसंवेदी अध्ययन करने हेतु प्रक्रियाएं विकसित करने की आवश्यकता है।

(उ) कार्बन डाईऑक्साइड के अलगाव द्वारा ऊर्जा ईंधन: पुराने पड़ चुके तेल क्षेत्रों में अधिक तेल की प्राप्ति हेतु कार्बन डाईऑक्साइड प्रविष्ट कराए जाने का कार्बन डाईऑक्साइड अलगाव की प्रक्रिया के साथ किफायती तालमेल हो सकता है। वातावरण में कार्बन डाईऑक्साइड के न्यूनतम उत्सर्जन के लिए तैयार की गई। परियोजना को समुचित प्रोत्साहन दिए जाएं तो ऊर्जा सुरक्षित करने में वह महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। कार्बन डाईऑक्साइड के भूमिगत भंडारण एवं उसके कारण पुराने तेल भंडारों में तरल पदार्थों की श्यानता अर्थात् चिपचिपेपन अथवा गाढ़ेपन में परिवर्तन से ऊर्जा के लिए अतिरिक्त ईंधन प्राप्त हो सकता है। तेल क्षेत्रों के ही समान खनन के अयोग्य कोयला भी कार्बन डाईऑक्साइड के भंडारण में प्रयोग किया जा सकता है। कोयले में कार्बन डाईऑक्साइड के औसतन तीन अणु अवशोषित हो जाते हैं और मीथेन का एक अणु विस्थापित हो जाता है, जिससे कोल बेड मीथेन की अधिक प्राप्ति होती है। अमेरिका, जापान, चीन तथा भारत में अनुसंधान चल रहे हैं।

(ऊ) कार्बन डाईऑक्साइड के उपयोग की प्रौद्योगिकियां: कार्बन प्रबंधन की दिशा में पहले कदम के रूप में भंडारित कार्बन डाईऑक्साइड का उपयोग इसे आकर्षक बनाता है। यह जोखिम रहित विकल्प है और इससे मूल्य-वर्द्धित उत्पाद प्राप्त होते हैं। जैविक रूप से कार्बन डाईऑक्साइड प्रकाश संश्लेषण में कार्बन सिंक उत्पन्न करने तथा वनों को बढ़ावा देने में सहायता करती है। रासायनिक रूप से कार्बन डाईऑक्साइड की कम रासायनिक सक्रियता है किंतु समुचित उत्प्रेरकों का प्रयोग कर ताप तथवा दाब के माध्यम से इसे रासायनिक अभिक्रियाओं की ओर प्रवृत्त किया जा सकता है। कार्बन डाईऑक्साइड को एथेनॉल जैसे ईंधनों अथवा मीथेनॉल अथवा

कार्बन डाईऑक्साइड अलगाव एवं कार्बनिक एनहाइड्रेटेड एंजाइम उत्प्रेरण में अनुसंधान चल रहा है। जीनोम विज्ञान में प्रगति हो रही है और कार्बन डाईऑक्साइड के निपटारे के नए तरीके प्रदान किए जा रहे हैं। परती भूमि प्राप्त करने एवं उन पर वृक्ष लगाने से भूमि के ऊपर और नीचे कार्बन डाईऑक्साइड अलगाव की संभावना है और उससे कार्बन के बाजार में भी वृद्धि हो सकती है।

उर्वरकों के उत्पादन में, खाद्य प्रसंस्करण एवं कार्बोनेटेड पेयों के उत्पादन में प्रयोग किया जा सकता है। खराब जल अथवा समुद्र में सूक्ष्म शैवाल जैसे जैव-अभिक्रिया माध्यम में इसे ईंधन, औषधि तथा मूल्य वर्द्धित उत्पादों में बदला जा सकता है।

(ए) समुद्र एवं लौह उर्वरण में कार्बन डाईऑक्साइड का भंडारण: समुद्र कार्बन डाईऑक्साइड के विशाल भंडार होते हैं और इन्हें कार्बन डाईऑक्साइड अलगाव के योग्य माना गया है। कार्बन डाईऑक्साइड को विभिन्न गहराइयों में समुद्र के पानी में प्रविष्ट कराया जा सकता है। 300 मीटर से कम की उथली गहराइयों से यह वापस वातावरण में आ सकती है। 1000 मीटर के लगभग गहराई में इसे प्रविष्ट कराने से यह वातावरण में देर से लौटती है किंतु इससे समुद्री प्रजातियों के अस्तित्व पर संकट आ सकता है। 3000 मीटर की गहराई पर तरल कार्बन डाईऑक्साइड प्रविष्ट कराने से यह स्थायी झील के समान बन जाएगी, जो पानी से अधिक सघन होगी और सुरक्षित होगी। अन्य विकल्प हैं - थर्मोहाइलाइन क्षेत्रों में जमी हुई कार्बन डाईऑक्साइड का निस्तारण, समुद्री साइनोबैक्टीरिया में कार्बन डाईऑक्साइड का भंडारण तथा समुद्री भोजन एवं फाइटोप्लैंकटॉन के उत्पादन को उत्प्रेरित करने हेतु समुद्र के ऊपरी तल में लोहे के बुरादे का प्रयोग। विभिन्न समुद्री क्षेत्रों में कार्बन डाईऑक्साइड से उत्प्रेरित समुद्री उर्वरण की क्षमता के परीक्षण हेतु विराट स्तर पर किए गए प्रयोगों को सीमित सफलता प्राप्त हुई है। परीक्षणों से पहले नियमन होने चाहिए।

कार्बन डाईऑक्साइड की प्राप्ति एवं अलगाव के विभिन्न विकल्प चित्र 3 में प्रदर्शित किए गए हैं।

भारत सरकार एवं उद्योगों की सहायता से कार्बन डाईऑक्साइड अलगाव के अनुसंधान पर जोर दे रहा है। कार्बन डाईऑक्साइड प्राप्ति एवं अलगाव जैसे कुछ क्षेत्रों पर जोर है और अन्य क्षेत्रों में छोटे-मोटे काम चल रहे हैं। प्रौद्योगिकी विशाल है और सभी में कार्य करने की आवश्यकता है। दिल्ली में हमने ऊर्जा उद्योग में सीसीएसयू पर क्षमता निर्माण कार्यशाला आयोजित की, जिसमें देश भर से शिक्षा एवं उद्योग के हितधारकों ने भाग लिया। निम्नलिखित सिफारिशें की गईं:

- कार्बन डाईऑक्साइड प्राप्ति परीक्षण संयंत्र हो, जो प्रक्रिया को किफायती बनाने में सहयोग करे

भारत सरकार एवं उद्योगों की सहायता से कार्बन डाईऑक्साइड अलगाव के अनुसंधान पर जोर दे रहा है। कार्बन डाईऑक्साइड प्राप्ति एवं अलगाव जैसे कुछ क्षेत्रों पर जोर है और अन्य क्षेत्रों में छोटे-मोटे काम चल रहे हैं। प्रौद्योगिकी विशाल है और सभी में कार्य करने की आवश्यकता है।

- अमोनिया आधारित कार्बन डाईऑक्साइड प्राप्ति के विकास के लिए बहुक्षेत्रीय अनुसंधान कार्यक्रम हो, जिसमें रसायन एवं उर्वरक, कृषि, इस्पात तथा बिजली मंत्रालयों एवं शिक्षण संस्थान शामिल हों।

देश में इस कार्य की गति बढ़ाने के लिए विभिन्न हितधारकों के मध्य जानकारी साझा कराने हेतु एक नोडल संस्था की आवश्यकता है।

निष्कर्ष एवं भावी रूपरेखा

21वीं शताब्दी में ऊर्जा का कायाकल्प होने जा रहा है। मांग वाले क्षेत्रों के बजाय ऊर्जा की आपूर्ति वाले क्षेत्रों की ओर जोर दिया जा रहा है। जलवायु एवं ऊर्जा को संपोषणीय बनाने वाली नीतियां कोयले का उपभोग करने वाले सभी क्षेत्रों पर प्रभाव डालेंगी और इसलिए वे आर्थिक गतिविधियों के केंद्र में आ जाएंगी। योजनाकारों एवं अनुसंधानकर्ताओं को जलवायु परिवर्तन के उद्देश्य पूरे करने हेतु अपने लक्ष्यों का पुनरीक्षण करना होगा। ऊर्जा दक्षता हेतु नए ऊर्जा उपकरणों का विनिर्माण करना होगा। सौर ताप उत्पादक एवं संग्राहक तैयार करने होंगे। साथ ही बहुक्षेत्रीय कार्बन अलगाव प्रौद्योगिकी के विकास हेतु कार्य करना होगा। इन प्रौद्योगिकियों की वाणिज्यिक पुष्टि अभी तक नहीं हुई है और ऊर्जा उद्योगों को प्रौद्योगिकी के विषय में अपने वर्तमान नजरिये साझा करने होंगे। औद्योगिक वृद्धि, कृषि के बेहतर प्रबंधन एवं कृषि वानिकी प्रणालियों की ओर एकीकृत दृष्टिकोण आवश्यक हो गया है। चूंकि भारत ऊर्जा उद्योग में वैश्विक उपस्थिति दर्ज कराने के लिए तैयार है, अत: इन पहलों के जरिये अनुसंधान एवं विकास में निवेश बढ़ेगा तथा विभिन्न हितधारकों के बीच राष्ट्रीय स्तर पर ज्ञान की साझेदारी हो सकेगी। ❑

संदर्भ

1. एकीकृत ऊर्जा नीति, विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट, योजना आयोग 2006, भारत सरकार एवं कोयला मंत्रालय, भारत सरकार की वार्षिक रिपोर्ट
2. मालती गोयल, एस एन चरण, ए के भंडारी, 2008, इन्सा की भारतीय रिपोर्ट 2004-2008 में CO2 Sequestration: Recent Indian Research, IUGS संपादन ए के सिंघवी, ए भट्टाचार्य एवं एस गुहा, इन्सा प्लेटिनम जुबली पब्लिकेशन, पृष्ठ संख्या 56-60
3. एस बाचू, डब्ल्यू डी गुंटर एवं ई एच पर्किन्स, 1994, Aquifer disposal of CO2: Hydrodynamic and mineral trapping. *Energy Conversion Management* 35:269-279
4. Accelerating the uptake of CCS: Industrial use of captured carbon dioxide. 2011. Parsons Brinckerhoff in collaboration with the Global CCS Institute, Report no., March
5. मालती गोयल, Perspectives in CO2 Sequestration technology and an Awareness Programme, in CO2 Sequestration Technologies for Clean Energy, संपादन एस जेड कासिम एवं मालती गोयल, दया पब्लिशिंग हाउस, पृष्ठ संख्या 22-39, 2010
6. जोक विस्नीव्स्की, आर के डिक्सन, जे डी किनस्वान, आर एन सैंपसन और ए ई लूगो, 1993, Carbon dioxide sequestration in terrestrial ecosystem. *Climate Research* 3:1-5

योजना के पुराने अंक

योजना के पुराने अंकों के लिए पाठकों की जिज्ञासाएं लगातार मिलती रहती हैं। हम आपकी इस उत्सुकता का स्वागत व सम्मान करते हैं। योजना की सभी 13 भाषाओं की पुरानी प्रतियां योजना की वेबसाईट पर www.yojana.gov.in पर उपलब्ध हैं जहां से इन्हें डाउनलोड किया जा सकता है। वेबसाइट पर हमारे विशेष web exclusive आलेख भी उपलब्ध हैं। **-संपादक**

वैकल्पिक ऊर्जा, पर्यावरण और विकास

रवि शंकर

भारत सौर ऊर्जा और पवन ऊर्जा जैसे गैर परंपरागत स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों के दोहन के लिए पर्याप्त कदम उठा रहा है। भारत का लक्ष्य अपनी अक्षय ऊर्जा क्षमता को मौजूदा 25000 मेगावाट से बढ़ाकर वर्ष 2017 तक दोगुना से भी ज्यादा यानी 55000 मेगावाट करने का है। ग्रीनपीस की एक रिपोर्ट के मुताबिक भारत को वैकल्पिक ऊर्जा प्रणालियों में निजी और सरकारी स्तर पर 2050 तक 6,10,000 करोड़ रुपये सालाना निवेश करने की जरूरत बताई गई थी। इस निवेश से भारत को जीवाश्म ईंधन पर खर्च किए जाने वाले सालाना एक खरब रुपये की बचत होगी और इस नए निवेश के कारण अगले कुछ सालों में ही भारत रोजगार के 24 लाख नए अवसर भी पैदा कर सकेगा

भारत ने 2022 तक अक्षय ऊर्जा स्रोतों से 1.75 लाख मेगावॉट बिजली बनाने का लक्ष्य रखा है जिसमें एक लाख मेगावॉट सौर ऊर्जा से, 60 हजार मेगावॉट पवन ऊर्जा से, 10 मेगावॉट जैव ऊर्जा से और 5 मेगावॉट लघु पनबिजली ऊर्जा से बनाना शामिल है। हालांकि अपतटीय पवन ऊर्जा की उम्मीदों को देखते हुए यह लक्ष्य बढ़ाया जा सकता है। भारत ने इस संबंध में अपना लक्ष्य पेरिस में प्रस्तावित विश्व पर्यावरण संधि के लिए 'यूनाइटेड नेशंस फ्रेमवर्क कंवेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज (यूएनएफसीसीसी) के सामने रखा। इसमें जलवायु परिवर्तन से जुड़ी चुनौतियों व दुष्प्रभावों से निटपने की विस्तृत जानकारियों व उपायों का उल्लेख है। गौरतलब है कि प्रधानमंत्री के मार्गदर्शन में भारत का राष्ट्रीय लक्षित स्वैच्छिक योगदान (आईएनडीसी) तैयार किया गया। पेरिस में 30 नवंबर से 11 दिसंबर तक होने वाले जलवायु परिवर्तन सम्मेलन के लिए सभी देशों को अपना-अपना आईएनडीसी देना जरूरी था। लिहाजा अगले डेढ़ दशक में उत्सर्जन को करीब एक-तिहाई घटाने का वायदा पूरा हो सकता है। पर इस दौरान अजीवाश्मीय ईंधन से चालीस प्रतिशत विद्युत उत्पादन करने का लक्ष्य व्यावहारिक नहीं लगता। खासकर तब, जब स्वच्छ ऊर्जा पर अतिशय जोर देने और इसके लिए समुचित संसाधन होने के बावजूद अमेरिका में 2030 तक गैर जीवाश्म ईंधन से विद्युत उत्पादन कुल उत्पादन के तीस फीसदी से अधिक नहीं हो पाएगा।

पवन ऊर्जा: एक परिप्रेक्ष्य

भारत में राष्ट्रीय अपतटीय पवन ऊर्जा नीति को मंजूरी दी गई है। यह नीति सफल हो गई तो देश के ऊर्जा बाज़ार का नक्शा बदल सकती है। इससे पर्यावरण की सुरक्षा को लेकर भारत का कद भी दुनिया में लंबा होगा। फिलहाल पवन ऊर्जा के क्षेत्र में विश्व के प्रमुख देशों में अमरीका, जर्मनी, स्पेन चीन के बाद भारत का पांचवां स्थान है। 45 हजार मेगावाट तक के उत्पादन की संभावना वाले इस क्षेत्र में फिलहाल देश में 1210 मेगावाट का उत्पादन होता है। खैर, देखा जाए तो देश के लगभग 13 राज्यों के 190 से अधिक स्थानों में पवन ऊर्जा के उत्पादन की प्रबल संभावना विद्यमान है। भारत में पिछले 40 साल में जनता की अरबों डॉलर गाढी कमाई इनमें लगा दी गई लेकिन देश की बिजली आपूर्ति में नाभिकीय ऊर्जा अब तक मात्र 2.5 प्रतिशत योगदान दे पाई है जोकि हाल में शुरू हुए पवन ऊर्जा उद्योग के 5 प्रतिशत उत्पादन का सिर्फ आधा है जबकि भारत में गैर पारंपरिक ऊर्जा की अपार संभावनाएं हैं, क्योंकि हमारे पास 7,600 किलोमीटर लंबा समुद्रतट है। गुजरात में ही इससे 1.06 लाख मेगावॉट बिजली बनाने की क्षमता है। तमिलनाडु में 60 हजार मेगावॉट बिजली इस परियोजना से बनाई जा सकती है। ऊर्जा के गैर पारंपरिक स्रोतों को बढ़ावा देने में जुटी केंद्र सरकार ने देश में समुद्री तट के इलाकों में पवन ऊर्जा के लिए विशेष आर्थिक क्षेत्र बनाने का फैसला किया गया है।

पवन ऊर्जा का प्रचलन दिनों-दिन बढ़ रहा है और आज स्थिति यह है कि भारत

लेखक, शोधकर्ता, सामाजिक- कार्यकर्ता और पत्रकार है। सेंटर फॉर इन्वायरमेंट एंड फूड सिक्योरिटी में रिसर्च एसोशिएट और एपीएन न्यूज चैनल से जुड़े हैं। बीते एक दशक से देश के प्रमुख राष्ट्रीय समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं में लेखन कार्य। स्वामी सहजानंद सरस्वती किसान सूचना केंद्र नई दिल्ली द्वारा रचनात्मक पत्रकारिता सम्मान से सम्मानित। ईमेल: ravishankar.5107@gmail.com

भारत की दमदार पहलः सूर्यपुत्र देशों का संगठन

प्रधानमंत्री ने अपनी लंदन यात्रा के दौरान सूर्य पुत्र वाले राष्ट्रों को जोड़ने की बात कही है। पीएम का कहना है कि विश्व में 102 देश ऐसे हैं जो सूर्य पुत्र हैं यानी जहां सौर ऊर्जा का अच्छा इस्तेमाल हो सकता है। उन्होंने कहा भारत सूर्य शक्ति राष्ट्र बन सकता है। इसके लिए हमने सौर ऊर्जा, वायु ऊर्जा और अक्षय ऊर्जा से 150 गीगावॉट ऊर्जा पैदा करने का कार्य शुरू किया है। पीएम का मानना है कि हरित वित्त तथा प्रौद्योगिकी में अनुभव के चलते हम सुरक्षित, सस्ती तथा टिकाऊ ऊर्जा की आपूर्ति को प्रोत्साहन देने तथा जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए बेहतर स्थिति में हैं। इतना ही नहीं उन्होंने ब्रिटेन के प्रधानमंत्री डेविड कैमरन के साथ जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए मिलकर काम करने की प्रतिबद्धता जताई। दोनों मुल्कों का मानना है कि जलवायु परिवर्तन इस सदी की वैश्विक चुनौतियों में से एक है, जिसका राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। दोनों देशों के बीच ऊर्जा सहयोग बढ़ाने और विद्युत बाज़ार सुधार, ऊर्जा दक्षता, तटीय पवन, सौर ऊर्जा, स्मार्ट ग्रिड, ऊर्जा भंडारण और ऑफ ग्रिड नवीकरणीय ऊर्जा सेवाओं जैसे क्षेत्रों में भावी सहयोग को बढ़ावा देने के लिए दोनों मुल्कों नें अपनी सहमति जताई। साथ ही, दोनों नेताओं ने दिसंबर 2015 में पेरिस जलवायु सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन पर युनाइटेड नेशन्स फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएपसीसीसी) के तहत व्यापक समझौते के लिए मिलकर काम करने के लिए भी प्रतिबद्धता जताई है। ताकि उससे वैश्विक तापमान को दो डिग्री की सीमा से नीचे पहुंच के दायरे में रखा जा सकेगा। कैमरन ने वर्ष 2050 तक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कम से कम 80 प्रतिशत की कटौती करने की ब्रिटेन की प्रतिबद्धता पर जोर दिया। भारत ने भी 2030 तक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कम से कम 80 प्रतिशत तक की कटौती करने की भारत की प्रतिबद्धता जताई।

पवन ऊर्जा उत्पादन में विश्व में पांचवा स्थान रखता है। दिसंबर 2013 तक भारत में नवीनीकृत ऊर्जा विकल्पों की स्थापित क्षमता कुल 29,989 मेगावॉट के आसपास है। इनमें पवन ऊर्जा 20149.50, सौर ऊर्जा 2180, लघु जल विद्युत ऊर्जा 3783.15, बायोमास ऊर्जा 1284.60, बायोगैस कोजेनेशन 2512.88, अपशिष्ट ऊर्जा से 99.08 मेगावॉट की स्थापित क्षमता है। ये आंकड़े देश की ऊर्जा जरूरतों की तुलना में भले ही कम लगे लेकिन यही वे सारे संसाधन हैं जहां भरपूर संभावनाएं भी छिपी हुई है। लेकिन गौर करने वाली बात यह है कि उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्यप्रदेश समेत कई राज्य देश के वैकल्पिक ऊर्जा दायित्व में आधे हिस्से का योगदान भी नहीं दे पा रहे हैं। भारत के सबसे बड़े स्वचालित इलेक्ट्रॉनिक व्यापार विनमय इंडियन एनर्जी एक्सचेंज (आईईएक्स) के मुताबिक भारत में ऐसे 16 राज्य हैं, जिन्होंने देश के वैकल्पिक ऊर्जा दायित्व में 70 फीसदी से कम का योगदान दिया है।

पवन ऊर्जा की वैश्विक स्थिति

सन् 1990 में भारत में पवन ऊर्जा के विकास पर ध्यान दिया गया और देखते ही देखते इस वैकल्पिक ऊर्जा का योगदान काफी बढ़ गया और हमारी ऊर्जा जरूरतें भी लगातार बढ़ती रही लेकिन इसके मुकाबले हमारे पास संसाधन बहुत सीमित हैं। यही कारण है कि विश्वभर में वैकल्पिक ऊर्जा की हर तरफ बात हो रही है। विश्वभर में आज नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। वर्ष 2013 में अमरीका ने इसके लिए 35.8 प्रतिशत निवेश, यूरोपीय संघ ने 48.4, चीन ने 56.3 जबकि इनकी तुलना में भारत ने मात्र 6.1 प्रतिशत निवेश प्रतिवर्ष नवीकरणीय ऊर्जा पर किया है। इसी कड़ी में हम देखते हैं कि जर्मनी ने सौर ऊर्जा क्षमता 114 से बढ़कर 36 हजार मेगावाट और पवन ऊर्जा 6000 से बढ़कर 35 हजार मेगावाट तक पहुंच गई। 2020 तक कुल ऊर्जा में अक्षय ऊर्जा की भागीदारी 35 प्रतिशत और 2050 तक 80 प्रतिशत बढ़ाने का लक्ष्य रखा गया है। पवन ऊर्जा के क्षेत्र में चीन सालाना 66 फीसदी की दर से विकास कर रहा है। सौर ऊर्जा के मामले में भी चीन दूसरे देशों की तुलना में काफी आगे है। सौर प्लेट के निर्माण के मामले में चीन दुनिया भर में अव्वल है। पवन ऊर्जा के मामले में स्पेन ने भी दुनिया के लिए एक उदाहरण पेश किया है। पवन ऊर्जा के उत्पादन को बढ़ाने के लिए वहां की सरकार ने काफी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है और यह कार्य पूरी तरह से योजना बनाकर किया गया है। अमेरिका में कुल बिजली उत्पादन में पवन ऊर्जा की हिस्सेदारी महज एक फीसदी है। पर वहां के नीति निर्माताओं ने 2020 तक इसे बढ़ाकर पंद्रह फीसदी तक पहुंचाने का लक्ष्य निर्धारित किया है।

पवन ऊर्जा के उत्पादन के मामले में ब्रिटेन अभी शीर्ष पर है। अभी वहां 404 मेगावाट बिजली का उत्पादन हवा के झोंकों से किया जा रहा है। जिससे तकरीबन तीन लाख घरों की ऊर्जा जरूरतों की पूर्ण रूप से पूर्ति की जा रही है। उल्लेखनीय है कि विंड फार्म की अवधारणा भी सबसे पहले ब्रिटेन में ही 1991 में आई थी। विंड फार्म से तात्पर्य यह है कि एक खास जगह पर बड़ी संख्या में टरबाइन लगाकर बड़े पैमाने पर पवन ऊर्जा का उत्पादन। वहां के सरकारी आंकड़ों के मुताबिक अभी ब्रिटेन में ऐसी 155 परियोजनाओं के तहत उन्नीस सौ टरबाइन पवन ऊर्जा का उत्पादन कर रहे हैं जिसका लाभ तकरीबन तेरह लाख घरों को मिल रहा है। इसका सकारात्मक असर पर्यावरण पर भी पड़ रहा है। क्योंकि इससे कार्बन उत्सर्जन में तकरीबन 52 लाख टन की कमी आई है।

सौर ऊर्जा

भारत सौर ऊर्जा और पवन ऊर्जा जैसे गैर परंपरागत स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों के दोहन के लिए पर्याप्त कदम उठा रहा है। भारत का लक्ष्य अपनी अक्षय ऊर्जा क्षमता को मौजूदा 25000 मेगावाट से बढ़ाकर वर्ष 2017 तक दोगुना से भी ज्यादा यानी 55000 मेगावाट करने का है। ग्रीनपीस की एक रिपोर्ट के मुताबिक भारत को वैकल्पिक ऊर्जा प्रणालियों में निजी और सरकारी स्तर पर 2050 तक 6,10,000 करोड़ रुपये सालाना निवेश करने की जरूरत बताई गई थी। इस निवेश से भारत को जीवाश्म ईंधन पर खर्च किए जाने वाले सालाना एक खरब रुपये की बचत होगी और इस नए

निवेश के कारण अगले कुछ सालों में ही भारत रोजगार के 24 लाख नए अवसर भी पैदा कर सकेगा। अगर भारत सरकार रिपोर्ट के आधार पर इन उपायों को लागू करती है तो 2050 तक भारत की कुल ऊर्जा जरूरतों का 92 प्रतिशत प्राकृतिक संसाधनों से प्राप्त किया जाएगा। और सबसे चौंकाने वाली बात यह होगी कि उस वक्त भी हम आज से भी सस्ती बिजली प्राप्त कर सकेंगे। फिलहाल देश में पवन ऊर्जा तकनीक से करीब 1,257 मेगावाट बिजली पैदा की जा रही है। पर्यावरण प्रदूषण बचाने में पवन ऊर्जा को सबसे कारगर उपाय माना जाता है। यही वजह है कि पवन ऊर्जा के मामले में ब्रिटेन दुनिया में सबसे आगे है। चीन, स्पेन, अमेरिका में भी पवन ऊर्जा के क्षेत्र में तेजी से विकास हो रहा है। देश में भी इसकी गति बढ़ाने की जरूरत है।

जलवायु राजनय

गौरतलब है कि जलवायु राजनय के लिए यह साल बेहद महत्वपूर्ण वर्ष इसलिए भी है क्योंकि पेरिस में होने जा रही कॉन्फ्रेंस ऑफ पार्टीज को वैश्विक नतीजे पाने के लिहाज से अहम माना जा रहा है। असल में विश्व को एक न्यायसंगत जलवायु समझौते की जरूरत है जो वैश्विक तापमान वृद्धि को 2 डिग्री सेल्शियस से कम रखे, वरना इसके नतीजे बहुत विनाशकारी साबित हो सकते हैं। दुनिया के कई नाजुक हिस्सों में इसके दुष्परिणाम देखे जा रहे हैं। हालांकि दिसंबर में होने वाले महा-सम्मेलन से पहले भारत ने एक व्यापक व न्यायसंगत करार करने के प्रति अपनी वचनबद्धता दोहराई है। भारत ने संयुक्त राष्ट्र को आश्वासन दिया है कि वह वर्ष 2030 तक कार्बन उत्सर्जन में 33-35 फीसद कटौती करेगा। यह कमी 2005 को आधार मानते हुए की जाएगी। इसके साथ ही भारत ने 2030 तक अजीवाश्मीय ईंधन स्रोतों के जरिए 40 फीसदी बिजली उत्पादन का भी फैसला लिया है। यह पिछले लक्ष्य का ही विस्तार है। इमिशन इंटेसिटी कार्बन उत्सर्जन की वह मात्रा है जो 1 डॉलर कीमत के उत्पाद को बनाने में होती है। केंद्रीय पर्यावरण मंत्री के अनुसार भारत ने आईएनडीसी में आठ गोल तय किए हैं। इनमें सबसे महत्वाकांक्षी लक्ष्य वर्ष 2030 तक गैर जीवाष्म ऊर्जा का हिस्सा बढ़ाकर 40 प्रतिशत करने का है। बता दें कि ये फ्यूल परंपरागत फ्यूल सोर्सेस से तैयार किए गए फ्यूल की तुलना में कम प्रदूषण फैलाते हैं। इसके अलावा इतने जंगल विकसित किए जाएंगे, जो 2.5 से 3 टन कार्बन डाइऑक्साइड सोखेंगे। शुरुआती अनुमान के मुताबिक, भारत को इसके लिए करीब 14 लाख करोड़ रुपये खर्च करने पड़ेंगे।

बहरहाल, दुनिया के किसी भी देश को जहां एक ओर अपने विकास दर को बनाकर रखना होता है वहीं दूसरी ओर पर्यावरण की समुचित चिंता करना उसका पहला कर्तव्य है लेकिन ग्लोबल वार्मिंग कई साल से पूरी दुनिया के लिए चिंता की वजह बनी हुई है। वैश्विक आंकड़ों को देखें तो चीन दुनिया का सबसे अधिक प्रदूषण फैलाने वाला (करीब 25 प्रतिशत) कार्बन डाइऑक्साइड छोड़ने वाला देश है। यहां जैव ईंधन की सबसे ज्यादा खपत है। जबकि औद्योगिक देशों में प्रति व्यक्ति के हिसाब से अमरीका दूसरे नंबर पर (लगभग 19 फीसदी) सबसे अधिक प्रदूषण फैलाता है। ये दोनों देश मिल कर दुनिया के लगभग आधे प्रदूषण के लिए जिम्मेदार हैं और तीसरे पर भारत (करीब छह फीसदी) है। ये सभी देश आज

क्लाइमेट जस्टिस से मानव कल्याण

इसी साल सितंबर माह में संयुक्त राष्ट्र महासभा की 70वीं वर्षगांठ पर अमेरिका में बोलते हुए प्रधानमंत्री ने पर्यावरण का जिक्र करते हुए कहा कि अगर हम जलवायु परिवर्तन की चिंता करते हैं तो कहीं न कहीं हमारे निजी सुख को सुरक्षित करने की बू आती है लेकिन यदि हम क्लाइमेट जस्टिस की बात करते हैं तो गरीबों को प्राकृतिक आपदाओं में सुरक्षित रखने का एक संवेदनशील संकल्प उभरकर आता है। क्योंकि जलवायु परितर्वन का दुष्प्रभाव सबसे अधिक निर्धन और वंचित लोगों पर होता है। जब प्राकृतिक आपदा आती है, तो सबसे ज्यादा मुसीबत इन्हीं पर टूटती है। जब बाढ़ आती है, ये बेघर हो जाते हैं। जब भूकंप आता है, तो इनके घर तबाह हो जाते हैं। जब सूखा पड़ता है, सबसे ज्यादा प्रभाव इन पर पड़ता है और जब कड़के की ठंड पड़ती है, तब भी बे-घरबार लोग सबसे ज्याादा मुसीबतें झेलते हैं। इसलिए मैं मानता हूं कि चर्चा जलवायु परितर्वन की बजाए जलवायु न्याय पर हो। बहरहाल, क्लाइमेंट चेंज की चुनौती से निपटने में उन समाधानों पर बल देने की आवश्यकता है, जिनसे हम अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में सफल हो सकें। हमें एक वैश्विक जन-भागीदारी का निर्माण करना होगा, जिसके बल पर टेक्नोलॉजी, इन्नोवेशन और फाइनेंस का उपयोग करते हुए हम क्लीन और रिन्यूबल एनर्जी को सर्व सुलभ बना सकें। इसके अलावा हमें अपनी जीवन-शैली में भी बदलाव करने की आवश्यकता है, ताकि ऊर्जा पर हमारी निर्भरता कम हो और हम सस्टेनेबल कंजंप्शन की ओर बढ़े। साथ ही एक ग्लोबल एजूकेशन प्रोग्राम शुरू करने की आवश्यकता है, जो हमारी अगली पीढ़ी को प्रकृति के रक्षण एवं संवर्धन के लिए तैयार करे। क्योंकि ऐसा किए बिना विश्व शांति, न्यायोचित व्यवस्था और सतत विकास संभव नहीं हो सकता।

असल में समूचा विश्व एक दूसरे से जुड़ा हुआ है और एक दूसरे पर निर्भर है और एक दूसरे से संबंधित है, इसलिए हमारी अंतर्राष्ट्रीय साझेदारी भी पूरी मानवता के कल्याण को अपने केंद्र में रखना होगा। ऐसे में पीएम ने क्लाइमेट जस्टिस शब्द को सामने रखकर कहा कि विकसित देश क्लाइमेंट चेंज पर कमिटमेंट पूरा करें और हम सब स्वच्छ पर्यावरण के लिए जीवन-शैली बदलें। सस्टेनेबल डेवलपमेंट सभी देशों के लिए राष्ट्रीय उत्तरदायित्व का विषय है। क्योंकि हम सभी यह मानते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय साझेदारी अनिवार्य रूप से हमारे सभी प्रयासों के केंद्र में होनी चाहिए। फिर चाहे यह डेवलपमेंट हो या जलवायु परिवर्तन की चुनौती हो, हमारे सामूहिक प्रयासों का सिद्धांत है कॉमन विथ डिरेंसिएटेड रिस्पांसिबिलिटी। हम एक ऐसे विश्व का निर्माण करें जहां प्रत्येक जीव मात्र सुरक्षित महसूस करे, उसे अवसर उपलब्ध हो और सम्मान मिले, अपनी भावी पीढ़ी के लिए अपने पर्यावरण को और भी बेहतर स्थिति में छोड़कर जाए। निश्चित रूप से इससे अधिक महान कोई और उद्देश्य नहीं हो सकता। परंतु यह भी सच है कि कोई भी उद्देश्य इससे भी अधिक चुनौतीपूर्ण नहीं है।

जैव ईंधन की सबसे ज्यादा खपत करते हैं। इस आधार पर कहा जा सकता है कि चीन, अमेरिका और भारत दुनिया में सबसे अधिक प्रदूषण उत्पन्न करने वाले देश हैं। यहां तक कि पर्यावरण बचाने की वकालत करने और खुद को इसका झंडाबरदार बताने वाले देश जर्मनी और ब्रिटेन की बात है तो यह भी दुनिया में सबसे ज्यादा प्रदूषण फैलाने वाले शीर्ष 10 देशों में शुमार हैं। बहरहाल, पूरी दुनिया के सामने यह एक बड़ी चुनौती है कि जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को कैसे कम किया जाए।

क्रियान्वयन में चुनौतियां

हालांकि इस घोषणा से भारत के सामने कई चुनौतियां खड़ी हो सकती है। यहां अभी गरीबी की स्थिति है और भारत का प्रति व्यक्ति कार्बन उत्सर्जन भी बेहद कम, यानि करीब 3.5 टन है जबकि अमेरिका और चीन का कार्बन उत्सर्जन प्रति व्यक्ति 12 टन है। भारत के पास दुनिया की कुल भूमि का कुल 2.5 प्रतिशत हिस्सा है जबकि उसकी जनसंख्या विश्व की कुल आबादी की 17.5 प्रतिशत है और उसके पास दुनिया का कुल 17.5 प्रतिशत पशुधन है। भारत की 30 प्रतिशत आबादी अब भी गरीब है, 20 प्रतिशत के पास आवास नहीं है, 25 प्रतिशत के पास बिजली नहीं है जबकि करीब नौ करोड़ लोग पेयजल की सुविधा से वंचित हैं। इतना ही नहीं, देश की खाद्य सुरक्षा के दबाव में भारत का कृषि क्षेत्र कार्बन उत्सर्जन घटाने की हालत में नहीं है। सबके लिए भोजन मुहैया कराना फिलहाल प्राथमिकता है भारत में होने वाले कार्बन उत्सर्जन में कृषि क्षेत्र की हिस्सेदारी 17.6 फीसद है। कार्बन उत्सर्जन में कृषि क्षेत्र की कुल हिस्सेदारी में सबसे बड़ा हिस्सा पशुओं का है। पशुओं से करीब 56 फीसद उत्सर्जन होता है। सबको भोजन देने की सरकार की योजना के अंतर्गत राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून बन चुका है। इसके तहत देश की 67 फीसद आबादी को अति रियायती दर में अनाज उपलब्ध कराया जाना है। इसके लिए 6.10 करोड़ टन से अधिक खाद्यान्न की जरूरत हर साल पड़ेगी। दूसरी बड़ी चुनौती भारत की असिंचित खेती की है, जो पूरी तरह मानसून पर निर्भर है। लगातार पिछले चार सीजन से खेती सूखे से प्रभावित है। मानसून के इस रूखे व्यवहार को जलवायु परिवर्तन से ही जोड़कर देखा जा रहा है। ऐसे में भारत ने एक संतुलित आईएनडीसी तैयार किया है। गौर करने वाली बात यह है कि अभी तक 85 प्रतिशत देश अपने राष्ट्रीय निर्धारित योगदान (ईएनडीसी) कर चुके हैं लेकिन उनकी प्रतिबद्धता धरती के तापमान को 2 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ने से रोकने के लिए काफी नहीं है। भारत जैसे देश को अभी विकिसित होना है और उसे गरीबी मिटानी है, इसलिए वह कार्बन गैसों के उत्सर्जन को कम नहीं कर सकता है। प्रधानमंत्री ने 2030 तक 375 गेगावाट सौर ऊर्जा के उत्पादन का लक्ष्य रखा है। यदि यह लक्ष्य प्राप्त हो जाता है तो संभव है कि भारत का कार्बन उत्सर्जन कम हो जाए।

इस घोषणा से भारत के सामने कई चुनौतियां खड़ी हो सकती है। यहां अभी गरीबी की स्थिति है और भारत का प्रति व्यक्ति कार्बन उत्सर्जन भी बेहद कम, यानि करीब 3.5 टन है जबकि अमेरिका और चीन का कार्बन उत्सर्जन प्रति व्यक्ति 12 टन है। भारत के पास दुनिया की कुल भूमि का कुल 2.5 प्रतिशत हिस्सा है जबकि उसकी जनसंख्या विश्व की कुल आबादी की 17.5 प्रतिशत है और उसके पास दुनिया का कुल 17.5 प्रतिशत पशुधन है।

बहरहाल, आज मानव सभ्यता विकास के चरम पर है। भौतिक एवं तकनीकी प्रगति ने जीवन को बहुत आसान बना दिया है लेकिन भौतिक एवं तकनीकी प्रगति की इस आपसी प्रतिस्पर्धा ने आज मानव जीवन को बहुत खतरे में डाल दिया है। मानव के लिए पृथ्वी ही सबसे सुरक्षित ठिकाना है। विज्ञान की प्रगति आज तक इसका दूसरा विकल्प नहीं खोज पाई है लेकिन ज्ञान-विज्ञान एवं तकनीकी उन्नति ने धरती को काफी असुरक्षित कर दिया है। एक आम धारणा है कि पर्यावरण प्रदूषण, ग्लोबल वार्मिंग, ग्लेशियर के पिघलने से पर्यावरण एवं पृथ्वी को खतरा है लेकिन उससे भी बड़ा सवाल यह है कि सबसे बड़ा खतरा मानव जाति के लिए है। बाकी जीव जंतु तो किसी तरह से अपना अस्तित्व बचा सकते हैं लेकिन समस्त कलाओं के बावजूद मनुष्य के लिए यह नामुमकिन है। आज धरती पर हो रहे जलवायु परिवर्तन के लिए जिम्मेदार कोई और नहीं बल्कि समस्त मानव जाति है। भारत को विश्व में सातवें सबसे अधिक पर्यावरण की दृष्टि से खतरनाक देश के रूप में स्थान दिया गया है। वायु शुद्धता का स्तर, भारत के मेट्रो शहरों में पिछले 20 वर्षों में बहुत ही खराब रहा है। डब्ल्यूएचओ के अनुसार हर साल 24 करोड़ लोग खतरनाक प्रदूषण के कारण मर जाते हैं। पूर्व में भी वायु प्रदूषण को रोकने के अनेक प्रयास किए जाते रहे हैं पर प्रदूषण निरंतर बढ़ता ही रहा है।

यूं कहे मानवीय सोच और विचारधारा में इतना अधिक बदलाव आ गया है कि भविष्य की जैसे मानव को कोई चिंता ही नहीं है। इसमें कोई दो राय नहीं है कि अमानवीय कृत्यों के कारण आज मनुष्य प्रकृति को रिक्त करता चला जा रहा है और पर्यावरण के प्रति चिंतित नहीं है। जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरण असंतुलन के चलते भूमंडलीय ताप, ओजोन क्षरण, अम्लीय वर्षा, बर्फीली चोटियों का पिघलना, सागर के जल-स्तर का बढ़ना, मैदानी नदियों का सूखना, उपजाऊ भूमि का घटना और रेगिस्तानों का बढ़ना आदि विकट परिस्थितियां उत्पन्न होने लगी है। यह सारा किया कराया मनुष्य का है और आज विचलित, चिंतित भी स्वयं मनुष्य ही हो रहा है। बीते दो दशकों में यह स्पष्ट हुआ है कि वैश्वीकरण की नवउदारवादी और निजीकरण ने हमारे सामने बहुत-सी चुनौतियां खड़ी कर दी है। जिससे आर्थिक विकास के मॉडल लड़खड़ाने लगे है। खाद्य असुरक्षा और गरीबी ने न केवल गरीब देश पर असर डाला है। बल्कि पूर्व के धनी देशों को भी परेशानी में डाल दिया है। हमारे जलवायु ईंधन और जैव-विविधता से

कई तरह की भविष्यवाणियां भी की जा चुकी है, दुनिया अब नष्ट हो जाएगी, पृथ्वी जलमग्न हो जाएगी, सृष्टि का विनाश हो जाएगा। ज्यादातर ऐसा शोर पश्चिम देशों से ही उठता रहा है, जिन्होंने अपने विकास के लिए ना जाने प्रकृति के विरूद्ध कितने ही कदम उठाए हैं और लगातार उठ ही रहे हैं। आज भी कार्बन डाई आक्साइड उत्सर्जन करने वाले देशों में 70 प्रतिशत हिस्सा पश्चिमी देशों का ही है जो विकास की अंधी दौड़ का परिणाम है।

(जारी ... पृष्ठ 68 पर)

जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और आपदा प्रबंधन

अनिल कुमार गुप्ता

जलवायु परिवर्तन से विकास की गति के लिए बड़ा खतरा उत्पन्न हो गया है। इसका पहला कारण बाढ़, सूखा, गर्म हवाएं, चक्रवात, आंधी की लहरें आदि हैं और वहीं दूसरा कारण (अवसंरचना, दायरा और सेवाओं) पारितंत्रों का क्षरण या बदलाव, खाद्य उत्पादन में गिरावट, जल उपलब्धता की कमी तथा आजीविका पर नकारात्मक प्रभाव आदि हैं। इसके कारण लोगों की प्राकृतिक और मानव जनित आपदाओं की चपेट में आने की आशंकाएं बढ़ रही हैं

भारत जैसे विकासशील देशों जहां कृषि एवं अन्य संसाधनों का उपयोग आजीविका और आर्थिक प्रगति के लिए आधारभूत प्राथमिक स्रोत के रूप में किया जाता है, में चुनौतियां विशेषकर ज्यादा गंभीर है। भूकंप, ज्वालामुखी विस्फोट, भूस्खलन आदि भौगोलिक आपदाओं की तुलना में जलवायु परिवर्तन से संबंधित आपदाओं का प्रभाव कहीं अधिक दर्ज किया गया (आरेख 1)।

ग्लोबल वार्मिंग पर वैज्ञानिक जागरूकता का इतिहास 1980 या उससे भी पहले का है, जो बाद में तीव्र सामाजिक-राजनीतिक जागरूकता के रूप में बदला। अगस्त 1989 में मध्य भारत में पर्यावरणीय विज्ञान परिषद् द्वारा आयोजित विचार मंथन कार्यशाला में एक स्वर में हिम झीलों पर बढ़ते जोखिम और अन्य विध्वंसक बाढ़ों, सूखा और अकाल, आंधियों और महामारी के प्रकोप पर चिंता जाहिर की गई थी। हालांकि, इन बदलावों के लिए जिम्मेदार कारणों की वैज्ञानिक पहचान बहुत कमजोर थी। जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल (आईपीसीसी) ने आपदाओं पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को विज्ञान के आधार पर प्रस्तुत करने में अग्रणी भूमिका निभाई।

आपदा प्रबंधन: उल्लेखनीय बदलाव

आईपीसीसी की चौथी आकलन रिपोर्ट (2007) ने वैश्विक स्तर पर आपदा जोखिम प्रबंधन के साथ जलवायु परिवर्तन अनुकूलन को केंद्रित करने के लिए राजनीतिक मान्यताएं दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसे हम आपदा प्रबंधन में दूसरे बड़े बदलाव के रूप में देखते हैं। इसमें तीन पहलुओं पर ध्यान दिया गया था: (1) खतरनाक जोखिम का हल, (2) अतिसंवेदनशीलता को कम करना, और (3) पर्यावरण ज्ञान पर आधारित दृष्टिकोण। इसके पहले के बदलाव में आपदा प्रबंधन में

आलेख 1: एशिया प्रशांत क्षेत्र (1985-2014) में आपदाओं के प्रकार
(प्रभावितों की संख्या 1000 में व कुल क्षति अमरीकी डॉलर में)

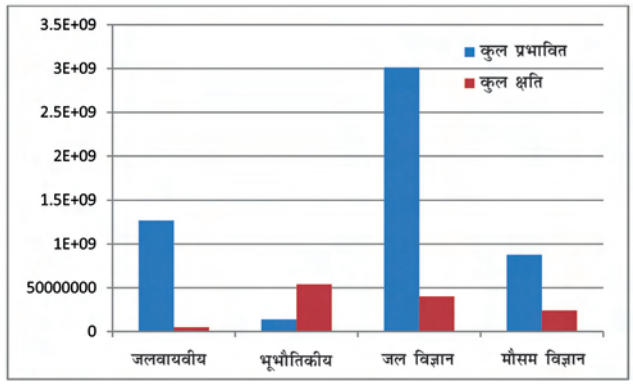

स्रोत: इएमडीएटी, सीआरईडी, बेल्जियम।

लेखक राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान, नई दिल्ली में एशोसियेट प्रोफेसर तथा नीति नियोजन विभाग के प्रमुख हैं। इस क्षेत्र में उनका 25 वर्ष से अधिक का अनुभव है और सैकड़ों प्रकाशन अब तक उनके नाम रहे हैं। ईमेल: anil.nidm@nic.in, envirosafe2007@gmail.com

'बचाव एवं राहत' से आगे आकर 'रोकथाम एवं तैयारी' केंद्रित दृष्टिकोण अपनाया गया था।

वैश्विक स्तर पर 'आपदा प्रबंधन' पर्यावरण परिवर्तनों को महसूस कर अर्थशास्त्र और इंजीनियरिंग की भांति बदलाव के दौर से गुजर रहा है। पर्यावरण परिवर्तन के तीन पहलू हैं: जलवायु परिवर्तन, भूमि उपयोग और, पारितंत्र में बदलाव, ये सभी जटिल विनाशकारी खतरों और बढ़ते जोखिम के द्योतक हैं। प्राकृतिक आपदा न्यूनीकरण के लिए संयुक्त राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय दशक (आईडीएनडीआर 1990-99) के काल से लेकर ह्योगो फ्रेमवर्क ऑफ एक्शन (2005-15) तक पारिस्थितिकी और आपदा प्रबंधन के क्षेत्र में कार्य करने के दौरान आरंभिक अभियांत्रिकी पर आधारित रोकथाम सिद्धांत को व्यापक समुदाय द्वारा अपनाने और तैयारी पर जोर देते हुए सामाजिक-आर्थिक आधारित जोखिम पर केंद्रित दृष्टिकोण का मैं साक्षी रहा हूं। एक सुरक्षित विश्व के लिए योकोहामा रणनीति और योजना को विश्व सम्मेलन (1994) में अपनाया गया। इसमें स्पष्ट रूप से पर्यावरण एवं विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन और एजेंडा 21 को उल्लिखित करते हुए आपदा न्यूनीकरण और धारणीय विकास के बीच नजदीकी अंतरसंबंध को रेखांकित किया गया था। हालांकि, ह्योगो फ्रेमवर्क की समीक्षा प्राथमिकता 4 हो गई, जिसमें आपदा जोखिम के कारणों और इसके अतिसंवेदनशील परिणामों को रेखांकित करने में राष्ट्रों के असफल होने बात सामने आई। जलवायु परिवर्तन के प्रभावों की पहचान से न केवल खतरों बल्कि इसके साथ ही अतिसंवेदनशील परिणामों और जोखिम प्रबंधन क्षमताओं (सारणी 2) के आधार पर आपदा जोखिम न्यूनीकरण को शामिल कर जलवायु परिवर्तन अनुकूलन की बात स्पष्ट होती है। इसी बात पर जून 2014 में थाइलैंड में आयोजित आपदा जोखिम न्यूनीकरण पर छठे एशियाई मंत्रीस्तरीय सम्मेलन में स्वीकृत बैंकॉक घोषणा और पोस्ट-ह्योगो फ्रेमवर्क पर एशिया-प्रशांत इनपुट दस्तावेज में स्पष्ट संदेश के तौर पर जोर दिया गया था। विश्व सम्मेलन 2015 के परिणामस्वरूप आपदा जोखिम न्यूनीकरण (2015-30) के लिए सेंडई फ्रेमवर्क में इस एकीकरण के लिए स्पष्ट रूप से आवाज उठाई गई थी।

जलवायु आपदाओं से जोखिम

जैसा कि आरेख 1 में दर्शाया गया है, एशिया क्षेत्र में विशुद्ध भूभौतिकीय कारणों से उत्पन्न आपदाओं की तुलना में जलवायु परिवर्तन से संबंधित आपदाएं अधिक आई और उनका प्रभाव कहीं अधिक था। जलवायु परिवर्तन के प्रभावों पर ठोस बातचीत मुंबई और उसके बाद कई एशियाई शहरों ढाका, इस्लामाबाद, सूरत, भोपाल, बंगलुरू, कोलकाता, दिल्ली, हैदराबाद आदि शामिल हैं, आदि में आई विनाशकारी शहरी बाढ़ के बाद आरंभ हुई। भारतीय तटवर्ती और उप-तटवर्ती राज्यों, इस क्षेत्र में स्थित अन्य देशों और द्वीपों को प्रभावित करने वाले चक्रवाती आपदाओं उदाहरणस्वरूप फाइलिन और हुदहुद, की बढ़ती बारंबारता और तीव्रता, उत्तराखंड और कश्मीर में विनाशकारी बाढ़, महाराष्ट्र और आंध्र प्रदेश में तीव्र लू, साल दर साल सूखे क्षेत्रों में हो रही बढ़ोतरी ने वैज्ञानिक और रणनीतिक जगत को साथ आकर धारणीय और सुरक्षित विकास के लिए काम करने को मजबूर किया है। एशिया प्रशांत के ज्यादातर देश विकास या अल्प विकास के विभिन्न चरणों में हैं और, अत: इसलिए न केवल भूमि और जलवायु बल्कि और अधिक गंभीर रूप से अपने सामाजिक-आर्थिक संसाधनों की संवेदनशीलता से भी जूझ रहे हैं। थाइलैंड और म्यांमार में हाल में आई बाढ़ को समुदाय

तालिका 1: परिदृश्य - ए: 1961-1990 को आधार मानते हुए 1950 से दक्षिण एशिया में सूखा सहित तापमान और वर्षण के चरम में बदलाव देखा गया। बी: दक्षिण एशिया में सूखा सहित तापमान और वर्षण के चरम में बदलाव की संभावना जताई गई। ये अनुमान 2071-2100 (1961-1990 की तुलना में) या 2080-2100 (1980-2000 की तुलना में) की अवधि के लिए हैं और ए2/ए1बी उत्सर्जन परिदृश्य के तहत चलाए जाने वाले जीसीएम और आरसीएम 12 के परिणामों पर आधारित हैं।

परिदृश्य	उप-क्षेत्र में अधिकतम तापमान में रुझान (गर्म और सर्द दिनों में)	न्यूनतम तापमान में रुझाान (गर्म और सर्द रातों में)	गर्म लहरों/गर्म आंधी और सूखे में रुझान	भारी वर्षण में रुझान सूखेपन में रुझान (बारिश, बर्फ)	सूखेपन और अकाल में रुझान
ए	↑ गर्मी के दिनों में बढ़ोतरी (गर्म दिन घटते हैं)	↑ गर्मी की रातों में बढ़ोतरी (सर्द रातों में कमी)	~ अपर्याप्त साक्ष्य	~ भारत में मिश्रित संकेत	~ विभिन्न अध्ययनों और सूचकांकों के लिए असंगत संकेत
बी	↑ गर्मी के दिनों में बढ़ोतरी के अनुमान (सर्द दिनों में कमी)	↑ गर्मी की रातों में बढ़ोतरी के अनुमान (सर्द रातों में कमी)	↑ पहले से अधिक बार और/या दीर्घ अवधि की गर्म लहरें और गर्म आंधी की संभावना	— प्रतिशत डीपी10 सूचकांक में हल्की ↑ या कोई बढ़ोतरी नहीं दक्षिण एशिया के क्षेत्र में पहले से अधिक बार और तीव्र भारी वर्षण के दिनों में बढ़ोतरी	~ असंगत परिवर्तन

(स्रोत: गुप्ता और नायर, 2012)

और सार्वजनिक अवसंरचना, पारिस्थितिकी सेवाओं और, उसके आधार पर उनकी आजिविका और आर्थिक जीविका पर दीर्घ अवरोधी प्रभाव डालने वाली घटना के रूप में जाना गया। नेपाल के गोरखा भूकंप 2015 और झटकों के प्रभाव से पहाड़ी ढलानों पर भूस्खलन हुआ और जलवायु परिवर्तन तथा पारिस्थितिकी क्षरण से जोखिम और अधिक बढ़ गया। चिकुनगुनिया, डेंगू आदि बीमारियों की उत्पत्ति और प्रसार भी क्षेत्रिय मौसम के प्रारूप और जलवायु व्यवस्थाओं में परिवर्तन से जुड़ा हुआ है।

जलवायु परिवर्तन के चरम पर पहुंचने से मानव और पारितंत्र को व्यापक क्षति हो सकती है। इससे आर्थिक नुकसान होगा, पर्यटन और कृषि जैसे विभिन्न क्षेत्रों, शहरी बस्तियों पर और छोटे द्वीपीय देशों पर गंभीर प्रभाव पड़ेगा।

जलवायु परिवर्तन को संबोधित करते हुए 'पर्यावरणीय चरम - आपदा जोखिम प्रबंधन' पर एक भारतीय टिप्पणी 5 जून, 2012 को नई दिल्ली में जारी की गई थी। इसमें चरम घटनाओं और आपदाओं पर जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल द्वारा प्रकाशित विशेष रिपोर्ट से दक्षिण एशिया के संदर्भों को व्याख्यायित किया गया था (टेबल 1)। रिपोर्ट के अध्याय 4 में यह उल्लेख किया गया था कि जलवायु परिवर्तन के चरम पर पहुंचने से मानव और पारितंत्र को व्यापक क्षति हो सकती है। इससे आर्थिक नुकसान होगा, पर्यटन और कृषि जैसे विभिन्न क्षेत्रों, शहरी बस्तियों पर और छोटे द्वीपीय देशों पर गंभीर प्रभाव पड़ेगा। चरम घटनाओं का जल, कृषि और खाद्य सुरक्षा, वानिकी, स्वास्थ्य और पर्यटन जैसे जलवायु से नजदीकी तौर पर जुड़े अथवा निर्भर क्षेत्रों पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है।

जलवायु परिवर्तन आपदाओं को कैसे प्रोत्साहित करता है?

प्राथमिक तौर पर, जलवायु परिवर्तन से संबंधित ज्यादातर नीतिगत हस्तक्षेप रोकथाम केंद्रित और भूभौतिकीय मानकों पर आधारित थे। जैसा कि जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल द्वारा 'जलवायु परिवर्तन अनुकूलन, 2012 को आगे बढ़ाने के लिए चरम घटनाओं के जोखिमों और आपदाओं के प्रबंधन' पर दी गई विशेष रिपोर्ट में कहा गया था, अब जोखिम केंद्रित दृष्टिकोण की ओर ध्यान दिया जा रहा है। 'आपदा जोखिम में कमी: बदलते जलवायु में जोखिम और गरीबी, 2009' पर वैश्विक मूल्यांकन रिपोर्ट में पारितंत्र में क्षरण को भविष्य में प्राकृतिक खतरे को और अधिक बढ़ाने वाले कारक के रूप में चिन्हित किया गया था। विश्व बैंक समूह *जलवायु जोखिम प्रबंधन: विश्व बैंक समूह के संचालनों में अनुकूलन शामिल करना* शीर्षक से अपने प्रकाशन के जरिए 2006 में यह पाया कि दक्षिण एशिया में पर्यावरण परिवर्तन के परिणामों से विशेष रूप से गरीब सहित निम्नलिखित चीजें प्रभावित हो रही हैं:

- कई शुष्क और अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में जल की उपलब्धता और जल की गुणवत्ता में कमी,
- कई क्षेत्रों में बाढ़ और अकाल के खतरे बढ़ गए हैं,
- पहाड़ी आवासों में जल नियमन में कमी,
- पनबिजली और बायोमास उत्पादन की विश्वसनीयता में कमी आ रही है,
- मलेरिया, डेंगू और हैजा जैसे जल जनित रोगों की घटनाओं में बढ़ोतरी हो रही है,
- मौसमी घटनाओं के चरम पर पहुंचने से इसके कारण क्षति और मृत्यु में वृद्धि हुई है,
- कृषि उत्पादकता में कमी आई है, मत्स्य पालन पर प्रतिकूल असर हुआ है, और
- कई पारिस्थितिकी तंत्रों पर प्रतिकूल असर पड़ा है

आपदाओं पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को पृथक करके देखने के बजाए भूमि उपयोग बदलाव और प्राकृतिक संसाधन अपक्षरण जैसे पर्यावरणीय बदलावों के अन्य पहलुओं के साथ देखे जाने की जरूरत है। अनियोजित या खराब तरीके से नियोजित शहरीकरण एवं औद्योगिक संकुलन, और बाढ़ क्षेत्र, अपरदन वाले ढलानों, पहाड़ी ढलानों में निष्क्रिय जल निकासी चैनलों जैसे जोखिम भरे क्षेत्रों में दखल, खेती एवं अन्य संबद्ध कृषि कार्यों में एकांगी प्रवृत्ति को बढ़ावा देता है, और आधुनिक यद्यपि असुरक्षित आवास को बढ़ावा देता है, प्रौद्योगिकीय अनुप्रयोगों में कमी के बावजूद इस प्रकार के जोखिम आपादाओं का रूप धारण कर लेते हैं। इस संबंध का एक सचित्र प्रस्तुति आरेख 2 में दर्शाया गया है।

आपदा जोखिम प्रबंधन के जरिए जलवायु परिवर्तन अनुकूलन

आपदा जोखिम न्यूनीकरण को जोखिमों को हल करने वाले, अतिसंवेदनशीलता को कम करने वाले और क्षमताओं को बढ़ाने वाले (रोकथाम-रोकथाम और प्रभावी आपात तैयारी पर केंद्रित) त्रिस्तरीय उद्देश्यों का एक व्यवस्थित मिश्रण समझा जाता है। जब जलवायु परिवर्तित होती है तो स्थिति और बदतर होती हैं, जैसे सौ वर्ष की अवधि में हुई वर्षा दस वर्ष में ही हो जाती है, समुद्र के स्तर में बढ़ोतरी से तटीय तूफानी लहरों में इजाफा होता है तथा बारंबार शक्तिशाली प्रभंजन आते हैं, विनाशकारी बवंडर की आवृत्ति और तीव्रता में वृद्धि होती है, सूखे के कारण जंगल में आग लगने की घटनाओं और उसके दायरे में वृद्धि होती है और किसानों को अपरिचित मौसमी प्रकोपों को झलने के लिए मजबूर होना पड़ता है। अतिसंवेदनशीलता को एक हानिप्रद परिस्थिति या घटना के प्रति लोगों, संपत्ति, पारितंत्रों, संसाधनों और सांस्कृतिक, आर्थिक तथा सामाजिक गतिविधियों की संवेदनशीलता के दायरे के संदर्भ में समझा जाता है। यह

जलवायु परिवर्तित होती है तो स्थिति और बदतर होती हैं, जैसे सौ वर्ष की अवधि में हुई वर्षा दस वर्ष में ही हो जाती है, समुद्र के स्तर में बढ़ोतरी से तटीय तूफानी लहरों में इजाफा होता है तथा बारंबार शक्तिशाली प्रभंजन आते हैं, विनाशकारी बवंडर की आवृत्ति और तीव्रता में वृद्धि होती है, सूखे के कारण जंगल में आग लगने की घटनाओं और उसके दायरे में वृद्धि होती है

एक प्रतिकूल वातावरण के प्रभाव का सामना करने में असमर्थता को दर्शाता है। असुरक्षा की खिड़की वह समय सीमा है जिसके भीतर सुरक्षात्मक उपाय कम हो जाते हैं, उनसे समझौता हो जाता है या वे कम रह जाते हैं। रोकथाम से तात्पर्य उन व्यापक गतिविधियों से है जो तनाव को रोककर सहनशीलता को बढ़ाता है, 'सामाजिक-अर्थव्यवस्था' के वातावरण के उभरे हुए 'घटक' को उपचार और लचीलापन प्रदान करता है,

तालिका 2: विभिन्न आपदा प्रकारों के लिए खतरों और अतिसंवेदनशीलता पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव/राहत चरण के निहितार्थ

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव	जल संबधित आपदा	पारिस्थितिक आपदा	रासायनिक आपदा	भूभौतिकीय आपदा	जैविक आपदा
उत्तेजक खतरे	बाढ़, अकाल, चक्रवात, आंधी, गर्म लहरें, शीत लहरें आदि	जंगल में आग, बड़े स्तर पर निर्वासन / भूस्खलन, तटीय अपक्षरण, आक्रामक प्रजाति आदि	आग, विस्फोट, विशाक्त चीजों को छोड़ा जाना, रेडियोधर्मी चीजों को विमुक्त करना, आदि	भूकंप से भूस्खलन को बढ़ावा मिल सकता है, अपरदन, जीएलओएफ, एलएलओएफ आदि	वाहक जनित, जल जनित और एलर्जी रोग, महामारी, सर्वव्यापी महामारी आदि
बढ़ती संवेदनशीलता	क्षरित पारितंत्र, जल विज्ञान में बदलाव, दयनीय प्राकृतिक सुरक्षा, सामाजिक -आर्थिक लचीलेपन का क्षतिग्रस्त होना	जलवाष्प में कमी - आग वाले मौसम में बढ़ोतरी, हरित क्षेत्र में कमी, जलवायु आवास - विदेशी प्रजातियों में परिवर्तन	सुरक्षा और प्रक्रिया की सीमा रेखा में बदलाव, परिचालन पर तनाव, पर्यावरणीय सुविधाओं में परिवर्तन	वनस्पति व्यवस्था में बदलाव, शुक्लता में बदलाव, हिमनदों और बर्फ का पिघलना, जल निकासी में बदलाव	जलवायु आवास-वाहकों/ रोगाणुओं में बदलाव, सामाजिक -आर्थिक लचीलेपन और स्वास्थ्य संसाधनों का क्षति
आपदा प्रभाव / राहत के चरण	आवास, जल स्वच्छता, अपशिष्ट और पर्यावरणीय-स्वास्थ्य मामले। पारिस्थितिकी तंत्रों और प्राकृतिक संसाधनों पर प्रभाव	मिट्टी संदूषण, कीट और रोगों के खतरे, जैव विविधता पर प्रभाव, जल निकासी और पारिस्थितिकी तंत्र	स्थानीय जलवायु परिवर्तन, पारितंत्र की सेवाओं और समुदाय की आजीविका पर प्रभाव	भूदृश्य में बदलाव, पारितंत्रों, भू-तंत्रों और प्राकृतिक संसाधनों पर प्रभाव	आवास, जल स्वच्छता, अपशिष्ट और पर्यावरणीय-स्वास्थ्य मामले। प्राकृतिक संसाधनों के लिए मानव पूंजी का ह्रास

और उसके जरिए आपदा प्रबंधन के संदर्भ से अलग जलवायु परिवर्तन उपचार में विभिन्न धारणाओं को व्यक्त करता है। 'अनुकूलन' परिणामों को संबोधित करने से जुड़ा हुआ है, और इसलिए, ''जलवायु परिवर्तन प्रभाव के प्रति अनुकूलता'' एक जादूई संकल्पना के तौर पर ''रोकथाम-रोकथाम और तैयारी'' के मिश्रण के काफी नजदीक है, आपदा प्रबंधन में नए प्रतिमान के रूप में उपस्थित है। यह मानव पर्यावरण के साथ प्रभावों के उपस्थित जटिल परिदृश्य में बने रहने के लिए योग्यताओं का एक समूह विकसित करने पर केंद्रित है (सारणी 3)।

आपदा रोकथाम से तात्पर्य जोखिम को कम करने, खतरे या डरावनी आपदा परिस्थिति के प्रभाव को कम करने के लिए किए गए मानवीय हस्तक्षेपों से है। आपदा रोकथाम में विभिन्न 'संरचनात्मक' और 'गैर-संरचनात्मक' हस्तक्षेपों को शामिल किया जाता है। चूंकि अनुकूलन के प्रारूप जिला और स्थानीय स्तर पर नियोजित किए जाते हैं, इसलिए आपदा रोकथाम की स्पष्ट समझ की जरूरत नियोजन और कार्यान्वयन के सभी स्तरों पर होती है, और इसके लिए जरूरी रणनीतिक दस्तावेजों में भी इसकी जरूरत होती है।

आरेख 2: सामाजिक-आर्थिक, जलवायु परिवर्तन और आपदाओं की कार्योत्पादक पारस्परिक क्रिया

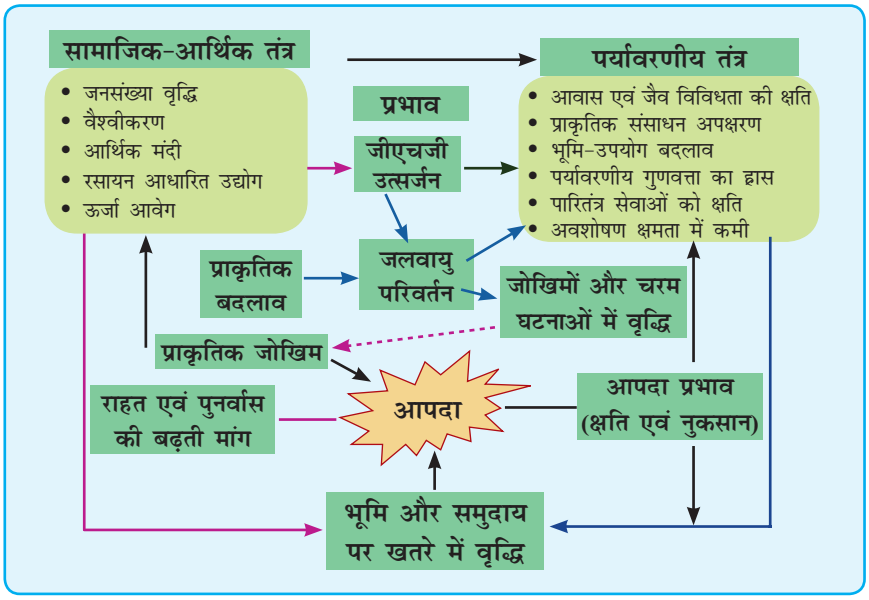

मोटे तौर पर आपदा जोखिम और इसके प्रबंधन के लिए चार प्रमुख दृष्टिकोणों की आवश्यकता पड़ती है, जैसे

- इंजीनियरिंग पर केंद्रित संरचनात्मक रोकथाम,
- समुदाय पर केंद्रित तैयारी आधारित दृष्टिकोण
- केंद्रीयकृत समन्वय आधारित दुर्घटना कमान प्रणाली (आपात प्रतिक्रिया के लिए), और
- आपदा जोखिम प्रबंधन के लिए पर्यावरण आधारित एकीकृत दृष्टिकोण

पर्यावरण और आपदा जोखिम न्यूनीकरण (पीईडीआरआर) और पारितंत्र आधारित अनुकूलन (ईबीए) पर संयुक्त राष्ट्र की साझेदारी के जरिए 'आपदा जोखिम न्यूनीकरण

तालिका 3: अनुकूलन के घटक, आपदा जोखिम प्रबंधन पर केंद्रित

खतरनाक घटना के उत्पन्न होने के जोखिम में कमी लाना	खतरा रोकथाम	शमन या	नियंत्रण के जरिए
खतरनाक घटना के प्रभाव में कमी लाना	परिहार/प्रवास	लचीलापन	प्रभाव नियंत्रण
समावेशन क्षमता	क्षति को रोकना	नुकसानों को रोकना	शीघ्र सामान्यीकरण

(इको डीआरआर) के लिए पारितंत्रीय दृष्टिकोण' का हाल के वैश्विक दवाब से दोनों के उद्देश्यों और दृष्टिकोण में एकरूपता देखी गई है, और इसलिए आजीविका में लचीलापन, खाद्य सुरक्षा, स्वास्थ्य संसाधनों और अन्य पारितंत्र सेवाओं के संदर्भ में समुदायों को परस्पर लाभ पहुंचा रहे हैं। नतीजतन उनकी अर्थव्यवस्था को मजबूती मिल रही है और अतिसंवेदनशीलता में कमी आ रही है।

वैधानिक एवं संस्थागत फ्रेमवर्क

जलवायु परिवर्तन से संबंधित आपदा प्रबंधन में रोकथाम, रोकथाम, तैयारी, पुनर्वास, पुनर्निर्माण और पुन: प्राप्ति सहित सभी पहलू शामिल होते हैं, और निम्नलिखित चीजें उपलब्ध कराते हैं:

- प्रभावी नियोजना, कार्यान्वयन और वित्तपोषण के लिए तकनीकी-वैधानिक और संस्थागत फ्रेमवर्क स्थापित की जाती है।
- योजनाओं और परियोजनाओं के जरिए विकास की प्रक्रिया और आपदा जोखिम रोकथाम उपायों के लिए बहु-क्षेत्रीय आपदा जोखिम प्रबंधन को शामिल किया जाना
- आपदा जोखिम न्यूनीकरण नीतियों और योजनाओं का सर्वांगीण, सहयोगात्मक, समावेशी और सतत ढ़ंग से एकीकरण

जलवायु परिवर्तन अनुकूलन के जरिए सतत विकास के उद्देश्यों को रणनीतिक ढ़ंग से क्रियान्वित करने और आपदा जोखिमों का एकीकृत ढ़ंग से सामना करने में वर्तमान के अंतर और उसके परिणामस्वरूप चुनौतियों को देखने पर, एशिया प्रशांत क्षेत्र में म्यांमार, कंबोडिया, फिलिपिंस, इंडोनेशिया, बांग्लादेश आदि जैसे कई छोटे देशों के पहल और नवाचार उल्लेखनीय प्रतीत होते हैं, जहां पर आपदा जोखिम न्यूनीकरण के मामले और इसके लिए हस्तक्षेपों को क्षेत्रों, शासन और संस्थानों के तहत एकीकृत किया गया है। आरेख 3 में एक सुझावपरक फ्रेमवर्क का खाका खींचा गया है।

प्राथमिक तौर पर पर्यावरण गुणवत्ता और संसाधन प्रबंधन क्षेत्रों को ध्यान में रखकर पर्यावरण और इसके संघटक प्राकृतिक संसाधनों (प्रक्रियाओं और नियोजन (तथा पर्यावरण सेवाओं से जुड़े नियामकीय प्रावधान किए गए हैं, और सतत मानव विकास के निम्न तीन हिस्सों (1) अवसंचरना और उद्योग, (2) पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधन तथा (3) समाज कल्याण और सांस्कृतिक सेवा, से जुड़े नियामकीय प्रावधान और कानून आपदा जोखिम प्रबंधन को प्रासंगिक बनाते हैं। खतरों को हल करने, असुरक्षा के मूल कारणों को कम करने तथा क्षमता वर्द्धन में वैधानिक प्रावधान महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं, एवं इसके जरिए जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और आपदा जोखिम प्रबंधन से जुड़ते हैं। इस संबंध में हमने विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय विधान का अध्ययन किया है।

आपदा केंद्रित अनुकूलन हस्तक्षेपों के कुछ उदाहरण

बदलती जलवायु और इसके नतीजों की पृष्ठभूमि में आपदा प्रबंधन को मजबूत करने के लिए विश्व भर में तथा एशिया प्रशांत के देशों में भी कई पहल की गई हैं। भारत में आपदा कानून में स्पष्ट रूप से "पर्यावरण" को आपदा प्रबंधन में बड़े पहलू के रूप में शामिल किया गया है, और इसके जरिए एकीकरण के लिए महत्वपूर्ण मौके उपलब्ध कराए गए हैं। भारतीय आपदा प्रबंधन अधिनियम (2005) के अनुसार, आपदा को "तबाही, दुर्घटना, प्राकृतिक आपदा या किसी क्षेत्र में प्राकृतिक या मानव निर्मित कारणों से या दुर्घटना के कारण अथवा लापरवाही के कारण घटित घटना जिसमें जीवन समाप्त होने या मानव पीड़ा या संपत्ति की क्षति और बर्बादी या पर्यावरण का नुकसान या अपक्षण और प्रभावित क्षेत्र की ऐसी प्रकृति और मात्रात्मक घटना जिसका सामना करना वहीं के समुदाय की क्षमता से बाहर हो" के रूप में परिभाषित किया गया है। उपरोक्त दिए गए वैधानिक प्रावधानों के अलावा भारत में निम्न नीतिगत प्रावधानों से आपदा जोखिम न्यूनीकरण के एकीकरण अनुकूलन के लिए महत्वपूर्ण अवसर प्राप्त होते हैं:

- राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006
- राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन नीति 2009
- राष्ट्रीय जल नीति 2002 (संशोधन 2012 के तहत)
- राष्ट्रीय वन नीति

आरेख 3: जलवायु और आपदा जोखिम प्रबंधन के लिए सुझावपरक राष्ट्रीय फ्रेमवर्क

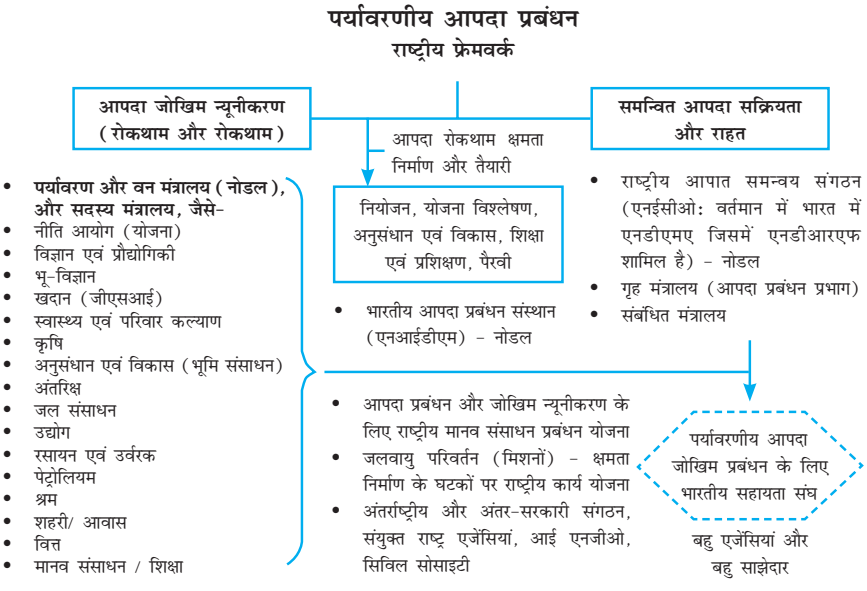

- राष्ट्रीय शहरी स्वच्छता नीति
- राष्ट्रीय कृषि नीति
- राष्ट्रीय भूमि-उपयोग नीति (ड्राफ्ट/विचाराधीन)
- जलवायु परिवर्तन पर रणनीति (राष्ट्रीय कार्य योजना)

चरम घटनाओं और आपदाओं के बढ़ते जोखिम के समाधान के लिए आपदा जोखिम प्रबंधन के कुछ विशेषीकृत हस्तक्षेप निम्नलिखित हैं:

- **आपदा प्रबंधन के लिए राष्ट्रीय योजना:** इसे संबंधित मंत्रालयों/एजेंसियों और राज्य सरकारों से प्रतिक्रिया लेकर, आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 के अनुसार समग्र और परामर्शी तरीके से विकसित किए जाने की जरूरत है। 2013 में उत्तराखंड में आई आपदा के बाद हमने राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति के तत्वाधान में राष्ट्रीय योजना तैयार करने के लिए तीव्र कदम उठाए। इसके घटक थे: खतरे का जोखिम और असुरक्षा प्रोफाइल, रोकथाम योजना, प्रतिक्रिया योजना और मानव संसाधन क्षमता निर्माण योजना। इस अवसर का उपयोग वित्तीय रणनीतियां बनाने और आपात प्रतिक्रिया योजना सहित समूची प्रक्रिया में जलवायु परिवर्तन के मामले को एकीकृत करने के लिए किया गया।
- **राष्ट्रीय मानव संसाधन योजना 2012:** योजना तैयार करते समय, राज्यों की क्षमता निर्मित करने वाले संस्थानों, विभिन्न क्षेत्रों में व विभिन्न स्तरों पर गतिविधियों, जलवायु जोखिम के हल के लिए संसाधनों के अनुमान पर आधारित एक ठोस आकलन वैधानिक स्वीकारोक्ति के तौर पर एक प्रमुख कसौटी था। विभिन्न एजेंसियों, संस्थाओं और साझीदारों के लिए भूमिकाओं और जिम्मेदारियों के लिए नीति बनाई गई।
- **आपदा प्रबंधन के लिए राष्ट्रीय दिशानिर्देश:** राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण ने बाढ़, शहरी बाढ़, सूखा, चक्रवात, भू-स्खलन जैसी जलवायु परिवर्तन से जुड़ी आपदाओं के लिए दिशा निर्देश तैयार किए है, और इसके तहत जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के लिए महत्वपूर्ण अनुकूलन विकल्पों को प्रावधान के तहत शामिल किया गया है।
- **पूर्वानुमान और पूर्व चेतावनी:** आपदा की स्थिति में प्रभावी और समय पर कार्रवाई करने के लिए पूर्व चेतावनी में सुधार किया जाना बहुत जरूरी है। चक्रवात की चेतावनी में सुधार आया है, और इसका लाभ फैलिन और हुदहुद जैसे चक्रवातों के प्रबंधन में देखने को मिला था। भारत का मौसम विज्ञान विभाग निगरानी और पूर्वानुमान के लिए अपने नेटवर्क में सुधार के लिए कमर कस रहा है।
- **जिला योजनाओं में अनुकूलन और आपदा लोच का एकीकरण:** जिला स्तर पर उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिले में जलवायु लचीलापन और आपदा जोखिम पर केंद्रित विभागीय योजना की प्रगति को दिखाने के लिए एक पहल की गई है। इस प्रक्रिया को ''साझा अध्ययन'' कहा जाता है, इसका उपयोग जलवायु भविष्यवाणी में सुधार करने और जिले की जलवायु लचीलापन पर आधारित आपदा प्रबंधन योजना के लिए किया जाता है।

2015 में जलवायु परिवर्तन पर नए सतत विकास लक्ष्यों और एक नए प्रोटोकॉल के रूप में विशेष उपलब्धि दर्ज हुई है। क्रियान्वयन के लिए प्रभावी क्षमता, समायोजित और जांचे गए उपकरणों और जिला एवं ग्राम स्तर पर नीति निर्माण प्रारूप की जरूरत होगी। पर्यावरण सुरक्षा अधिनियम, 1986 से समय से ही जिला स्तर पर एक *पर्यावरण कार्य योजना* बहुप्रतिक्षित है।

- **जलवायु परिवर्तन और राज्य आपदा प्रबंधन योजनाओं के लिए राज्य कार्य योजना:** जलवायु परिवर्तन के प्रभावों और आपदा जोखिमों का सामना करने के लिए तटवर्ती क्षेत्रों और स्थानीय समुदायों की विशेष चुनौतियों को देखते हुए, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश में पायलट परियोजनाओं के सबक को जिला आपदा प्रबंधन योजना के फ्रेमवर्क में शामिल किया गया। प्रक्रिया के परिणामों को जलवायु परिवर्तन पर राज्य कार्य योजना और राज्य आपदा प्रबंधन योजना के साथ सटीक ताल-मेल बिठाने के लिए शामिल किया गया था। जलवायु लचीलापन ग्राम योजनाओं को भी सामूहिक सहयोग की प्रक्रिया अपनाकर विकसित किया गया।
- **विभिन्न योजनाओं और परियोजनाओं में जलवायु परिवर्तन और आपदा जोखिम न्यूनीकरण को शामिल किया जाना:** महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी योजना, इंदिरा आवास योजना, एकीकृत जल विकास परियोजना, जवाहर लाल नेहरू शहरी नवीकरण मिशन, प्रधानमंत्री सिंचाई योजना आदि जैसे सरकार की विभिन्न कार्यक्रमों और योजनाओं का विश्लेषण किया गया है और उनके समायोजन को जलवायु परिवर्तन संबंधित आपदा प्रबंधन के साथ एकीकृत करने के लिए निरूपित किया गया है।

उपसंहार

सरकार, समुदाय, कॉर्पोरेट और सार्वजनिक निजी भागीदारी की जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और आपदा जोखिम प्रबंधन के सह-लाभ के साथ कई जमीनी हस्तक्षेप किए गए थे। इस प्रकार के व्यवहारों के सबक को नीतियों और योजनाओं के निर्माण में शामिल करने के लिए, इनके दस्तावेजीकरण की संस्तुति की गई है। लोचशील आवास पर एक दिल्ली घोषणापत्र 27 जनवरी, 2014 को जारी किया गया था, इसमें बाढ़ से उबरने वाले आवास विशेषीकृत निर्माण कोड की बात कही गई थी। वर्ष 2015 में जलवायु परिवर्तन पर नए सतत विकास लक्ष्यों और एक नए प्रोटोकॉल के रूप में विशेष उपलब्धि दर्ज हुई है। क्रियान्वयन के लिए प्रभावी क्षमता, समायोजित और जांचे गए उपकरणों और जिला एवं ग्राम स्तर पर नीति निर्माण प्रारूप की जरूरत होगी। पर्यावरण सुरक्षा अधिनियम, 1986 से समय से ही जिला स्तर पर एक *पर्यावरण कार्य योजना* बहुप्रतिक्षित है। समय की मांग को देखते हुए नियोजन प्रक्रिया में सुधार और उपयुक्त जागरूकता व प्रभावी शासन, लोगों और उनके संसाधनों की सुरक्षा सतत विकास के ठोस घटक हैं। सतत विकास के लिए सामाजिक और व्यावसायिक वातावरण तैयार करने हेतु जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना के अंग के रूप में पर्यावरण और मूल्य आधारित शिक्षा पर एक ''एक राष्ट्रीय मिशन'' को शामिल किया जा सकता है। ❑

जलवायु परिवर्तनः संकट में मानवीय स्वास्थ्य

आशुतोष कुमार सिंह

जलवायु परिवर्तन का सबसे बुरा असर एशिया के क्षेत्रों पर पड़ेगा क्योंकि ज्यादातर देशों की अर्थव्यवस्था कृषि व प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करती है। ऐसे में भारत जैसे देशों को जलवायु परिवर्तन को लेकर ज्यादा सचेत रहने की जरूरत है। मानव शरीर रूपी मशीन को प्राकृतिक रूप से चलने के लिए धरती तत्व, जल तत्व, आग तत्व, आकाश तत्व व वायु तत्व रूपी पांच तत्वों को संतुलित करने की जरूरत पड़ती है। इन तत्वों का असंतुलन मनुष्य के शरीर में व्याधियों को उत्पन्न करता है। जलवायु की जब हम बात करते हैं तो इसमें मुख्य रूप से दो तत्वों की बात होती है। पहला जल व दूसरा वायु। इन दोनों तत्वों का संतुलित रहना मानव स्वास्थ्य के लिए अति आवश्यक है

वैश्विक स्तर पर जलवायु परिवर्तन से होने वाले खतरों को महसूस किया जाने लगा है। देखा जाए तो परिवर्तन एक सार्वभौमिक सत्य है। इसी तरह जलवायु में परिवर्तन भी स्वाभाविक प्रक्रिया है। चिंता व चिंतन की बात तब शुरू होती है जब कुछ भी अप्राकृतिक घटित होता है। जलवायु परिवर्तन भी प्राकृतिक सीमाओं को लांघ चुका है व मानवीय जीवन-चक्र खतरे में है। नई-नई बीमारियां जन्म ले रही हैं, जो पहले से हैं, उनका भी वैश्विक फैलाव हो रहा है।

दरअसल जलवायु किसी क्षेत्र विशेष की औसत दशाएं हैं। यह उस क्षेत्र के मौसम में सामान्य परिवर्तन, दशाएं और ऋतुओं के चक्र की दशाओं का योग है। अगर हम पृथ्वी की बात करें तो वर्तमान में इसे हम सात-जलवायु प्रदेशों में बांट सकते हैं।

इन प्रदेशों के जलवायु की स्थिति को समझने के बाद यह पता चलता है कि प्रत्येक जलवायु प्रदेश के तापमान व वर्षा की उपलब्धता में अंतर है। यही अंतर उन्हें एक-दूसरे से अलग करता है। इन प्रदेशों की स्वभाविक प्रकृति में असंतुलन उत्पन्न होने की स्थिति में यहां के लोगों को तमाम तरह की बीमारियों से जूझना पड़ सकता है।

जलवायु परिवर्तन व मानव स्वास्थ्य

जलवायु परिवर्तन का सीधा असर मानव के स्वास्थ्य पर पड़ता है। जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल ने सन् 2001 में 21वीं सदी में इसके प्रभाव को लेकर अपनी आशंका जाहिर की थी। इस रपट में कुछ प्रमुख बिंदुओं पर ध्यान आकृष्ट कराया गया था। जिसे तालिका-1 से समझा जा सकता है।

मिट्टी पर पड़े प्रभाव का मानव स्वास्थ्य पर असरः जलवायु परिवर्तन के कारण तापमान में वृद्धि होती है और वाष्पीकरण का संतुलन खराब होता है व हमारी मिट्टी की आर्द्रता असंतुलित हो जाती है। इसके परिणाम स्वरूप हमें सूखे की मार झेलनी पड़ती है। अगर यह स्थिति लगातार बनी रही तो मिट्टी मरुस्थल में तब्दील हो जाती है। मिट्टी एक समय ऊसर व बंजर हो जाती है। अर्थात् हमारे पास भोज्य पदार्थों के उत्पादन के लिए पर्याप्त उर्वर भूमि नहीं बचेगी और हमें भूख व कुपोषण की चपेट में आकर अपनी जान गंवानी पड़ेगी। हालांकि, यह स्थिति अभी भी बनी हुई है लेकिन जलवायु परिवर्तन के कारण इसका स्वरूप और विकराल हो सकता है। इतना ही नहीं **'काउन्सिल ऑन एनर्जी, एन्वायरमेंट एंड वाटर'** द्वारा जारी एक शोध में यह कहा गया है कि वैश्विक तापमान वृद्धि से पैदा हुए मुद्दों का युद्धस्तर पर निवारण नहीं किया गया तो 2050 तक गेहूं, चावल और मक्के की 200 अरब डॉलर की फसलों को नुकसान हो सकता है!'

हिमनद पर पड़े प्रभाव का मानव स्वास्थ्य पर असरः शोध पत्रिका 'नेचर' में प्रकाशित अपने शोध में मिशेल कोप्पस ने लिखा है कि 'अंटार्कटिका की तुलना में पेटागोनिया में ग्लेशियर 100 से 1000 गुना तेजी से अपक्षरित हुए हैं।... तेजी से बढ़ रहे ग्लेशियर अनुप्रवाह घाटियों और महाद्वीपीय समतल पर अधिक गाद इकठ्ठा कर देते हैं। मछली पालन, बांधों और पर्वतीय इलाकों में रह रहे लोगों के

लेखक स्वास्थ्य जागरूकता कार्यकर्ता तथा समाचार-विचार पोर्टल www.swasthbharat.in के संपादक हैं। स्वास्थ्य संबंधी विषयों पर पत्र-पत्रिकाओं में अनेक आलेख लिखने के अलावा वह कंट्रोल एमएमआरपी (मेडिसिन मैक्सिमम रिटेल प्राइस) तथा 'जेनरिक लाइए, पैसा बचाइए' जैसे अभियानों के माध्यम से दवा कीमतों व स्वास्थ्य सुविधाओं पर जन जागरूकता के लिए काम करते रहे हैं। ईमेलः forhealthyindia@gmail.com

तालिका 1: जलवायु परिवर्तन का जीवन पर प्रभाव

लक्षण	तापमान में अधिकतम वृद्धि: ज्यादा गर्म दिन व गर्म हवाओं का बहना	तीव्र वर्षा होगी	गर्मी बढ़ने से सूखा	तूफान की तीव्रता में इजाफा
मानव जीवन पर प्रभाव	• बुढ़ापे में गंभीर बीमारियों में बढ़ोत्तरी, मौत में इजाफा • हिट स्ट्रेस में बढ़ोत्तरी • टूरिस्ट डेस्टिनेशन में बदलाव • एसी व कूलरों की मांग बढ़ेगी, इनके प्रयोग से बीमारियों में इजाफा होगा	• बाढ़ की आशंका, मिट्टी धंसने की समस्या, हिमस्खलन • मृदा अपरदन (भू-क्षरण) • बाढ़ के बहाव क्षेत्र में वृद्धि जिसके कारण मैदानी इलाकों में भी जल स्तर बढ़ सकता है। • फसल योग्य भूमि में कमी	• फसल योग्य भूमि में कमी • धरातल पर दरार पड़ने के कारण घरों की नींव कमजोर होना • जल संसाधन की गुणवत्ता व उपलब्धता में कमी	• मानव के जीवन- स्तर पर बुरा प्रभाव

स्रोत: इनवायरमेंटल साइंस, एस.सी.संतरा

लिए पेयजल की उपलब्धता पर इसका प्रभाव संभव है।' वहीं एशियाई विकास बैंक का अनुमान है कि इस सदी के अंत तक समुद्री जल स्तर 40 सेंटीमीटर बढ़ जाएगा। इससे समुद्री इलाकों में रहने वाले लोगों का जीवन खतरे में पड़ जाएगा। इंडोनेशिया, थाईलैंड जैसे देश को अपने सकल घरेलू उत्पाद का 6.7 फीसद आर्थिक नुकसान उठाना पड़ सकता है। वहीं वैश्विक घरेलू उत्पाद के स्तर पर इसी दौरान 2.6 फीसद का नुकसान उठाना पड़ेगा।[3]

मानव स्वास्थ्य पर बढ़ता खतरा

अमेरिकी मेटरलॉजिकल सोसायटी के बुलेटिन में विशेष परिशिष्ट के रूप में प्रकाशित 'स्टेट ऑफ द क्लाइमेट इन 2014' नामक रपट के अनुसार वर्ष 2014 इस सदी का सबसे गर्म वर्ष रहा है। कुल 58 देशों के 413 वैज्ञानिकों के योगदान से यह रपट तैयार की गई थी। ''नेशनल रिकॉर्डस'' द्वारा साल 1901 से लेकर अब तक दर्ज किए गए आंकड़ों में साल 2014 सबसे गर्म साल के रूप में सामने आया है। साल 2014 में दक्षिण एशिया का औसत तापमान पहले की अपेक्षा ज्यादा गर्म महसूस किया गया। भारत के लिए सालाना औसत तापमान 1961-90 की तुलना में 0.52 डिग्री सेल्सियस अधिक रहा।[4] जलवायु परिवर्तन की भयावहता व इसके स्वास्थ्य पर पड़ने वाले असर की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के जन स्वास्थ्य, पर्यावरण तथा सामाजिक मानक विभाग ने लिखा है- ''विश्व यदि इसी रफ्तार से चलता रहा तो आने वाले 80 वर्षों में सतह के तापमान में 4 डिग्री सेल्सियस तक की वृद्धि की आशंका है। इस बार की गर्मी में पाकिस्तान व भारत में हमने जिस तरह से गर्म हवाओं को महसूस किया है और जिसके कारण वहां पर 5000 से ज्यादा लोगों ने अपनी जान गंवाई है और हजारों की तादाद में लोग गर्मी से संबंधित बीमारियों से जूझने के लिए मजबूर हुए हैं; आने वाले समय में हमें इससे भी ज्यादा गर्म हवाओं से जूझना पड़ेगा। समुद्री तूफान, चक्रवात, बाढ़, जंगल में आग जैसे जलवायु परिवर्तनीय कारकों ने पहले ही पश्चिमी संयुक्त राष्ट्र में 80 लाख एकड़ से ज्यादा जमीन को तबाह कर दिया है, आगे स्थिति और भी खराब होने वाली है...। सूखे के समय में हमें और कुपोषण से जूझना पड़ेगा व बाढ़ हमारी भोजन-प्रदाई फसलों को नष्ट करेगी। जलवायु परिवर्तन आने वाले दिनों में मलेरिया, डेंगू व अन्य संक्रामक बीमारियों का वाहक बनेगा। जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाली मौतों में मलेरिया का योगदान सबसे ज्यादा है।''[5]

जलवायु परिवर्तन का स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्परिणामों को रेखांकित करते हुए **'लांसेट कमीशन ऑन हेल्थ एंड क्लाइमेट चेंज-2015'** ने अपनी रपट में कहा है कि जलवायु परिवर्तन से 9 अरब लोगों की वैश्विक आबादी के लिए पिछली आधी सदी में मिले विकास एवं वैश्विक स्वास्थ्य संबंधी लाभ नष्ट होने का खतरा है। रिपोर्ट के अनुसार जलवायु परिवर्तन का स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव मौसम की अतिशय घटनाओं खासकर लू, बाढ़, सूखे और आंधी की बढ़ती आवृति और तीव्रता की वजह से पड़ रहा है। इसमें कहा गया कि संक्रामक रोगों के स्वरूपों में बदलाव, वायु प्रदूषण, खाद्य असुरक्षा एवं कुपोषण, अनैच्छिक विस्थापन और संघर्षों से अप्रत्यक्ष प्रभाव भी पैदा हो रहे हैं।[6] जलवायु परिवर्तन के कारण जलजनित बीमारियों (देखें तालिका-2) से पूरा विश्व परेशान है। डब्लूएचओ की रपट के अनुसार 74 करोड़ 8 लाख लोग 2012 तक असंशोधित जल स्रोतों के भरोसे अपना जीवन चला रहे हैं। 2.5 अरब लोग 2012 तक स्वच्छता सुविधाओं के अभाव में जी रहे हैं। 2012 तक खुले में शौच करने वालों की तादाद 1 अरब से ज्यादा है। तापमान व समुद्री तल के बढ़ने से बाढ़, जलभराव के कारण पेयजल में रासायनिक अपशिष्टों के समिश्रण की वजह से जलजनित रोगों के होने की आशंका बढ़ जाती है।

तालिका 2: जल प्रदूषण के कारण होने वाली प्रमुख बीमारियां

पानी के प्रयोग के कारण होने वाली बीमारियां	आंतों में बुखार (इंटरिक फीवर)	पानी से धोने के कारण: त्वचा व आंखों में संक्रमण
डायरिया व डिसेंट्रिज • एमबियासिस • कैमपीलोबैक्टर इंटरिटिज • कोलेरा • ई-कोली डायरिया • रोटा वायरस डायरिया • सालमोनिलोसिस • सिजेलोसिज (बेसिलरी डिसेंट्री)	**इंटरिक फीवर** • टायफाइड • पाराटाइफाइड • पोलीमाईलाईटिस • एसकारिआसिस • ट्राईचुरिआईसिस • टैक्निया सोलियम टेनिआसिस	**पानी से धोने के कारण** • त्वचा संबंधी रोग • आंखों में संक्रमण • लाउस-बोर्न-टाइफस

स्रोत: इनवायरमेंटल साइंस, एस.सी.संतरा

पब्लिक हेल्थ इन्वायरमेंट जिनेवा: 2009 की रपट में भारत में पर्यावरणीय कारणों से होने वाली बीमारियों की जानकारी मिलती है। डब्ल्यूएचओ द्वारा जारी इनवायरमेंट बर्डन डिजिज की श्रेणी के अंतर्गत जारी भारतीय प्रोफाइल में बताया गया है कि पानी, स्वच्छता व हाइजीन के अभाव में डायरिया के कारण भारत में 4,54,400 मौतें हुईं।

वाइल्ड लाइफ कनजर्वेशन सोसाइटी (डब्ल्यूसीएस) की रपट में बताया गया बर्ड फ्लू, कोलेरा, इबोला, प्लेग व ट्यूबरक्लोसिस जैसी बीमारियां जलवायु परिवर्तन के कारण बहुत तेजी से फैलेंगी। इसकी भयावहता को दर्शाते हुए रपट में कहा गया है कि जिस तरह से यूरोप में 14वीं शताब्दी में 'ब्लैक डेथ' (प्लेग) के कारण एक तिहाई लोगों की मौत हो गई थी व फ्लू पैनडेमिक से 1918 ई. में वैश्विक स्तर पर 2 करोड़ से 4 करोड़ के बीच में लोगों की मौतें हुई थीं, जिनमें अकेले अमेरिका के 5 लाख से 6 लाख 75 हजार से ज्यादा लोग मरे थे। जलवायु परिवर्तन की यही रफ्तार रही तो इस तरह की बीमारियों से इससे भी अधिक मौत होने की आशंका है।[7]

एक तरह से देखा जाए तो शरीर में होने वाली तमाम तरह की व्याधियों का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष जुड़ाव ग्लोबल वार्मिंग से है। जलवायु परिवर्तन व मानवीय स्वास्थ्य पर उपरोक्त चर्चा में इन बीमारियों से इतर भी बहुत सी बीमारियों का जिक्र आया है। उन प्रमुख बीमारियों को तालिका 3 में देखा जा सकता है।

तालिका 3: जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाली प्रमुख बीमारियां

प्रमुख बीमारियां	प्रभावित जनसंख्या	देश*
• मलेरिया	320 (करोड़)	97
• लिशमैनियासिस/कालाजार	9-16 (लाख	98
• लिमफैटिक फिलारियासिस	1 अरब 23 लाख	73
• सिस्टोजोमाइसिस	26 करोड़ 20 लाख	78
• लेप्रोसी	2 लाख 15 हजार	102
अन्य प्रमुख बीमारियां		
डेंगू, प्लेग, येलो फीवर, कोलेरा, इंसेकलाइटिस, अस्थमा, जापानी फीवर, ब्रोनकाइटिस, बर्ड-फ्लू, एलर्जी, ट्यूबरफ्लोसिस, खांसी, मानव अफ्रीकी, जुकाम, ट्राइपानोसोमियासिस		

स्रोत: http://www.who.int/gho/neglected_diseases/en/

प्रमुख बीमारियां

जलवायु परिवर्तन से किस तरह बीमारियां जानलेवा हो जाएंगी इसका अंदाजा इनकी वर्तमान स्थिति से लगाया जा सकता है। आइए जानते हैं कुछ प्रमुख बीमारियों की वर्तमान वैश्विक स्थिति:-

मलेरिया: पूरी दुनिया के सामने मलेरिया ने बुहत बड़ी चुनौती पेश की है। विश्व के 97 देशों के 3.2 अरब लोग मलेरिया से प्रभावित क्षेत्र में रह रहे हैं। जिसमें 1.2 अरब लोगों को मलेरिया होने की आशंका ज्यादा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा जारी विश्व मलेरिया रपट-2014 के अनुसार सन् 2013 में 19 करोड़ 80 लाख लोगों में मलेरिया के लक्षण पाए गए। इस बीमारी से 5 लाख 84 हजार लोगों की मृत्यु हुई। मलेरिया से हुई मौतों में 90 फीसद मौत अफ्रीकी देशों में हुई। वहीं भारत की बात करें तो डबल्यूएचओ की मलेरिया रपट-2014 के अनुसार मलेरिया संक्रमित होने की अधिकतम आशंका वाले क्षेत्रों में 22 फीसद यानी 27 करोड़ 55 लाख लोग हैं। जबकि मलेरिया प्रभावित न्यूतम आशंका वाले क्षेत्रों में 67 फीसद अर्थात् 83 करोड़ 89 लाख लोग रह रहे हैं। मलेरिया मुक्त क्षेत्रों का प्रतिशत महज 11 है। कहने का मतलब यह है कि भारत के 89 फीसद लोग मलेरिया प्रभावित क्षेत्र में रहते हैं। वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर बहुत ही मजबूती के साथ यह कहा जा रहा है कि जलवायु परिवर्तन का स्वास्थ्य पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ रहा है। डेंगू व मलेरिया जैसे रोगों का प्रभाव क्षेत्र बढ़ जाता है। डब्लूएचओ के अनुमान के मुताबिक प्रत्येक वर्ष 1,50,000 लोगों की मौत जलवायु परिवर्तन के कारण हो रही है।[8]

लिशमैनियासिस

लिशमैनियासिस बीमारियों का समूह है। मादा फिलोबोटोमाइन सैंडलाई के काटने से मानव में इसका संक्रमण फैलता है। लेशमिनियासिस के मुख्य रूप से तीन प्रकार है-(1) विससेरल (वीएल) जिसे हम कालाजार के रूप में जानते हैं, यह इस बीमारी का सबसे गंभीर रूप है, (2) कुटानियस (सीएल), यह बहुत कॉमन है। (3) मोकोकुटानियस।

यह बीमारी मुख्य रूप से अफ्रीका, एशिया व लैटिन अमेरिका की आबादी को प्रभावित करती हैं। साथ ही इसका प्रत्यक्ष संबंध कुपोषण, विस्थापन, कमजोर आवासीय व्यवस्था, कमजोर पाचन शक्ति व संसाधनों की अनुपलब्धता से है। नए आंकड़े बताते हैं कि 98 देशों में यह बीमारी पाई जा रही हैं। प्रत्येक वर्ष 2 लाख से 4 लाख नए मामले गंभीर रूप के लेशमैनियासिस (वीएल) से पीड़ितों के पाए गए हैं जबकि सीएल श्रेणी से पीड़ितों की संख्या 7 लाख से 12 लाख के आसपास है। जिसमें 90 फीसद वीएस श्रेणी यानी कालाजार के मामले महज 6 देशों बांग्लादेश, ब्राजील, इथोपिया, भारत, दक्षिण सुडान और सुडान में है।

लिमफैटिक फैलाराइसिस: इस बीमारी से विश्व के 73 देश प्रभावित हैं और पूरे विश्व में 1 अरब 23 लाख 30 हजार लोगों को इस रोग से बचाव के लिए सुरक्षा-इलाज कराने की जरूरत है। डबल्यूएचओ के अफ्रीकी व दक्षिण पूर्व एशिया के समुद्र तटीय क्षेत्रों के 94 फीसद लोग इस बीमारी के परिक्षेत्र में हैं। जिन लोगों को इस रोग से बचने के लिए कीमोथिरेपी दिया जाना अति आवश्यक है उनकी संख्या 70 करोड़ 1 लाख है अर्थात् 57 फीसद लोग दक्षिण पूर्व एशिया (9 प्रभावित देशों) में व 47 करोड़ 2 लाख अफ्रीकन क्षेत्र के 35 देशों में हैं। जलवायु परिवर्तन होने की स्थिति में जलीय क्षेत्रों में रहने वाले लोगों में इस रोग के फैलाव की आशंका और बढ़ती जा रही है।

लेप्रोसी (कुष्ठ रोग): डबल्यूएचओ रपट बताती है कि 102 देशों व क्षेत्रों में कुष्ठ रोग के मामले पाए गए है। 2014 की शुरुआत में कुल 2 लाख 15 हजार 656 मामले कुष्ठ रोगियों के पाए गए हैं। जलवायु परिवर्तन का सीधा असर त्वचा पर पड़ता है। यदि पर्यावरणीय

असंतुलन इसी तरह जारी रहा तो आने वाले समय में त्वचा संबंधी रोगों में और इजाफा होगा। भारत की बात करें तो 2014-15 में कुल 1 लाख 25 हजार 785 मामले पाए गए जो कि 2013-14 के मुकाबले 2.5 फीसद कम है।[9]

सिस्टोसोमाइसिस: विश्व के 78 देशों में इसका प्रभाव है। इस रोग से बचने के लिए 52 देशों के 26 करोड़ 20 लाख लोगों को बचाव हेतु कीमोथिरेपी की जरूरत है, जिसमें 12 करोड़ 12 लाख विद्यालय जाने वाले बच्चे हैं।[10]

वायु जनित बीमारियां

ट्यूबरक्लोसिस (टीबी): डब्ल्यूएचओ की रिपोर्ट के अनुसार-2012 में वैश्विक स्तर पर टीबी के 86 लाख नए मामले दर्ज किए गए और 13 लाख लोगों की टीबी से मौतें हुईं। टीबी से होने वाली मौतों में से 95 प्रतिशत से अधिक मौतें निम्न और मध्यम आय वाले देशों में होती हैं। यह रिपोर्ट बताती है कि 15-44 आयु वर्ग के महिलाओं की मौत के शीर्ष तीन कारणों में से एक टीबी भी है।[11] इंडियन कौंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च की रिपोर्ट में बताया गया है कि भारत में लगभग 20-23 लाख लोग प्रत्येक साल टीबी से ग्रसित होते हैं जो कि वैश्विक टीबी मरीजों का 26 फीसद है। इस रोग से भारत में तकरीबन 3 लाख लोग प्रत्येक साल काल के गाल में समा रहे हैं।[12]

वायु प्रदूषण जनित बीमारियों का फैलाव भी निरंतर हो रहा है। जिनका जलवायु परिवर्तन से प्रत्यक्ष संबंध है। डबल्यूएचओ के आंकड़ों की माने तो 2012 में 37 लाख लोगों की मौत बाह्य वायु प्रदूषण से हुई जिसमें 88 फीसद लोग कम व मध्य आय वाले देशों के थे। वहीं 43 लाख लोगों की मौत हाउसहोल्ड वायु प्रदूषण यानी घर के अंदर के वायु प्रदूषण से हुई है। इस तरह से देखा जाए तो विश्व में आठ मौतों में एक मौत वायु प्रदूषण के कारण है। पब्लिक हेल्थ इन्वारमेंट जिनेवा, 2009 की रपट में भारत में पर्यावरणीय कारणों से होने वाली बीमारियों की जानकारी मिलती है। डब्ल्यूएचओ द्वारा जारी इनवायरमेंट बर्डन बीमारियों की श्रेणी के अंतर्गत जारी भारतीय प्रोफाइल में बताया गया है कि इंडोर वायु प्रदूषण से 4 लाख 88 हजार 200 मौतें व बाह्य वायु प्रदूषण से 1 लाख 19 हजार 900 लोगों की जानें गई हैं। इतना ही नहीं, वातावरण में सल्फर आक्साइड की मात्रा बढ़ने से दिल के दौरे (हार्ट अटैक) की आशंका बढ़ जाती है।

जलवायु परिवर्तन, स्वास्थ्य व गरीबी

जलवायु परिवर्तन की सबसे ज्यादा मार गरीब लोगों पर पड़ रही है। पहले से ही खाद्य व आवास की समस्या से जूझ रहे लोगों के लिए बदलती जलवायु व इसका प्रभाव त्रासद पूर्ण है। वैसे सामाजशास्त्रियों की माने तो गरीबी अपने आप बीमारियों का समुच्चय है। डब्ल्यूएचओ के आंकड़े के अनुसार दक्षिण पूर्व एशिया परिक्षेत्र में पूरे विश्व की 26 फीसद जनसंख्या रहती है जहां विश्व के 30 फीसद गरीब हैं।[13] जनसंख्या में अधिकता के कारण इस परिक्षेत्र में जलवायु परिवर्तन का असर बहुत ही आपदाकारी हो सकता है। यह परिक्षेत्र पहले से संक्रामक बीमारियों के भार तले दबा हुआ है। इस क्षेत्र में 1 करोड़ 40 लाख लोगों की मौत का कारण जलवायु परिवर्तन बनेगा। जिसमें 40 फीसद मौतों के लिए संक्रामक बीमारियां जिम्मेदार रहेंगी।[14] 2015 के डब्ल्यूएचओ आंकड़ों के अनुसार 5 वर्ष से कम उम्र के बच्चों की मृत्यु दर में 83 फीसद बच्चों की मौत संक्रामक बीमारी व पोषण अभाव में हो रही है। मौसम में बड़े पैमाने पर होने वाले बदलाव, जैसे चक्रवात व बाढ़ के आने की स्थिति में डायरिया व कोलेरा जैसी बीमारियों के लिए अनुकूल हो जाता है।[15]

जलवायु परिवर्तन, स्वास्थ्य व भारतीय पक्ष

जलवायु परिवर्तन को लेकर भारत हमेशा से सचेत रहा है। यह बात भारत के प्रधानमंत्री द्वारा पृथ्वी दिवस पर दिए उस बयान से स्पष्ट होती है जिसमें उन्होंने कहा था- 'भारत विश्व को जलवायु परिवर्तन से निपटने के रास्ते दिखा सकता है क्योंकि पर्यावरण की देखभाल करना देश की मान्यताओं का अभिन्न अंग है। हमारा नाता ऐसी संस्कृति से है जो इस मंत्र में विश्वास करती है कि धरती हमारी मां है और हम उसकी संतानें हैं।'[16] अपनी बात को दुहराते हुए प्रधानमंत्री ने अपने ब्रिटेन के वेम्बले स्टेडियम में भारतीय मूल के लोगों को संबोधित करते हुए स्पष्ट रूप से कहा कि विश्व के सामने दो प्रमुख समस्याएं हैं एक आतंकवाद और दूसरा जलवायु परिवर्तन। जलवायु परिवर्तन के क्षेत्र में भारत विश्व को बहुत कुछ दे सकता है। अपनी ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए भारत द्वारा सौर ऊर्जा को बढावा देने पर बल देते हुए उन्होंने आह्वान किया कि भारत दुनिया के 102 सूर्य पुत्रों (जहां पर सूर्य की रोशनी ज्यादा है) को एक मंच पर लाने की पहल कर रहा है। प्रधानमंत्री की यह सोच भारत की दूरदृष्टि को स्पष्ट कर रही है। निश्चित ही इससे ऊर्जा जरूरतों के लिए उपयोग में लाए जाने वाले ईंधनों (जिनसे कार्बन उत्सर्जन होता है) की खपत में कमी आएगी।

प्रधानमंत्री के सुर में सुर मिलाते हुए पिछले दिनों केंद्रीय वित मंत्री ने भी जलवायु परिवर्तन पर आयोजित वित्त मंत्रियों की बैठक में कहा कि, 'हम मानते हैं कि पृथ्वी पर बढ़ती गर्मी भारत सहित विश्व के गरीब हिस्सों को बहुत ज्यादा प्रभावित करेगी। हम इस बारे में भी पूरी तरह से अवगत हैं कि हमारे मुकाबले धनी देश अधिक आसानी और किफायती तरीके से जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन कर सकते हैं। इसलिए इससे हमारा ज्यादा कुछ दांव पर लगा है।'[17]

दिसंबर-2015 में जलवायु परिवर्तन पर पेरिस सम्मेलन वैश्विक स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से बहुत ही महत्वपूर्ण है। भारत के पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री ने पेरिस में प्री-सीओपी-21 की आम सभा को संबोधित करते हुए विकासशील देशों की समस्याओं को बखूबी रखा व उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि जलवायु परिवर्तन के मामले में विकसित राष्ट्रों को और खुलकर सामने आना चाहिए। उन्होंने कहा कि, विकसित देशों द्वारा वित्त उपलब्ध कराने की प्रतिबद्धता उनकी ऐतिहासिक जिम्मेदारियों और आर्थिक क्षमताओं पर आधारित है।[18]

निष्कर्ष

पेरिस सम्मेलन में विश्व के देश कार्बन उत्सर्जन को लेकर जो नियामक तय करेंगे, उस पर बहुत कुछ निर्भर करेगा कि विश्व का स्वास्थ्य कैसा रहने वाला है! आईपीसीसी के अनुसार जलवायु परिवर्तन का सबसे बुरा असर एशिया के क्षेत्रों पर पड़ेगा क्योंकि ज्यादातर देशों की अर्थव्यवस्था कृषि व

(जारी ... पृष्ठ 68 पर)

भारतीय पथः अतिभोग नहीं, सदुपयोग से बचेगा जीवन

अरुण तिवारी

आज जलवायु परिवर्तन का भारतीय तकाजा यह है कि सरकार और समाज मिलकर एक ओर शिक्षा, कौशल, जैविक कृषि, कुटीर ग्रामोद्योग, सार्वजनिक वाहन, बिना ईंधन वाहन आदि की बेहतरी व संरक्षण में लगे, तो दूसरी ओर धन का अपव्यय रोके; कचरा कम करे; पलायन व जनसंख्या नियंत्रित करे; फसल उत्पादन पश्चात् उत्पाद की बर्बादी न्यूनतम करे। नदियां बचाए; भूजल भंडार बढ़ाए

कार्बन बजट एक मसला है और जान-माल का नुकसान, दूसरा। उत्सर्जन कटौती तकनीकों को पेटेंट मुक्त और हस्तांतरण को मुनाफा मुक्त रखने की मांग, तीसरा मसला है। दुखद है कि तापमान वृद्धि रोकने जैसे जीवन रक्षा कार्य में भी दुनिया, मसलों में बंट गई है। भारत, चीन, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका ने भी 'बेसिक' नाम से अपना एक अलग मंच बना लिया है। तर्क है कि जिसने जितना ज्यादा कार्बन उत्सर्जन किया, उत्सर्जन रोकने का उसका लक्ष्य उतना अधिक होना चाहिए। दंड स्वरूप, उसे उतनी अधिक धनराशि कम उत्सर्जन करने वाले और गरीब देशों को उनके नुकसान की भरपाई में देनी चाहिए। रियो डि जिनेरियों में हुए प्रथम पृथ्वी सम्मेलन (03 से 14 जून, 1992) से लेकर अब तक यही चल रहा है। इस रार का आधार, 'प्रदूषण करो, दंड भरो' का सिद्धांत है।

तकरार का अनुचित आधार

आर्थिक-सामाजिक न्याय की दृष्टि से आप इसे सही मानने को स्वतंत्र हैं, किंतु यह सही है नहीं। क्या पैसे पाकर आप, ओजोन परत के नुकसानदेह खुले छेदों को बंद कर सकते हैं? मूंगा भित्तियां (कारेल रीफ), कार्बन अवशोषित करने का प्रकृति प्रदत अत्यंत कारगर माध्यम हैं। हमारी पृथ्वी पर जीवन का संचार, सबसे पहले मूंगा भित्तियों में ही हुआ। इस नाते ये जीवन की नर्सरी हैं। समुद्र तापमान बढ़ने के कारण दुनिया, मूंगा भित्तियों का कई लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल खो चुकी है। धरती पर जीवन की नर्सरी कहे जाने वाली मूंगा भित्तियां पूरी तरह नष्ट हो जाएंगी, तब जीवन बचेगा; क्या दुनिया की बड़ी-से-बड़ी अर्थव्यवस्था इसकी गारंटी दे सकती है?

प्रदूषण जान लेता है। प्रश्न यह है कि आखिरकार कोई प्रदूषक, सिर्फ दंड भरकर किसी की हत्या के अपराध से कैसे मुक्त हो सकता है? यह दीवानी के बजाए, फौजदारी कानून का मामला है। 'प्रदूषण करो और दंड भरो' का यही सिद्धांत प्रदूषण रोकने की बजाए, भ्रष्टाचार बढ़ाने वाला सिद्ध हो रहा है। जब तक यह सिद्धांत रहेगा, पैसे वाले प्रदूषक मौज करेंगे और गरीब मरेंगे ही मरेंगे। इस सिद्धांत के आधार पर जलवायु परिवर्तन के कारकों पर लगाम लगाना कभी संभव नहीं होगा। जरूरत, इस सिद्धांत को चुनौती देकर, प्रदूषकों की मुश्कें कसने की है। जरूरी है कि एक सीमा से अधिक प्रदूषण को, हत्या के जानबूझकर किए प्रयास की श्रेणी में रखने के राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय कानून बनें। कानून की पालना की पुख्ता व्यवस्था बने। आगे चलकर, धीरे-धीरे प्रदूषण सीमा को घटाकर शून्य पर लाने की समय सीमा तय हो। शून्य प्रदूषण पर पहुंचे उत्पादनकर्ता के लिए प्रोत्साहन प्रावधान भी अभी सुनिश्चित हो। किंतु चित्र यह है कि गरीब और विकासशील देश, आर्थिक आधार पर न्याय मांग रहे हैं। यह हर परिस्थिति, संसाधन और रिश्ते को आर्थिक नजरिये से तोलने के वर्तमान सामाजिक स्वभाव का दुष्परिणाम है। हमें इससे बचना चाहिए।

संकट में साझेदारी का वक्त

जो अंग जितना अधिकतम यत्न कर सकता है, उसे उतनी क्षमता और पूरी ईमानदारी से अधिकतम उतना साझा करना चाहिए। संकट में साझे का सामाजिक सिद्धांत यही है। इसी के

लेखक स्वतंत्र पत्रकार है। जल प्रबंधन, पर्यावरण संरक्षण, वन संरक्षण आदि विषयों पर नियमित तौर पर लिखते रहते हैं। ईमेलः amethiarun@gmail.com

आकलन पर पेरिस जलवायु परिवर्तन समझौता होना चाहिए।

हम याद करें कि योजनाएं और अर्थव्यवस्थाएं, उपलब्ध अर्थ के आधार पर चल सकती हैं, पर 'अर्थ' यानी पृथ्वी और इसकी जलवायु नहीं। जलवायु परिवर्तन का वर्तमान संकट, अर्थ संतुलन साधने से ज्यादा, जीवन संतुलन साधने का विषय है। स्वयं को एक अर्थव्यवस्था मानकर, यह हो नहीं सकता। हमें पृथ्वी को शरीर और स्वयं को पृथ्वी का एक शारीरिक अंग मानना होगा। प्राण बचाने के लिए अंग एक-दूसरे की प्रतीक्षा नहीं करते। यह प्राकृतिक संरक्षण का सिद्धांत है।

भारत को भी प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए कि दुनिया के दूसरे देश क्या करते हैं? हां, उन पर नजर रखनी चाहिए; उचित करने को दबाव बनाना चाहिए। किंतु हम यह तभी कर

योजनाएं और अर्थव्यवस्थाएं, उपलब्ध अर्थ के आधार पर चल सकती हैं, पर 'अर्थ' यानी पृथ्वी और इसकी जलवायु नहीं। जलवायु परिवर्तन का वर्तमान संकट, अर्थ संतुलन साधने से ज्यादा, जीवन संतुलन साधने का विषय है। स्वयं को एक अर्थव्यवस्था मानकर, यह हो नहीं सकता। हमें पृथ्वी को शरीर और स्वयं को पृथ्वी का एक शारीरिक अंग मानना होगा। प्राण बचाने के लिए अंग एक-दूसरे की प्रतीक्षा नहीं करते। यह प्राकृतिक संरक्षण का सिद्धांत है।

सकते हैं, जब पहले हमने खुद उचित कर लिया हो। प्रधानमंत्री ने भारत के उत्सर्जन की स्वैच्छिक कटौती के भारत प्रस्ताव की घोषणा के लिए गांधी जयंती, 2015 के दिन को चुना। महात्मा गांधी ने दूसरों से वहीं अपेक्षा की, जो पहले खुद कर लिया। भारत के पास प्रतीक्षा करने का विकल्प इसलिए भी शेष नहीं है, चूंकि भारत की सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक परिस्थितियां अन्य देशों से बहुत भिन्न, विविध व जटिल हैं।

भारतीय परिस्थितियां व संकेत

भारत की प्रति वर्ष प्रजनन दर, 1.6 प्रतिशत है। इस दर से वर्ष 2050 तक भारत की आबादी, दुनिया में सबसे ज्यादा 162 करोड़ हो जाएगी। आबादी घनत्व के मामले में भारत, दुनिया के सर्वाधिक आबादी घनत्व वाले पहले 10 देशों में है। भारत में कुपोषितों की जनसंख्या, दुनिया के किसी भी देश से ज्यादा है। दुनिया की 15 प्रतिशत आबादी विकलांग है, भारत की 20.6 प्रतिशत। आज भारत में विकलांगों की संख्या, 2.63 करोड़ है। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम द्वारा तय विकास मानक, कितने समग्र हैं, कितने एकांगी.. यह एक अलग बहस का विषय है; किंतु इस पर कोई बहस नहीं है कि विकास मानकों के पैमाने पर भारत, दुनिया के 177 में से 128वें स्थान का देश है।

आर्थिक विषमता का नमूना यह है कि एक ओर, भारत सबसे तेजी से बढ़ते खरबपतियों की संख्या वाला देश है, तो दूसरी ओर सबसे तेजी से बढ़ती गरीबों की संख्या वाला देश। भारत के एक प्रतिशत अमीरों का इसकी 53 प्रतिशत, पांच प्रतिशत का 68.6 प्रतिशत और 10 प्रतिशत का 76.3 प्रतिशत दौलत पर कब्जा है। शेष 90 प्रतिशत के हिस्से में मात्र 23.7 प्रतिशत दौलत है। आर्थिक उदारवाद ने भारत में अपने 25 वर्ष पूरे कर लिए हैं। संकेत हैं कि आर्थिक उदारवाद के परिणामस्वरूप, यह खाई पूरी दुनिया में बढ़ रही है; भारत में भी बढ़ेगी। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कानून के बावजूद, भारत में बेरोजगारी दर बढ़ी है। बेरोजगारों की संख्या चार करोड़, 47 लाख, 90 हजार जा पहुंची है। भारत के 65 प्रतिशत उद्योग आज पानी की कमी महसूस कर रहे हैं। रोजगार का उम्मीद भरा क्षेत्र यह भी नहीं रहा। उत्तर प्रदेश में चपरासी पद की नौकरी हेतु लाखों तक जा पहुंची आवेदकों संबंधी खबर और उनकी शिक्षा के स्तर की चर्चा आप तक पहुंची ही होगी। भारत के सकल घरेलू उत्पाद में सेवा क्षेत्र का योगदान बढ़ जरूर रहा है, किंतु भारत में तकनीकी शिक्षा और कुशलता की हालत यह है कि इंजीनियरिंग शिक्षा प्राप्त मात्र एक प्रतिशत स्नातक ही इंजीनियरिंग कर्मचारी के तौर पर नौकरी पा सके हैं। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के मुताबिक, स्कूलों में व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त उत्तीर्ण महज 18 प्रतिशत युवाओं को संबंधित क्षेत्र में नौकरियां मिल पाईं। इन 18 में से भी मात्र 40 प्रतिशत के पास औपचारिक शर्तों पर नौकरी है। यह हालत तब है कि जब भारत में कुशल मजदूर और व्यावसायिक प्रशिक्षण स्कूल... दोनों की कमी है।

अकुशल श्रम के लिए कृषि सर्वश्रेष्ठ कार्य क्षेत्र है। भारत की 64 प्रतिशत आबादी अपनी आजीविका के लिए सीधे-सीधे खेती पर निर्भर भी है। किंतु जलवायु परिवर्तन का नतीजा, भारत में बड़ी तेजी के साथ भूगोल परिवर्तन के रूप में आ रहा है। पिछले कुछ सालों में भारत की 90 लाख 45 हजार हेक्टेयर जमीन बंजर हो चुकी है। भारत के 32 फीसदी भूभाग की उर्वरा शक्ति लगातार क्षीण हो रही है। थार रेगिस्तान, पिछले 50 वर्षों में औसतन आठ किलोमीटर प्रति वर्ष की रफ्तार से बढ़ रहा है। थार की रेतीली आंधियां, हिमालय से टकराकर उसे भी प्रभावित कर रही है। ग्लेशियर पिघलने की तेज होती रफ्तार वाले हिमालयी इलाकों की बर्फ में रेतीले कण पाए गए हैं। हिमाचल के लाहुल-स्पीति की तर्ज पर कल को हिमालय में कई ठंडे मरुस्थल और बन जाएं, तो ताज्जुब नहीं। 2010 के वैश्विक

प्रधानमंत्री ने भारत के उत्सर्जन की स्वैच्छिक कटौती के भारत प्रस्ताव की घोषणा के लिए गांधी जयंती, 2015 के दिन को चुना। महात्मा गांधी ने दूसरों से वहीं अपेक्षा की, जो पहले खुद कर लिया। भारत के पास प्रतीक्षा करने का विकल्प इसलिए भी शेष नहीं है, चूंकि भारत की सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक परिस्थितियां अन्य देशों से बहुत भिन्न, विविध व जटिल हैं।

जलवायु संकट सूचकांक में भारत का स्थान, पहले दस देशों में है। वर्ल्ड इकोनॉमी फोरम की पहल पर येल और कोलंबिया विश्वविद्यालय के विशेषज्ञों द्वारा तैयार पर्यावरणीय प्रदर्शन सूचकांक में शामिल कुल 178 देशों की सूची में भारत को 155वें पायदान पर रखकर फिसड्डी करार दिया गया है; पड़ोसी पाकिस्तान (148) और नेपाल (139) से भी पीछे। चेतावनी देने के लिए ये आंकड़े हैं ही।

हिंसक भविष्य और समाधान

यह स्पष्ट है कि जैसे-जैसे जीवन और आजीविका के साधन घटते जाएंगे, रार बढ़ती जाएगी। आज, महंगाई पर रार है; कल को भूमि, पानी, बिजली जैसे संसाधनों से लेकर अस्पताल में इलाज व रोजगार को लेकर रार बढ़ेगी। अमीर-गरीब, किसान-उद्योगपति, किसान-व्यापारी, सरकार-समाज के वर्ग संघर्ष

बढ़ेंगे। रोजगार में आरक्षण के कारण जाति संघर्ष बढ़ेंगे। जलवायु परिवर्तन का यह दौर, भारत में भी छीना-झपटी, वैमनस्य, हिंसा और अपराध का नया दौर लाने वाला साबित होगा।

आप फिर सवाल कर सकते हैं कि दुनिया दस अरब मीट्रिक टन कार्बन वायुमंडल में छोड़ती है। भारत, मात्र 54 मीट्रिक टन कार्बन उत्सर्जित करता है। अमीर देश इतना खाना बर्बाद करते हैं कि उससे पूरे उपसहारा अफ्रीका की जरूरत की पूर्ति हो जाए। भारत में खाद्य सुरक्षा के लिए हमें कानून बनाना पड़ा है। अमेरिका वातानुकूलन में इतनी बिजली उपभोग करता है, जितने से पूरे अफ्रीका के एक अरब लोगों के घरेलू विद्युत जरूरतें पूरी की जा सकें। भारत में प्रति व्यक्ति खपत, अमेरिकियों की एक-चौथाई है। भारत की 25 से 28 प्रतिशत आबादी अंधेरे में रही है और क्या करें? खाना छोड़ दें या खनन करना बंद कर दें? बिजली बनाना-जलाना बंद कर दें? रासायनिक खाद को छोड़कर, सिर्फ जैविक खाद के भरोसे बैठ जाएं? जीवाश्म ईंधन का उपयोग शून्य कर दें अथवा साईकिल व बैलगाड़ी से दफ्तर जाएं?

दृष्टि बदलने की जरूरत

मेरा कहना है कि आप सिर्फ दृष्टि बदलें। बुखार होने पर हम क्या करते हैं? तीन तरीके अपनाते हैं। पहला, पट्टी करते हैं; ताकि बुखार इस सीमा तक न पहुंचने पाए कि शरीर का कोई अंग ही क्षतिग्रस्त हो जाए। दूसरा तरीका है, जांच कराएं, दवा खरीदें, इंजेक्शन लगवाएं आदि। तीसरा तरीका है कि शरीर का शोधन करें। शोधन करने के लिए आधा उपवास करें यानी जो अति इस शरीर के साथ ही है, उसका त्याग करें। जितना शरीर को जिंदा रखने के लिए जरूरी है, उतना और वैसा भोजन लें। वैश्विक तापमान वृद्धि भी धरती को एक तरह का बुखार ही है। जलवायु परिवर्तन, इसका एक लक्षण मात्र है। कार्बन उत्सर्जन रोकने की बात करना, पट्टी करने जैसा काम है। जैसे ही पट्टी हटेगी, फिर तापमान बढ़ेगा। वैकल्पिक तकनीकों और मशीनों को भर लेना, दवाई व डॉक्टर में पैसा खर्च कर लेने जैसा महंगा, परावलम्बी तथा और सुविधा जुटा लेने का काम है। क्या अधिक विद्यालय, अधिक अस्पताल, अधिक पुलिस, अधिक कचहरी जुटा लेने से क्रमशः अधिक शिक्षित, अधिक सेहतमंद, अधिक सुरक्षित और अधिक विवादमुक्त हुआ जा सकता है? स्पष्ट है कि यह ऐसा इलाज नहीं है कि फिर कभी बुखार हो ही नहीं। उपभोग की अति की जगह, सदुपयोग को हमेशा की आदत बना लेना, हमेशा आधे उपवास पर रहने जैसा काम है। तब तक यह शोधन कार्य चलता रहेगा, शरीर शोधित होता रहेगा। इसी से गारंटी है कि फिर धरती और हमारे दोनों के शरीर को फिर कभी बुखार नहीं होगा। यही सर्वश्रेष्ठ है।

शहरों के बसने का आधार, हमेशा से सुविधा होता है। शहरी संस्कृति ने सभ्यता को भी सुविधा की पयार्य मान लिया। भारत में जितनी सुविधा आई, उतना कचरा बढ़ा। भारत में हर रोज करीब 1.60 लाख मीट्रिक टन कचरा होता है। हर भारतीय, एक वर्ष में पॉलीथीन झिल्ली के रूप में औसतन आधा किलोग्राम कचरा बढ़ाता है। ई-बाज़ार जल्द ही हमारे खुदरा व्यापार को जोर से हिलायेगा, कोरियर सेवा और पैकिंग इंडस्ट्री और पैकिंग कचरे को बढ़ाएगा। जो छूट पर मिले.. खरीद लेने की भारतीय उपभोक्ता की आदत, घर में अतिरिक्त उपभोग और सामान की भीड़ बढ़ाएगी और जाहिर है कि बाद में कचरा। सोचिए! क्या हमारी नई जीवन शैली के कारण पेट्रोल, गैस व बिजली की खपत बढ़ी नहीं है? जब हमारे जीवन के सारे रास्ते बाज़ार ही तय करेगा, तो उपभोग बढ़ेगा ही। उपभोग बढ़ाने वाले रास्ते पर चलकर क्या हम कार्बन उत्सर्जन घटा सकते हैं?

क्या है गांधी मार्ग?

हम भूल गए कि सभ्य होना, सलीकेदार और तमीजदार होना है। इन्हीं कम याददाश्त वालों के कारण, महात्मा गांधी ने सभ्यता को असाध्य रोग कहा। मशीनों को ज़हर मिटाने की ज़हरीली दवा जैसा माना। बड़े-बड़े ढांचों की बजाए, छोटे-छोटे ढांचे और बड़ी-बड़ी मशीनों की बजाए, छोटे से चरखे और कुटीर ग्रामोद्योगों को बेहतर माना। अपने लिए छोटे-छोटे काम चुने; एकादश व्रत तय किए; गांव को अपने आप में एक गणतंत्र और संयम, सादगी और स्वावलंबन को स्वतंत्रता और प्रकृति... दोनों के संरक्षण का औजार माना।

आज जलवायु परिवर्तन का भारतीय तकाजा यह है कि सरकार और समाज मिलकर एक ओर शिक्षा, कौशल, जैविक कृषि, कुटीर ग्रामोद्योग, सार्वजनिक वाहन, बिना ईंधन वाहन आदि की बेहतरी व संरक्षण में लगें, तो दूसरी ओर धन का अपव्यय रोकें; कचरा कम करें; पलायन व जनसंख्या नियंत्रित करें; फसल उत्पादन पश्चात् उत्पाद की बर्बादी न्यूनतम करें। नदियां बचाएं; भूजल भंडार बढ़ाएं।

अपव्यय और कंजूसी में फर्क होता है। जूठन न छोड़ना कंजूसी नहीं, अपव्यय रोकना है। गांवों में तो यह जूठन मवेशियों के काम आ जाता है अथवा खाद गड्ढे में चला जाता है। शहरों में ऐसा भोजन कचरा बढ़ाता है। हमें चाहिए कि हम जिस चीज का ज्यादा इस्तेमाल करते हों, उसके अनुशासित उपयोग का संकल्प लें। यदि हम बाज़ार से घर आकर कचरे के डिब्बे में जाने वाली पॉलीथीन झिल्लियों को घर में आने से रोक दें, तो गणित लगाइए कि एक अकेला परिवार ही अपनी जिंदगी में कई सौ किलो कचरा कम कर देगा। खुले सामान में गुणवत्ता सुनिश्चित कर पाएं, तो गुणवत्ता के नाम पर पैकिंग को बढ़ावा मिलना स्वतः बंद हो जाएगा।

जलवायु परिवर्तनः प्रकृति का नियामक

यदि हम यह सब नहीं करेंगे, तो मजबूर प्रकृति तो मानव कृत्यों का नियमन करेगी ही। उसने करना शुरू कर ही दिया है। जलवायु परिवर्तन के इस दौर को हमें प्रकृति द्वारा मानव कृत्यों के नियमन के कदम के तौर पर ही लेना चाहिए। हम नमामि गंगे में योगदान दें, न दें; हम एकादश के आत्म नियमन सिद्धांतों को माने न माने; किंतु यह कभी न भूलें कि प्रकृति अपने सिद्धांतों को मानती भी है और दुनिया के हर जीव से उनका नियमन कराने की क्षमता भी रखती है। मनुस्मृति के प्रलय खंड, इसका गवाह है। जिन जीवों को यह जलवायु परिवर्तन मुफीद होगा, उनकी जीवन क्षमता बढ़ेगी। 'फिटेस्स अमंग द फिट' के मानदंड पर खरा उतरने वाले बचेंगे; शेष चार्ल्स डार्विन के सिद्धांत की राह चले जाएंगे। पुनः मूषक भवः! आइए, मोहनदास कर्मचन्द गांधी नामक उस महान दूरदर्शी की इस पंक्ति को बार-बार दोहराएं-''पृथ्वी हरेक की जरूरत पूरी कर सकती है, लालच एक व्यक्ति का भी नहीं।'' यही रास्ता है। ❑

पर्यावरण संरक्षण: संवैधानिक दायित्व

संध्या त्रिपाठी

भारत प्राचीन समय से ही पर्यावरण संरक्षण को लेकर सदैव सजग रहा, इसी कारण उसने संवैधानिक स्तर पर भी पर्यावरण संरक्षण की तरफ ध्यान दिया। हमारे देश में पर्यावरण के अनुकूल एक समृद्ध संस्कृति भी रही है यही कारण है कि देश में हर स्तर पर पर्यावरण संरक्षण के प्रति ध्यान दिया गया और हमारे संविधान निर्माताओं ने इसका ध्यान रखते हुए संविधान में पर्यावरण की जगह सुनिश्चित की। पर्यावरण को संवैधानिक स्तर पर मान्यता देते हुए इसे सरकार और नागरिकों के संवैधानिक दायित्व से जोड़ा गया

मानवीय जीवन के आरंभ से ही मुनष्य एवं पर्यावरण में आपसी संबंध बना हुआ है। मनुष्य का जीवन प्रकृति पर निर्भर करता है। अत: उसके अस्तित्व के लिए प्राकृतिक परिवेश अनिवार्य है। भारतीय संस्कृति में प्रकृति 'पृथ्वी' को मां कहा गया है। **'माता भूमि: पुत्रोऽहयं पृथिव्या:'**[1] अर्थात पृथ्वी हमारी मां है और हम पृथ्वी के पुत्र हैं। चूंकि पृथ्वी माता रूप में संपूर्ण ब्रह्मांड के जीवों का पालन-पोषण करती है। अत: इसका संरक्षण करना हमारा नैतिक कर्त्तव्य है। भारतीय समाज आदिकाल से पर्यावरण संरक्षक की भूमिका निभाता रहा है। हमनें प्रकृति प्रेम को सर्वोपरि रखा इसका कारण यह है कि हमारे वेदों, उपनिषदों, पुराणों एवं धार्मिक ग्रंथों में पेड़-पौधों एवं अन्य जीव-जंतुओं के सामाजिक महत्व को बताते हुए उनको पारिस्थिकी से जोड़ा जाता है। प्राचीन युग में विभिन्न दार्शनिकों, शासकों और राजनेताओं ने प्रकृति के प्रति जागरुकता दिखाई है। प्राचीन युग के विद्वान कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में वन संरक्षण का उल्लेख किया है तथा पशुओं के शिकार के संबंध में अनेकों जटिल नियम प्रस्तुत किए हैं। आधुनातन परिभाषा के अनुसार चाणक्य भारत के प्रथम वन एवं वन्य जीव संरक्षक थे।[2]

इससे पूर्व पर्यावरण संरक्षण के लिए वैदिक युग में नदियों के देवत्व वाला स्वरूप उभरकर हमारे समक्ष उपस्थित हुआ था। नदी सूक्त में कहा गया है-

गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वती।
नर्मदे सिंधु कावेरि जले *स्मिन्निधिं कुरू।।[3]

हे गंगा, हे यमुना, आदि नदियों तुम मेरे श्रोत सुनो! गंगा के प्रति विशेष आदर अवश्य रहा, किंतु एक समय था जब स्वयं गंगा नदी शब्द नदी मात्र का द्योतक था- सभी नदियां गंगा थी। नदी मात्र के प्रति जो आत्मीयता थी वह आज भी सुरक्षित है। यही कारण है कि आज वर्तमान सरकार ने गंगा नदी को मां माना है और उसे प्रदूषण से रहित करने के लिए पूरे देश में राष्ट्रीय स्तर पर मुहिम चला रही है। अत: यही कहा जा सकता है कि पर्यावरण के संरक्षण के लिए न केवल वर्तमान में बल्कि प्राचीन समय से जागरूकता विद्यमान थी। इस परिप्रेक्ष्य में हमें पर्यावरण के अर्थ को जानना होगा।

पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता

वर्तमान समय में मनुष्य प्रगति की ओर उन्मुख है। वह प्रतिदिन वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिक क्षेत्र में उन्नति कर विकास की ओर बढ़ता जा रहा है वहीं दूसरी ओर विकास की गति हमारे लिए कष्टकारी सिद्ध होती जा रही है और इसी विकास के कारण हमारा पर्यावरण प्रभावित होकर प्रदूषित होता जा रहा है। वनों के कटाई, वनस्पतियों और जीवों के संबंधों में कमी, औद्योगीकरण एवं शहरीकरण में वृद्धि, विज्ञापन तथा तकनीकी का अप्रत्याशित प्रसार और जनसंख्या विस्फोट तथा परमाणु भट्टियों में पैदा होने वाली रेडियोधर्मी ईधन की राख, रासायनिक प्रदूषक और इलेक्ट्रानिक उपकरण जनित प्रदूषक सामग्री के विस्तार से जो पारिस्थिकी परिवर्तन प्रदूषण के रूप में सामने आ रहे हैं उससे प्रकृति का संतुलन बिगड़ गया है। प्रकृति दोहन के कारण जो स्थितियां पैदा हो रही हैं उसमें प्रकृति कब तक मनुष्य का साथ दे पाएगी यह अनुमान लगाना कठिन नहीं हैं। विकसित देश जिस आर्थिक विकास

लेखिका राजनीतिशास्त्र महारानी बनारस महिला महाविद्यालय, रामनगर, वाराणसी में प्रवक्ता हैं। ईमेल: sandhyatripathi11@gamil.com

का लाभ आज उठा रहे हैं वह भूतकाल में मानवीय पर्यावरण के संरक्षण को ध्यान में रखे बिना प्राप्त किया गया था।''[4] आज से पचास वर्ष पहले से ही पर्यावरणविद मानव और प्रकृति के बिगड़ते संबंधों के बारे में सचेत किए जा रहे है, लेकिन उपभोग के नाम पर औद्योगीकरण दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है।

किसी भी देश में प्रदूषण की रोकथाम तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए सबसे बेहतर उपाय है कि पर्यावरण संबंधी पारंपरिक कानूनों तथा आधुनिक कानूनों को सम्मिलित कर एक बेहतर कानून का निर्माण करके वहां के सीमित संसाधनों को ध्यान में रखते हुए पर्यावरणीय सुरक्षा के बेहतर उपाय किए जाएं तथा इसके लिए सभी सकारात्मक एवं प्रासंगिक उपायों को अपनाया जाए। अत: पर्यावरण संरक्षण के लिए वैश्विक तथा राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास किए जा रहे हैं। वैश्विक स्तर पर संयुक्त राष्ट्र संस्था द्वारा तथा राष्ट्रीय स्तर पर संविधान द्वारा तथा सरकारी प्रावधानों द्वारा पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रयास किए जा रहे हैं।

पर्यावरण संरक्षण: मानवीय दृष्टिकोण

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति में प्रकृति से अनुराग केवल उपयोगितावादी दृष्टि से नहीं वरन् पूजा श्रद्धा और आदर की भावना से किया जाता है। वेदों में भी कहा गया है **'रक्षाये प्रकृति पातुं लोका'** अर्थात् प्राणी मात्र के लिए प्रकृति की रक्षा कीजिए। यही पर्यावरणीय संरक्षण का भाव वर्तमान समय में स्टाक होम सम्मेलन में दिखाई देता है। सन् 1972 में स्टाकहोम में पर्यावरण पर आयोजित प्रथम अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में एक मत से सभी ने पर्यावरण संरक्षण को मानवता की आवश्यकता के रूप में स्वीकार किया। सौभाग्य से तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने इसका प्रतिनिधित्व किया और इसे एक व्यवहारिक रूप देने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन्होंने जहां एक ओर पर्यावरण के संरक्षण को प्राथमिकता देना बेहिचक स्वीकार किया वही उन्होंने इस बात को जोरदार ढंग से सामने रखा कि इस मुद्दे का समाधान विकास की समस्या के साथ जोड़कर ढूंढ़ा जाना चाहिए। इसके साथ ही उन्होंने रेखांकित किया कि ''पर्यावरण के लिए संकट वर्तमान में उत्पन्न हुआ है उसके लिए खुद औपनिवेशिक शक्तियां कम जिम्मेदार नहीं हैं। तेल हो या खनिज अपनी जरूरत के लिए इन संसाधनों का दोहन करते वक्त प्रकृति के स्वास्थ्य की कोई चिंता सम्पन्न पश्चिमी देशों ने कभी नहीं की थी।[5]

इस सम्मेलन में विकसित देशों के सामने यह विकल्प रखा गया कि पर्यावरण के संरक्षण के लिए दोहन का त्याग करना चाहिए तथा न्यायोचित मुआवजा देने के लिए उन्हें व्यवस्था करनी चाहिए। इस सम्मेलन में जीवन को बचाने के लिए प्रगति की परिभाषा के पुनर्विलोकन तथा जनसंख्या नियंत्रण अधिनियम पारित किए गए तथा राज्यों द्वारा भी पर्यावरण विभाग स्थापित किए गए। वास्तव में यह सम्मेलन मानवता की स्पष्ट घोषणा थी कि पर्यावरण विनाश अंतर्राष्ट्रीय समस्या है। अत: पर्यावरण को बचाने की संपूर्ण मानवता की नैतिक जिम्मेदारी बनती है। इस सम्मेलन में इस मन्तव्य को स्वीकार किया गया कि: मानवीय पर्यावरण का संरक्षण और सुधार एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा है, जिससे लोगों की खुशहाली और पूरे विश्व का आर्थिक विकास जुड़ा है। सभी सरकारों और संपूर्ण मानव जाति का यह दायित्व है कि वह मानवीय पर्यावरण के संरक्षण और सुधार के लिए मिल-जुल कर काम करे, ताकि संपूर्ण मानव जाति और उसकी भावी पीढ़ियों का हित हो सकें। यह घोषणा कारगर साबित हुई और इसको ध्यान में रखकर अनेक देशों ने पर्यावरण संरक्षण हेतु नियम-कायदों व कानूनों का निर्धारण किया और इन कानूनों के उल्लंघन की स्थिति में दंड की भी व्यवस्था की।

भारतीय संविधान में प्रदूषण मुक्त पर्यावरण हेतु अनेक प्रावधान व्यापक रूप से विद्यमान है। किसी भी कानून की वैधता के लिए यह अति आवश्यक हो जाता है कि केवल अधिनियम द्वारा संरक्षण न प्राप्त हो बल्कि संविधान प्रदत्त अधिकारों के अधीन बनाया गया हो। भारतीय संविधान में न सिर्फ पर्यावरण को बचाने की अवधारणा निहित है, बल्कि पर्यावरण असंतुलन से होने वाले दुष्प्रभावों से भी रक्षा की तरफ ध्यान दिया है।

भारतीय संविधान व पर्यावरण संरक्षण

भारत प्राचीन समय से ही पर्यावरण संरक्षण को लेकर सदैव सजग रहा, इसी कारण उसने संवैधानिक स्तर पर भी पर्यावरण संरक्षण की तरफ ध्यान दिया। हमारे देश में पर्यावरण के अनुकूल एक समृद्ध संस्कृति भी रही है यही कारण है कि देश में हर स्तर पर पर्यावरण संरक्षण के प्रति ध्यान दिया गया और हमारे संविधान निर्माताओं ने इसका ध्यान रखते हुए संविधान में पर्यावरण की जगह सुनिश्चित की। पर्यावरण को संवैधानिक स्तर पर मान्यता देते हुए इसे सरकार और नागरिकों के संवैधानिक दायित्व से जोड़ा गया।

हमारे संविधान में पर्यावरण संरक्षण के लिए कुछ प्रावधान किए गए हैं। संविधान देश का सर्वोच्च तथा मौलिक कानून है तो समस्त व्यक्तियों, राज्यों पर बाध्यकारी रूप से लागू होता है। प्रारंभ में पर्यावरण संरक्षण के संबंध में प्रावधान नहीं था लेकिन अनुच्छेद 47 द्वारा स्वास्थ्य की उन्नति हेतु राज्य का कर्त्तव्य अधिरोपित कर पर्यावरण सुधार किया गया। संसद द्वारा 42 संवैधानिक संशोधन द्वारा पर्यावरण संरक्षण के लिए अधिनियमों को पारित करके संविधान के भाग 4 में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों एवं मूल कर्त्तव्यों में सम्मिलित किया गया है इसके अंतर्गत कहा गया है-

- राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के अनुच्छेद 48 में कहा गया कि राज्य पर्यावरण सुधार एवं संरक्षण की व्यवस्था करेगा तथा वन्य जीवन के सुरक्षा प्रदान करेगा।[6]
- संविधान के भाग 4क के अनु. 51 में मूल कर्त्तव्यों में प्राकृतिक पर्यावरण की जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी, अन्य जीव भी हैं इनकी रक्षा करे और उनका संवर्धन करें तथा प्राणि मात्र के प्रति दया भाव रखे।[7]
- भारतीय संविधान के अनुच्छेद-21 में कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को उन गतिविधियों से बचाया जाना चाहिए, जो उसके जीवन स्वास्थ्य और शरीर को हानि पहुंचाता हो।
- भारतीय संविधान के अनुच्छेदों 252 व 253 को काफी महत्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि ये पर्यावरण को ध्यान में रखकर कानून बनाने के लिए अधिकृत करते हैं।

भारतीय संविधान में प्रदूषण मुक्त पर्यावरण हेतु अनेक प्रावधान व्यापक रूप से विद्यमान है। किसी भी कानून की वैधता के लिए यह अति आवश्यक हो जाता है कि केवल अधिनियम द्वारा संरक्षण न प्राप्त हो बल्कि संविधान द्वारा प्रदान किए गए अधिकारों के

अधीन बनाया गया हो।[8] भारतीय संविधान में न सिर्फ पर्यावरण को बचाने की अवधारणा निहित है, बल्कि पर्यावरण असंतुलन से होने वाले दुष्प्रभावों से भी रक्षा की तरफ ध्यान दिया है।

पर्यावरण संरक्षणः सरकारी प्रयास

संसद द्वारा भी पर्यावरण संरक्षण के लिए अनेक अधिनियम पारित किए गए हैं यथा-

- वन्य जीव संरक्षण अधिनियम (1972),
- जल प्रदूषण नियंत्रण अधिनियम (1974),
- वायु प्रदूषण नियंत्रण अधिनियम (1981),
- पर्यावरण संरक्षण अधिनियम (1986),
- खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन एवं निष्पादन अधिनियम (1989),
- ध्वनि प्रदूषण नियमन एवं नियंत्रण अधिनियम (2000),
- भारतीय दंड संहिता (1860),
- इकोमार्क स्कीम

संसद ने पर्यावरण संरक्षण अधिनियम पारित करके सराहनीय प्रयत्न किए हैं। पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने भी पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण अतुलनीय योगदान दिया है। वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के इन ध्येयों में वनस्पतियों, वन रोपड़, जीव जंतुओं और वन्य जीवों का संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण एवं निवारण, पर्यावरण की सुरक्षा सुनिश्चित करना शामिल है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सरकारी प्रयास किए जा गए हैं।

- केंद्र सरकार द्वारा गोविंदवल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्था की स्थापना 1988 ई. में की गई।
- भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय बंजर भूमि विकास बोर्ड की स्थापना 1985 में की गई।
- केंद्र ने 1988 ई. में राष्ट्रीय वन तथा वन्य जीव संबंधी नीति का निर्माण किया गया।
- केंद्र सरकार ने कुछ वन क्षेत्रों को संरक्षित कर दिया है।
- केंद्र सरकार द्वारा 1985 ई. में गंगा को स्वच्छ रखने के उद्देश्य से गंगा सत्ता की स्थापना की गई।
- पर्यावरण संरक्षण अधिनियम (1986) के अंतर्गत केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण एवं निवारण बोर्ड की स्थापना की गई।
- केंद्र सरकार द्वारा राष्ट्रीय पर्यावरण फेलोशिप की स्थापना 1995 ई. में गई।

इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय पर्यावरण नीति (2006) विकसित की गई इसके साथ-साथ जन जागरण, सचल पर्यावरणीय प्रयोगशाला, पर्यावरण संबंधी आंदोलन, जिसमें चिपको आंदोलन 1970 के दशक में चलाया गया जिसका उद्देश्य हिमालय क्षेत्र के वन एवं जैव विविधता को बनाया था। शांत घाटी आंदोलन तथा नर्मदा बचाओ आंदोलन इन सभी का उद्देश्य पर्यावरण की रक्षा करना था।

संसद के साथ-साथ न्यायपालिका ने संवैधानिक प्रावधान का पर्यावरणीय संदर्भ में निर्वाचन करके पर्यावरण संरक्षण एवं सुधार करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। न्यायालय ने अनुच्छेद 14 और 21 के निर्वाचन द्वारा मानव स्तर और इस पर पड़ने वाले पर्यावरणीय प्रभावों को नए आयाम दिए हैं।

पर्यावरण संरक्षण एवं न्यायपालिका

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पर्यावरण मामले में जो दूसरा दृष्टिकोण अपनाया गया वह जनहित याचिका पर आधारित है। पिछले दो दशकों में भारत की न्यायपालिका ने अपने अनुदारवादी दृष्टिकोण को परिवर्तित करके प्रगतिशील तथा उदारवादी न्यायपालिका का रूप धारण किया है। प्रदूषण से बचाव से संबंधित अनेक मामले जनहित वादों के माध्यम से सर्वोच्च न्यायलय के सामने लाए गए। इनमें वन नाशन, नदियों में प्रदूषण, पर्यावरण संतुलन का विनाश से संबंधित बहुत से महत्वपूर्ण मामले उठाए गए। न्यायपालिका ने पर्यावरण तक जनहित वादों का क्षेत्राधिकार विस्तृत करने में मूल अधिकारों (अनुच्छेद 21, 22) तथा नीति-निदेशक सिद्धांतों को आधार बनाया। इसने प्रदूषणों को रोकने के लिए जन-हित याचिकाओं के माध्यम से कई ऐतिहासिक फैसले दिए हैं।

पर्यावरण संरक्षणः न्यायपालिका के कुछ महत्वपूर्ण फैसले

पर्यावरण संबंधी मामलों की सुनवाई के लिए समाचार माध्यमों ने जजों के विशेष बेंच को हरित बेंच की उपमा तथा माननीय न्यायधीश कुलदीप सिंह को पर्यावरण संबंधी मामलों में अपने प्रसिद्ध फैसले के कारण हरित जज की संज्ञा दी है। समय-समय पर उच्चतम न्यायालय ने पर्यावरण संबंधी जागरूकता बढ़ाने के उद्देश्य से महत्वपूर्ण निर्देश जारी किए।

- सभी सिनेमाहॉल, चल सिनेमा तथा विडियो पार्लर अनिवार्य रूप से कम से कम दो पर्यावरण संबंधी फिल्म या संदेश अनिवार्य रूप से प्रत्येक शो में निःशुल्क दिखाएंगे। यह उनके लिए लाइसेंस जारी करते समय पूर्व शर्त होगी।
- सिनेमा हालों द्वारा लघु अवधि की पर्यावरण तथा प्रदूषण संबंधी सूचनाप्रद फिल्म दिखाना।
- पर्यावरण तथा प्रदूषण संबंधी रुचिकर कार्यक्रम का प्रसारण प्रतिदिन 5 से 7 मिनट अवधि के लिए तथा सप्ताह में एक बार लंबी अवधि के लिए दूरदर्शन तथा रेडियो द्वारा प्रसारित किया जाए।
- छात्रों में सामान्य जागृति लाने के लिए पर्यावरण को विद्यालयों, कॉलेजों तथा विश्वविद्यालयों में एक अनिवार्य विषय बनाया जाना चाहिए।
- सन् 1996 में उच्चतम न्यायालय ने संघीय सरकार तथा स्थानीय प्राधिकरणों को दिल्ली के ऐतिहासिक नगर को प्रतिदिन साफ करने, सघन वानिकी अभियान को चलाने तथा आरक्षित वन कानून लागू करने के आदेश दिए।
- उच्चतम न्यायालय ने जन समस्या तथा आगरा-ताजमहल की विश्व धरोहर को बचाने के लिए 292 कोयला आधरित उद्योगों को बंद करने या अन्यत्र ले जाने या गैस ईंधन आधारित बनाने के उद्देश्य से आदेश पारित किए। न्यायालय ने (1999 में) सचिव, पर्यावरण वन मंत्रालय तथा सचिव, पर्यटन मंत्रालय को निर्देश दिया कि पर्यटकों से एकत्र किया गया कोष (लगभग 20 करोड़) स्मारक के संरक्षण तथा नगर के सौंदर्यीकरण पर व्यय किया जाएगा।
- उच्चतम न्यायालय ने वाहनों से होने वाले प्रदूषण को रोकने के लिए विभिन्न निर्देश जारी किए हैं।
- सन् 2000 से चार महानगरों दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, चेन्नई में सीसा रहित पेट्रोल का प्रयोग किया जाए।
- दिल्ली में अप्रैल सन् 2001 से टैक्सियों, आटोरिक्शा तथा बसों में सीएनजी का प्रयोग हो।
- सभी सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान निषेध किया जाए।

(जारी ... पृष्ठ 71 पर)

हरित जीडीपी: संपोषणीय विकास का मार्ग

उमेश चतुर्वेदी

मानवता के लिए हरित विकास की बढ़ती मजबूरी और मानवता को बचाने की जद्दोजहद ही है कि इस साल पांच जून को मनाए गए विश्व पर्यावरण दिवस का विषय हरित अर्थव्यवस्था रखा गया था। हरित अर्थव्यवस्था वह है जिसमें पर्यावरण को होने वाले खतरों और पारिस्थितिकीय कमियों को दूर करते हुए आम लोगों की भलाई तो हो ही, सामाजिक समानता भी कायम हो सके

हरित अर्थव्यवस्था वह है जिसमें सार्वजनिक और निजी निवेश करते समय इस बात को ध्यान में रखा जाए कि कार्बन उत्सर्जन और प्रदूषण कम से कम हो, ऊर्जा और संसाधनों की प्रभावोत्पादकता बढ़े और जो जैव विविधता और पर्यावरण प्रणाली की सेवाओं के नुकसान कम करने में मदद करे।

हरित जीडीपी पारंपरिक सकल घरेलू उत्पाद की तरह नहीं है। हरित जीडीपी का यह भी मतलब नहीं है कि इसके जरिए दुनिया या देश के जंगलों-वनोपज या वन्यजीव की कीमत लगाई जाए। हरित जीडीपी का मतलब हरित निवेश से भी नहीं है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के मुताबिक हरित जीडीपी का मतलब जैविक विविधता की कमी और जलवायु परिवर्तन के कारणों को मापना है। हरित जीडीपी का मतलब पारंपरिक सकल घरेलू उत्पाद के उन आंकड़ों से है, जो आर्थिक गतिविधियों में पर्यावरणीय तरीकों को स्थापित करते हैं। किसी देश की हरित जीडीपी से मतलब है कि वह देश सतत विकास की दिशा में आगे बढ़ने के लिए किस हद तक तैयार है। इसका मतलब यह है कि हरित जीडीपी पारंपरिक जीडीपी का प्रति व्यक्ति कचरा और कार्बन के उत्सर्जन का पैमाना है। जो कितना घट या बढ़ रहा है। दुनिया में चीन पहला देश है. जिसने 2004 में पहली बार अपने सकल घरेलू उत्पाद में हरित जीडीपी का फॉर्मूला और पैमाना पेश किया था। आर्थिक विकास में पर्यावरण नुकसान की कीमत को लेकर पहली बार चीन ने ही 2006 में 2004 के आंकड़े जारी किए थे। हरित जीडीपी का आंकड़ा जारी करने की दिशा में भारत में सोच 2009 में बढ़ी, जब तत्कालीन पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश ने कहा था कि भारत के वैज्ञानिक भी हरित जीडीपी का अनुमान लगा सकते हैं। इसके बाद भारत में तब के सांख्यिकी प्रमुख प्रणब सेन की अध्यक्षता में जीडीपी में हरित जीडीपी के आंकड़ों पर अध्ययन शुरू हुआ और पहली बार इसकी सूची इस साल यानी 2015 में जारी की गई।

हरित जीडीपी को समझने के लिए दुनिया पर लगातार बढ़ रहे आर्थिक दबाव और उसके लिए लगातार पर्यावरण को हो रहे नुकसान को भी जानना-समझना होगा। लगातार बढ़ती आबादी, औद्योगिक क्रांति का बढ़ता दबाव और उससे बढ़ते प्रदूषण के चलते जिस तरह जलवायु परिवर्तन होता जा रहा है, उससे दुनिया पर सतत और हरित विकास की ओर आगे बढ़ने का दबाव बढ़ रहा है। यह बात और है कि ट्रिकल डाउन सिद्धांत के खोल में लगातार बढ़ते आर्थिक उदारीकरण की व्यवस्था में आगे बढ़ चुके और पीछे रह गए। दोनों तरह के देशों को कार्बन उत्सर्जन को रोकने और हरित व्यवस्था की तरफ आगे बढ़ने की फिक्र कम ही है। मौजूदा वैश्विक व्यवस्था में हर देश चाहता तो है कि आगामी पीढ़ियों के लिए स्वच्छ वातावरण और जलवायु देकर जाए लेकिन अपनी आर्थिक ताकत बढ़ाने के लिए वह मौजूदा खांचे की अर्थव्यवस्था में अपना औद्योगिक उत्पादन पर कटौती करने को तैयार नहीं है लेकिन लगातार बिगड़ती आबोहवा और बढ़ते प्रदूषण की वजह से किसी न किसी को आगे आना ही होगा और अब समय आ गया है कि दुनिया को हरित

लेखक टेलीविजन पत्रकार और स्तंभकार हैं। राजनीतिक, सामाजिक और विकास से जुड़े मुद्दों के अध्ययन और मनन में उनकी खास दिलचस्पी है। संप्रति 'लाइव इंडिया' समाचार चैनल से संबद्ध हैं। पूर्व में जी न्यूज, इंडिया न्यूज, सकाल टाईम्स, दैनिक भास्कर, अमर उजाला आदि संस्थानों में काम कर चुके हैं। 'बाजारवाद के दौर में मीडिया' नाम से पुस्तक प्रकाशित। ईमेल: uchaturvedi@gmail.com

अर्थव्यवस्था यानी ग्रीन इकॉनोमी में निवेश बढ़ाना ही होगा। यानी अपने औद्योगिक उत्पादन के लिए ऐसे ईंधन का इन्तजाम करना और उसका इस्तेमाल बढ़ाना होगा, जिससे पृथ्वी का प्राकृतिक मिजाज बना रहे और पारिस्थितिकीय संतुलन भी बना रहे है। हरित सकेलू घरेलू उत्पाद यानी ग्रीन जीडीपी की अवधारणा इसी विचार पर केंद्रित है।

2011 में कीनिया की राजधानी नैरोबी में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम यानी यूनाइटेड नेशन एनवायर्नमेंट प्रोग्राम यानी यूएनईपी की पहली बैठक में दुनिया को बचाने की दिशा में सोचने-विचारने वाले आर्थिक और वैज्ञानिक जानकारों ने हरित जीडीपी को कुछ इसी अंदाज में जाहिर किया था। नैरोबी में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की जो रिपोर्ट पेश की गई, उससे पता चलता है कि अगर पूरी दुनिया के सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी का सिर्फ दो फीसदी हिस्सा सिर्फ दस अहम

नैरोबी में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की जो रिपोर्ट पेश की गई, उससे पता चलता है कि अगर पूरी दुनिया के सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी का सिर्फ दो फीसदी हिस्सा सिर्फ दस अहम क्षेत्रों में खर्च किया जाए तो दुनिया ग्रीन इकॉनोमी के रास्ते पर आसानी से चल पड़ेगी।

क्षेत्रों में खर्च किया जाए तो दुनिया ग्रीन इकॉनोमी के रास्ते पर आसानी से चल पड़ेगी। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के आर्थिक और व्यापार विभाग के मुखिया स्टीव स्टोन का तब कहना था कि अगर तमाम देश ग्रीन इकॉनोमी यानी हरित अर्थव्यवस्था की तरफ बढ़ चलेंगे तो उन्हें अपने संसाधनों का इन्तजाम करने में आसानी होगी। स्टोन के मुताबिक हरित संसाधनों का ज्यादा से ज्यादा फायदा आम लोगों को मिल सकेगा। स्टीव स्टोन का कहना था कि हरित अर्थव्यवस्था की तरफ जाने का असल मंत्र यही है कि देश अपना आर्थिक संसाधन किस तरह खर्च कर रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के पर्यावरण कार्यक्रम का मानना था कि जीवाश्म ईंधन के इस्तेमाल को साथ ही खेती के साथ बागवानी और मत्स्य पालन जैसे क्षेत्रों पर हो रहे खर्च और उनमें इस्तेमाल किए जा रहे तरीकों पर हरित विकास काफी कुछ निर्भर करेगा। हैरत की बात यह है कि खेती में बढ़ते कीटनाशकों और रसायनिक खादों का इस्तेमाल, ऊर्जा के लिए कोयले और पेट्रोल-डीजल के बढ़ते इस्तेमाल ने औद्योगिक उत्पादन पर कहीं ज्यादा खराब असर डाला है। संयुक्त राष्ट्र संघ का मानना है कि अगर सिर्फ इन्हीं क्षेत्रों में तत्काल खर्च बढ़ाया जाए और जैविक संसाधनों का इस्तेमाल प्रोत्साहित किया जाए तो दुनिया को हरा-भरा बनाए रखने की दिशा में बड़ा योगदान दिया जा सकता है और निश्चित तौर पर इसका फायदा हरित अर्थव्यवस्था को बढ़ाने की दिशा में दिख सकता है। मौजूदा हरित विकास में बाधक एक और मुद्दा है। संयुक्त राष्ट्र संघ का पर्यावरण प्रोग्राम इस विषय में बार-बार दुनिया को चेता चुका है। पूरी दुनिया में वनों की अवैध कटाई, वनोपज का अवैध और अंधाधुंध व्यापार के साथ ही वन्य जीवों के गैरकानूनी कारोबार पर पूरी दुनिया का ध्यान तो गया है लेकिन इस पर काबू पाने के कारगर उपाय की तरफ दुनिया की कोशिशें वैसी नजर नहीं आ रही हैं, जितनी कि अपेक्षित हैं। दिलचस्प बात यह है कि इससे भी हरित अर्थव्यवस्था की राह में बाधा आ रही है। यूएनईपी का मानना है कि अगर वैश्विक अर्थव्यवस्था में 13 ट्रिलियन डॉलर की रकम हर साल लगाई जाए तो कॉर्बन उत्सर्जन हैरतअंगेज तरीके से कम किया जा सकेगा और प्रदूषण रहित ऊर्जा की मात्रा और इस्तेमाल बढ़ाए जा सकेंगे। पर्यावरण कार्यक्रम के मुताबिक इसी से हरित विकास की जो राह खुलेगी, वह पृथ्वी और दुनिया को रहने और जीवन योग्य बनाने की दिशा में बेहद कारगर होगी।

वैसे भी दुनिया की जैव विविधता का काफी सारा हिस्सा पहले ही या तो नष्ट हो चुका है या फिर बर्बाद कर दिया गया है। लगातार बढ़ती खाद्य वस्तुओं की कीमतों की एक बड़ी वजह जैवविविधता का हुआ नुकसान भी है। हालांकि इसकी तरफ कम ही ध्यान दिया जा रहा है। जबकि पर्यावरणविद् इसका जल्द से जल्द निदान करने पर जोर दे रहे हैं। वैसे भी भारतीय दर्शन प्राणी मात्र से प्यार करने और उन्हें बचाने पर जोर देता है। भारतीय दर्शन में हर जीव को अपने ही तरह माना गया है। भारतीय सामाजिक-राजनीतिक चिंतक पंडित दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद में भी इसी दर्शन का विस्तार है। इसी वजह से ये सारे विचार और दर्शन मानते हैं कि प्रजातियों को नुकसान और पर्यावरण की दुर्दशा का सीधा संबंध मानवता की भलाई से है। दिलचस्प यह है कि इस तथ्य को अब मौजूदा अर्थव्यवस्था के जानकार और पर्यावरणविद् भी मानने लगे हैं। हालांकि जिस आर्थिक व्यवस्था को हमने स्वीकार किया है, उसमें अभी मौजूदा तौर-तरीके से ना सिर्फ वृद्धि जारी रहेगी, बल्कि प्राकृतिक पारिस्थितिकीय तंत्र का कृषि उत्पादन में रूपांतरण भी होता रहेगा। एक दम से पारंपरिकता की ओर लौटने का कम से कम अगले पचास साल तक लौटने का सवाल ही नहीं है। ऐसे में यह सुनिश्चित करना जरूरी है कि इस तरह का विकास प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र के असल मूल्य को ध्यान में रखकर ही किया जाए। अगर हरित अर्थव्यवस्था सामाजिक समानता और सभी को मिलाकर बनती है तो तकनीकी तौर पर हर मनुष्य इसमें शामिल है। इसलिए एक

यूएनईपी का मानना है कि अगर वैश्विक अर्थव्यवस्था में 13 ट्रिलियन डॉलर की रकम हर साल लगाई जाए तो कॉर्बन उत्सर्जन हैरतअंगेज तरीके से कम किया जा सकेगा और प्रदूषण रहित ऊर्जा की मात्रा और इस्तेमाल बढ़ाए जा सकेंगे। पर्यावरण कार्यक्रम के मुताबिक इसी से हरित विकास की जो राह खुलेगी, वह पृथ्वी और दुनिया को रहने और जीवन योग्य बनाने की दिशा में बेहद कारगर होगी।

ऐसी आर्थिक प्रणाली बनाने पर विचार किया जाना चाहिए, जिसमें सुनिश्चित हो सके कि सभी लोगों को एक संतोषजनक जीवन स्तर तो मिले ही, उन्हें व्यक्तिगत तथा सामाजिक विकास का भी अवसर मिले।

इस सिलसिले में द इकोनॉमिक्स ऑफ इकोसिस्टम एंड बायोडॉयवर्सिटी (टीईईबी) की रिपोर्ट में व्यापक तौर पर चर्चा की गई थी। करीब दो दशक पहले आई इस रिपोर्ट के नतीजे बेहद चौंकाऊ थे। इस रिपोर्ट के मुताबिक कृषि के लिए रूपांतरण, बुनियादी ढांचे के विस्तार और जलवायु परिवर्तन के नतीजतन 2000 में बचे हुए प्राकृतिक क्षेत्र का 11 प्रतिशत तक खत्म हो सकता है। यहां यह बता देना जरूरी है कि मौजूदा हालात में पृथ्वी पर खेती योग्य जमीन का सिर्फ करीब 40 प्रतिशत ही कृषि के कम प्रभाव वाले

स्वरूप में है लेकिन जिस तरह से जनसंख्या का लगातार विस्तार हो रहा है और कृषि योग्य भूमि पर दबाव बढ़ता जा रहा है। उसी वजह से इस चालीस प्रतिशत जमीन से गहन खेती की जाने लगेगी और निश्चित तौर पर इसका नुकसान जैव विविधता में कमी के तौर पर भी नजर आ सकता है। जैव विविधता का नुकसान कुछ क्षेत्रों में तेजी से हो रहे शहरों के विकास से भी हो रहा है। जबकि कई इलाकों में ग्रामीण इलाके शहरों का रूप ले रहे हैं। शहरों के भीतर प्राकृतिक वृद्धि और नौकरियों तथा अवसरों की तलाश में बड़ी संख्या में गांवों से शहरों की और पलायन भी बढ़ा है और इसमें तेजी सबसे ज्यादा विकासशील देशों में देखने को मिल रही है। इस वजह से भी जलवायु पर असर पड़ रहा है।

हरित जीडीपी के मापन की एक वजह शहर भी बन रहे हैं। धनी देशों में शहरी इलाके धन-दौलत और संसाधनों के उपभोग और कार्बन डाई आक्साइड के उत्सर्जन पर केंद्रित हो रहे हैं। हैरत की बात यह है कि दुनिया की करीब 50 प्रतिशत आबादी पृथ्वी के 2 प्रतिशत से भी कम भाग पर रह रही है, जबकि बाकी पचास फीसद आबादी दुनिया के 98 फीसद हिस्से पर रह रही है।

हरित जीडीपी के मापन की एक वजह शहर भी बन रहे हैं। धनी देशों में शहरी इलाके धन-दौलत और संसाधनों के उपभोग और कार्बन डाई आक्साइड के उत्सर्जन पर केंद्रित हो रहे हैं। हैरत की बात यह है कि दुनिया की करीब 50 प्रतिशत आबादी पृथ्वी के 2 प्रतिशत से भी कम भाग पर रह रही है, जबकि बाकी पचास फीसद आबादी दुनिया के 98 फीसद हिस्से पर रह रही है। जाहिर है कि इसका भी पर्यावरण पर उल्टा असर पड़ रहा है। सबसे बड़ी बात यह है कि दुनिया में ऊर्जा का 60 से 80 प्रतिशत का इस्तेमाल शहरी इलाके कर रहे हैं जबकि बदले में दुनिया का 75 प्रतिशत कार्बनडाइक्साइड उत्सर्जन वे ही कर रहे हैं। इसकी तुलना में ग्रामीण क्षेत्र महज बीस से चालीस प्रतिशत ऊर्जा संसाधन की खपत कर रहे हैं और सिर्फ 25 फीसद ही कार्बन उत्सर्जन कर रहे हैं। एक बात और, शहरों के विकास ने स्थानीय पर्यावरण पर असर डाला है, साफ पानी और स्वच्छता के अभाव के कारण गरीब ज्यादा प्रभावित हुए हैं। नतीजतन बीमारियां बढ़ी हैं और आजीविका पर असर पड़ा है।

मुंबई में 2005 में आई बाढ़ का कारण शहर की मीठी नदी का पर्यावरण संरक्षण नहीं करना माना जा रहा था। बाढ़ में 1000 से ज्यादा लोग मारे गए थे और शहर का जनजीवन अस्त-व्यस्त हो गया था। गांवों से शहरी इलाकों की तरफ पानी भेजने के दौरान पानी की लीकेज गंभीर चिंता का विषय है। शहरी इलाकों की इमारतें, परिवहन और उद्योग की वैश्विक ऊर्जा से संबंधित जीएचजी उत्सर्जनों में हिस्सेदारी क्रमशः 25, 22 और 22 प्रतिशत की है। हरित जीडीपी से ही यह तथ्य सामने आया है कि कम घने शहरों में प्रति व्यक्ति उत्सर्जन कम है और ये मौजूदा आर्थिक व्यवस्था के खांचे में भी आर्थिक विकास में मददगार हैं।

दुनिया की सबसे महत्वपूर्ण महानगरीय अर्थव्यवस्थाओं का दुनिया की महज 12 प्रतिशत आबादी के साथ वैश्विक जीडीपी में 45 प्रतिशत की हिस्सेदारी है। वैसे हरित जीडीपी से ही सामने आया है कि तेज और गहन पूंजी निवेश बुनियादी सुविधाओं, सड़कों, रेलवे, पानी और सीवेज प्रणाली की संचालन लागत को कम करती है। इस लिहाज से देखें तो जलवायु की रक्षा ग्रामीण संस्कृति ही कर सकती है लेकिन दुनिया का ध्यान शहरीकरण बढ़ाने पर ज्यादा है। हरित जीडीपी में इस पर भी विचार किया जाता है।

बहरहाल हरित जीडीपी के मापन के बाद सौर ऊर्जा, जिसे अक्षय ऊर्जा के इस्तेमाल पर भी जोर बढ़ रहा है। इसके साथ ही अब जैविक खेती की तरफ भी दुनिया आगे बढ़ रही है। यूरोप में तो पेट्रोल की खपत कम करने के लिए साइकिलिंग के आंदोलन को बढ़ावा दिया जा रहा है। नीदरलैंड तो अब साइकिलों के देश के तौर पर ही विख्यात हो गया है। इसी तरह पर अपने यहां शहरी कृषि में नगर निगम के बेकार पानी और अपशिष्ट का दोबारा इस्तेमाल करके पानी को बचाया जा सकता है। इस तरह शहरों में परिवहन लागत को भी कम किया जा सकता है, जैव विविधता और गीली भूमि को संरक्षित किया जा सकता है। इससे हरित पट्टी का बेहतर इस्तेमाल किया जा सकता है। पाइपों के उन्नयन और उन्हें बदल देने से अनेक औद्योगिक शहरों में 20 प्रतिशत पीने का पानी बचाया जा सकता है। दिल्ली में पानी की जबरदस्त किल्लत से निपटने के लिए नगर निगम ने उन इमारतों में बारिश का पानी जमा करना अनिवार्य बना दिया है, जिनकी छत का क्षेत्रफल 100 वर्ग मीटर से ज्यादा है। अनुमान है कि इस तरह अकेले दिल्ली से ही हर साल 76,500 मिलियन लीटर पानी जमीन में भेजा जा सकेगा। चेन्नई में शहरी जमीन में पानी के रिचार्ज से 1988 से 2002 के बीच भूजल स्तर चार मीटर तक बढ़ा दिया। जाहिर है कि दुनिया को बचाने की दिशा में पर्यावरण की सुरक्षा ही कारगर हो सकती है। हरित जीडीपी के मापन ने हमें इस तथ्य को और व्यापकता से समझाया है। ❑

हरित जीडीपी से ही सामने आया है कि तेज और गहन पूंजी निवेश बुनियादी सुविधाओं, सड़कों, रेलवे, पानी और सीवेज प्रणाली की संचालन लागत को कम करती है। इस लिहाज से देखें तो जलवायु की रक्षा ग्रामीण संस्कृति ही कर सकती है लेकिन दुनिया का ध्यान शहरीकरण बढ़ाने पर ज्यादा है।

निवेदन

योजना हमेशा द्विपक्षीय संचार में विश्वास रखती है। पाठकों से निवेदन है कि वह अपने राय व विचारों से हमें अवगत कराते रहें। साथ ही, पत्रिका में प्रकाशनार्थ आलेख भी हमें भेजे जा सकते हैं। पाठक हमें डाक द्वारा पत्र भेज सकते हैं। साथ ही आप अपनी सामग्री yojanahindi@gmail.com पर ईमेल के द्वारा हमें प्रेषित कर सकते हैं। आप हमारे फेसबुक पेज **योजना हिंदी** पर भी हमसे जुड़ सकते हैं। आपकी राय, सुझाव व सहयोग का इंतजार रहेगा।

–संपादक

चुनौतियों के बीच भारत का मजबूत रुख

अजीत प्रताप सिंह

भारतीय संस्कृति के अनुरूप व पं. दीनदयाल उपाध्याय जी के शब्दों में कहे तो हमारी जीवन पद्धति युगानुकूल के साथ देशानुकूल होनी चाहिए। ग्लोबल वार्मिंग का एक मात्र कारण हम अपने प्राचीन मनीषा के विचारों के अनुरूप नहीं चले। हमने भी पाश्चात्य पूंजीवादी दृष्टिकोण को अपनाते हुए प्रकृति को निष्ठुर मानकर उसे नियंत्रित करने का प्रयास किया। जब हमारे प्राचीन विद्वानों ने अपने अनुभवगम्य अध्ययन के आधार पर विश्व में अपने को विश्वगुरु का स्थान दिया था आज संपूर्ण विश्व को उस ज्ञान की आवश्यकता है

भारत को जलवायु परिवर्तन नियंत्रण के क्षेत्र में चीन का साथ छोड़कर अपने हितों पर ध्यान केंद्रित कर व्यक्तिगत स्तर पर लक्ष्य बनाना होगा क्योंकि ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव भारत पर चीन के विकास से ज्यादा भारी पड़ रहे हैं। मानसून की अनियमितता, उसके कारण फसल बरबादी जिससे किसान आत्महत्या व्यापक पैमाने पर हो रही है। अभी हाल ही में दाल समस्या और डेंगू के कहर का कारण यही हैं।

भारत में पिछले कुछ वर्षों की समस्या को गौर से देखें तो जलवायु परिवर्तन का प्रभाव प्रत्यक्ष दिखाई देने लगा है। जैसे अगस्त 2010 को लेह शहर बादल फटने के कारण तबाह हो गया था। इस कहर में 200 लोग मरे थे, एक घंटे के अंदर 250 मिलीमीटर की बारिश हुई थी, जून 2013 में उत्तराखंड में बारिश से महात्रासदी, सितंबर 2014 में जम्मू-कश्मीर ने 60 वर्षों की सबसे भयानक बाढ़ के अभिशाप को झेला जिसमें छः लाख लोग प्रभावित हुए और लगभग 200 से ज्यादा लोग मरे।

भारत एक कृषि प्रधान देश है यह कोई रहस्य की बात नहीं है। देश की दो तिहाई आबादी कृषि पर निर्भर है और खाद्यान्न उपलब्ध कराने के कारण इस पर नकारात्मक प्रभाव समूची मानव जाति को प्रभावित करेगा ऐसा तय है। भारत की अधिकांश कृषि मानसून पर निर्भर है जिसके कारण मानसून देश का असली वित्त मंत्री है। मानसून का प्रभाव देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ना तय है। तापमान वृद्धि के कारण मानसून बेहद अस्थिर, मनमौजी और प्राकृतिक रूप से संचालित हो रहा है जिसका आकलन करना और स्पष्ट व्याख्या करना मुश्किल है। अप्रत्याशित मौसम के अनेक समाचार देश के विभिन्न भागों से मिल रहे हैं। रबी की कटाई के समय बेमौसम बारिश और आंधी तूफान से तैयार फसल की क्षति हुई। फसल की बर्बादी से त्रस्त हो लगभग हजारों किसानों ने आत्महत्या कर ली। इससे पहले देश के कई भागों में ओलावृष्टि से बहुत नुकसान हुआ था।

देश में वर्तमान दलहन की फसल पूरी तरह से मानसूनी बारिश पर निर्भर है, सूखे के कारण दलहन के उत्पादन में कमी आई जिसके चलते दाल का दाम 200 रुपये से अधिक हो गया था। दाल भारत की व्यापक आबादी की पौष्टिकता का आधार है अतः जलवायु परिवर्तन के कारण देश में कुपोषण की संभावना भी है। फरवरी और मार्च में हुई बेमौसम बारिश ने वातावरण मच्छरों के प्रजनन के लिए और अधिक अनुकूल कर दिया जिससे डेंगू मच्छर का प्रकोप इस वर्ष ज्यादा दिनों तक रहा।

दुनिया के तमाम देशों द्वारा स्थापित *जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल* ने अनुमान लगाया है कि बाढ़, चक्रवात तथा सूखे की घटनाओं में भारी वृद्धि होगी। विश्व बैंक के एक अध्ययन के अनुसार जो भीषण बाढ़ अब तक 100 वर्षों में एक बार आती थी वैसी बाढ़ हर दस वर्षों में आने की संभावना है। पूरे वर्ष में होने वाली वर्षा लगभग पूर्ववत् रहेगी। परंतु इसका वितरण बढ़ता जाएगा। वर्षा के बाद लंबा सूखा पड़ सकता है।

उत्तर भारत में गेहूं उपजने वाले इलाके में किए गए स्टेनफोर्ड युनिवर्सिटी के प्रो. डेविड

लेखक अरूंधति वशिष्ठ अनुसंधान पीठ (इलाहाबाद) से जुड़े हैं। काशी हिंदू विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग से शोध भी कर रहे हैं। तमाम पत्र पत्रिकाओं में पर्यावरण और अर्थिक मुद्दों पर लगातार लिखते रहे हैं। ईमेलः ajeetpsc@gmail.com

बी लोबेल एवं एडम सिब्ली व अंतर्राष्ट्रीय मक्का व गेहूं उन्नयन केंद्र के जे. इवान ओर्टिज मोनेसटेरियो के अध्ययन के मुताबिक, तापमान में एक डिग्री की बढ़ोत्तरी गेहूं की फसल को दस फीसदी तक प्रभावित करेगी। वहीं विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार जलवायु परिवर्तन का न केवल हमारे स्वास्थ्य पर असर पड़ेगा, बल्कि गरीब क्षेत्रों के प्रमुख खाद्यान्नों के उत्पादन में भी कमी आएगी और कुपोषण बढ़ेगा। साल 2050 तक भारत में सूखे के कारण गेहूं के उत्पादन में 50 प्रतिशत तक की कमी आने की आशंका जताई जा रही है।

सूर्य से आने वाली किरणों का लगभग 40 प्रतिशत भाग पृथ्वी तक पहुंचने से पहले ही आकाश में वापस लौट जाता हैं। 15 प्रतिशत वातावरण में अवशोषित हो जाता है। पृथ्वी तक लगभग 45 प्रतिशत ही पहुंचता है। यह किरणें गर्मी के रूप में पृथ्वी से परिवर्तित होती है। वायुमंडल में पाई जाने वाली कुछ गैसें लघु तरंगी सौर विकिरणों को पृथ्वी के धरातल तक आने देती है, परंतु पृथ्वी से निकलने वाली दीर्घ विकिरणों को अवशोषित कर लेती है, जिसके कारण वायुमंडल में पृथ्वी का औसत तापमान 35 डिग्री सेल्सियस के इर्द-गिर्द बना रहता है। इस संपूर्ण प्रक्रिया के द्वारा गैसें ऊपर वायुमंडल में एक ऐसी परत बना लेती हैं, जिसका असर वातावरण में सर्दी व गर्मी से बचाने के लिए बनाई ग्रीन हाउस की परत के समान ही होता है। इस संपूर्ण प्रक्रिया को ही हरित गृह प्रभाव कहा जाता है। हरित गृह प्रभाव के लिए कार्बन डाई ऑक्साइड, सल्फर डाई ऑक्साइड, जल वाष्प, क्लोरो-फ्लोरो कार्बन, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड व ओजोन गैसें उत्तरदायी है। इनमें कार्बन डाई ऑक्साइड प्रमुख गैस है। कार्बन चक्र के माध्यम से इसे नियंत्रित किया जा सकता है, परंतु कुछ वर्षों से इसकी मात्रा में निरंतर वृद्धि हो रही है, साथ ही वायुमंडल में मिथेन, क्लोरो-फ्लोरो कार्बन की भी निरंतर वृद्धि हो रही है। ग्रीन हाउस गैसों की वृद्धि से वायुमंडल में विकिरणों के अवशोषण करने की क्षमता में लगातार वृद्धि हो रही है। वायुमंडल मे ग्रीन हाउस गैसों की लगातार इसी प्रकार वृद्धि होती रही तो पृथ्वी का तापमान बढ़ जाएगा। तापमान में वृद्धि को ही ग्लोबल वार्मिंग कहा जाता है।

गौरतलब है कि ऐतिहासिक तौर पर अमरीका दुनिया में ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के लिए सर्वाधिक जिम्मेदार है और सालाना उर्त्सजन में प्रथम स्थान पर चीन दूसरे स्थान पर अमेरिका है। इन दोनों देशों की स्थिति को देख कर यही लगता है कि यह देश ग्लोबल वार्मिंग के लिए गंभीर नहीं है। जैसे चीन ने संकेत दिए है कि वह उर्त्सजन में बढ़ोत्तरी करता रहेगा लेकिन उत्पादन सन 2030 तक अधिकतम स्तर तक ले जाएगा। सेंटर फॉर सांइस ऐंड एनवॉयरन्मेंट की महानिदेशक सुनीता नारायण के अनुसार अमेरिका में सिर्फ एयरकंडीशन पर जितनी बिजली खर्च होती है, उससे पूरे अफ्रीका की बिजली जरूरतों का समाधान हो सकता है। 18 डिग्री सेल्सियस पर भी अमेरिका में एसी का इस्तेमाल होता है। अमेरिका ने कार्बन उत्सर्जन घटाने की नीति नहीं बनाई है। भारत 2030 तक

चीन और अमेरिका के गैर जिम्मेदाराना रवैयों के बीच इस दिशा में भारत का प्रयास सराहनीय है। भारत का इनटेंडेड नेशनली डिटरमिंड कांट्रिब्यूशन (आईएनडीसी) महत्वाकांक्षी और संतुलित है। इसमें जहां एक और 33 से 35 प्रतिशत तक कार्बन उर्त्सजन घटाने का संकल्प जताया गया, वहीं नवीकरणीय ऊर्जा को 40 प्रतिशत तक बढ़ाने की दृढ़ इच्छा भी जाहिर की गई है। वनीकरण को बढ़ाना और नवीकरणीय ऊर्जा को महत्व देना हमारी प्रतिबद्धता को जताता है।

35 प्रतिशत तक कार्बन उर्त्सजन घटाने की नीति पर बढ़ चला है, जबकि अमेरिका में 2030 तक ऊर्जा खपत 20 प्रतिशत तक और बढ़ेगी। जहां भारत नवीकरणीय ऊर्जा को 40 प्रतिशत तक बढ़ाने की दृढ़ इच्छा जाहिर की वहीं अमेरिका ने 2030 तक सिर्फ 30 प्रतिशत नवीकरणीय ऊर्जा का लक्ष्य तय किया है।

गत वर्ष पेरू की राजधानी लीमा में 12 दिनों के इस शिखर सम्मेलन में जब 190 देशों के प्रतिनिधि जमा हुए थे इसका उद्देश्य नई संधि के लिए मसौदा तैयार करना था, ताकि पेरिस में होने वाली वार्ता में सभी देश हस्ताक्षर कर सके लेकिन यह रस्म अदायगी बन कर रह गया, जबकि डेलीमेल रिपोर्ट के अनुसार इस दौरान लीमा में 50000 टन कार्बन डाई आक्साइड का उर्त्सजन हुआ।

ग्लोबल वार्मिंग की समस्या व उसका प्रभाव भविष्य में और भी व्यापक हो जाने की संभावना है और भारत जैसे देश में इसके नुकसान का सबसे बड़ा खामियाजा गरीब उठाते है। 1992 में रियो डि जेनेरियो अर्थ समिट यानी पृथ्वी सम्मेलन से लेकर लीमा तक के शिखर सम्मेलन के लक्ष्य अभी भी अधूरे है। पेरिस शिखर सम्मेलन से कुछ आशा संपूर्ण मानव सभ्यता को है।

चीन और अमेरिका के गैर जिम्मेदाराना रवैयों के बीच इस दिशा में भारत का प्रयास सराहनीय है। भारत का इनटेंडेड नेशनली डिटरमिंड कांट्रिब्यूशन (आईएनडीसी) महत्वाकांक्षी और संतुलित है। इसमें जहां एक और 33 से 35 प्रतिशत तक कार्बन उर्त्सजन घटाने का संकल्प जताया गया, वहीं नवीकरणीय ऊर्जा को 40 प्रतिशत तक बढ़ाने की दृढ़ इच्छा भी जाहिर की गई है। वनीकरण को बढ़ाना और नवीकरणीय ऊर्जा को महत्व देना हमारी प्रतिबद्धता को जताता है। योजना आयोग के पूर्व उपाध्यक्ष मोंटेक सिंह अहलूवालिया के अनुसार भारत 33 से 35 प्रतिशत तक कार्बन उर्त्सजन घटाने के लक्ष्य में दो तिहाई उर्त्सजन में कटौती ऊर्जा के किफायती उपयोग से कर सकता है और बाकी ऊर्जा नवीकरणीय से प्राप्त कर लेगा।

ग्लोबल वार्मिंग शिखर सम्मेलनों में बेसिक देश भारत, ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका और चीन विकासशील देशों का पक्ष रखते नजर आते हैं और यहां पर एक विवाद सामने आता है कि विकसित देशों का मानना है कि देश वर्तमान उर्त्सजन के आधार पर कटौती करें जबकि बेसिक देशों का मानना है कि ग्लोबल वार्मिंग को इस स्थिति में लाने में जिसका जितना योगदान है उतना उर्त्सजन में कटौती करे।

यहां पर एक प्रश्न उठता है कि क्या भारत को चीन के साथ चलना चाहिए। यह ध्यान देने योग्य बात है कि चीन अपनी वर्तमान विकास दर पर ही विकास करता रहा तो वह 2030 में जहां पर होगा वहां पर यदि भारत अपनी वर्तमान विकास दर से विकास करता है तो भी पहुचने में 2040 लग जाएंगे। जबकि बाढ़, सूखा, असमय बारिश के कारण फसल बरबादी और तापमान में वृद्धि के कारण विभिन्न प्रकार की बीमारी और इन सबके कारण आत्महत्या, प्राकृतिक आपदा आदि का दृश्य लगता है कि भारत की नियत बन गई है। लगातार

कम उपज की पैदावार, कुछ माह पूर्व डेंगू का प्रकोप व दाल समस्या का कारण यही था। इसलिए भारत को अपनी नीति तो बनानी होगी क्योंकि हमारी और चीन की स्थिति में अंतर है और भारत के पास प्राचीन जीवन पद्धति और प्रकृति के प्रति अपने नजरिए को विश्व पटल पर एक मार्गदर्शक की भूमिका के रूप में रखना होगा। हम पर्यावरण को पहुंच रहे भारी नुकसान की चिंता किए बिना एक तरफा ढ़ंग से होने वाले अर्थिक विकास पर जोर नहीं दे सकते।

भूमंडलीकरण के प्रभाव से प्रत्येक व्यक्ति, परिवार, समाज, ग्राम, जिला, प्रदेश, देश की अपनी जीवन पद्धति व संस्कृति का लगातार क्षरण हो रहा है संपूर्ण विश्व की सांस्कृतिक विविधता आज प्रदर्शन प्रभाव के आधीन हो गई है। जिसका प्रभाव दिखना शुरू हो गया है। उदाहरण के लिए एक गांव की भोजन संस्कृति में दाल शामिल है इसका कारण यह है कि इस क्षेत्र की जलवायु, भौगोलिक संरचना दलहन के अनुकूल होगी। दूसरी बात लगातार दलहन की खेती के कारण इनकी कृषि तकनीक भी दलहन की अन्य फसलों की अपेक्षा अच्छी होगी। तीसरी बात इस गांव के मानव की शारीरिक क्षमता में दलहन का बहुत बड़ा योगदान होगा। चौथी बात यहां का बायोमास भी दलहन के अनुकूल होगा। अब अगर दुनिया के अन्य देशों की तरह यह गांव भी दलहन खाना छोड़ दे तो इसका असर पहले तो अन्य फसल या व्यवसाय की लागत को बढ़ा देगा, दूसरी तरफ मानव की शारीरिक क्षमता में कमी, तीसरी बात भोजन पर निर्भरता बढ़ी, चौथी बात ग्लोबल वार्मिंग। प्रख्यात गांधीवादी अर्थशात्री जे.सी. कुमारप्पा के अनुसार ''अगर हम सीमित इलाके के भीतर हर वो चीज पैदा करें, जो हमें चाहिए तो हम इस स्थिति में होंगे कि उत्पादन की पद्धति का प्रबंधन कर सकते हैं। अगर हम अपनी जरूरतें धरती के दूसरे छोर से पूरी करते हैं तो ऐसी जगहों पर उत्पादन की स्थितियों की गारंटी करना हमारे लिए नामुमकिन हो जाएगा।''

ग्लोबल वार्मिंग का मुख्य कारण उत्पादन प्रणाली का देशज संस्कृति के अनुकूल न होना व देशज आवश्यकता के कई गुना अधिक उत्पादन करना है। प्रकृति का प्राकृतिक गुण है कि वह अपने अवशेषों का अवशोषित कर लेती है, परंतु इसकी भी अपनी एक सामर्थ्य सीमा है। अगर हमारी उत्पादन प्रणाली इस बात पर केंद्रित होगी तो हम कभी भी देशज आवश्यकता से अधिक उत्पादन नहीं करेंगे और प्रकृति भी उस उत्पादन प्रणाली का सहयोग करती जाएगी। यानी सतत विकास होता रहेगा।

परंतु आज के बाजारीकरण में यह संभव नहीं है। जब कोई व्यक्ति उद्योग लगाता है तो यही सोच कर लगाता है कि उसका बाज़ार यहां पर पर्याप्त है और कच्चा माल भी यहां पर उपलब्ध है, तब वह स्वत: निवेश करता है। परंतु उद्योग का उद्देश्य तो लाभ कमाना है अत: लाभ की हर अगली किस्त प्रेरित निवेश का कार्य करती है और व्यवसायी प्रतिदिन बाज़ार की तलाश में रहता है। यह तलाश क्षेत्र की सीमा पर करते हुए राष्ट्र की सीमा के बाहर फैल शेष विश्व तक विज्ञापन के माध्यम से पहुंच गई है। यह जहां गई है वहां की संस्कृति को नष्ट किया है। और कई क्षेत्रों कि विकास की संभावना को ही नष्ट कर दिया है। शायद विकल्प केवल विकेंद्रीयकरण है।

शायद इसी का ध्यान करके भारतीय मनीषा में विकेंद्रीयकरण, स्वदेशी, अर्थायाम व एकात्ममानवाद जैसे विचार सामने आए। हमारे यहां समग्र दृष्टि के कारण प्रकृति को मानव के अस्तित्व से जोड़कर देखा गया। मनुष्य को प्रकृति का सहचर माना गया है और इसे मानव जीवन के अंग के रूप में देखा जाता है। इसलिए कभी भी प्रकृति का अध्ययन अलग से नहीं किया गया। प्रकृति का जीवन पद्धति से जुड़ाव के कारण इसकी छाप हमारे जीवन मूल्यों में दिखाई देती है।

शायद इसी का ध्यान करके भारतीय मनीषा में विकेंद्रीयकरण, स्वदेशी, अर्थायाम व एकात्ममानवाद जैसे विचार सामने आए। हमारे यहां समग्र दृष्टि के कारण प्रकृति को मानव के अस्तित्व से जोड़कर देखा गया। मनुष्य को प्रकृति का सहचर माना गया है और इसे मानव जीवन के अंग के रूप में देखा जाता है। इसलिए कभी भी प्रकृति का अध्ययन अलग से नहीं किया गया। प्रकृति के जीवन पद्धति से जुड़ाव के कारण इसकी छाप हमारे जीवन मूल्यों में दिखाई देती है।

आज के बहुराष्ट्रीय कंपनियों के स्वामियों और देश में बढ़ती दरिद्रता को चिंताजनक बताते हुए बद्रीसाह टुलधरिया ने 1920 में लिखी अपनी पुस्तक ''दैशिक-शास्त्र'' में व्यक्ति के जीवन को अर्थायामी होने की बात कही तथा कहा कि अर्थ का अभाव जिस प्रकार व्यक्ति की मौलिक आवश्यकता की पूर्ति न होने के कारण चोरी व अन्य अपराध के लिए प्रेरित करता है उसी प्रकार अर्थ का प्रभाव भी व्यक्ति को चारित्रिक विलासी बनाता है। अत: अर्थ का प्रभाव व अभाव दोनों व्यक्ति को अधर्मी बनाता है।

अर्थायाम, प्रकृति सहचरता और विकेंद्रीकरण की छाप गांधी जी के स्वदेशी मॉडल में दिखाई देती है। महात्मा गांधी ने 14 फरवरी 1916 को मद्रास में एक सम्मेलन में अपने भाषण में स्वदेशी की परिभाषा दी थी ''स्वदेशी वह भावना है, जिससे कि हम आसपास के परिवेश से ही अपनी अधिकतम आवश्यकताएं पूरी करते हैं और उनसे ही अधिकाधिक व्यवहार संबंध रखते हैं तथा स्वयं को उनका सहज अभिन्न अंग समझते हैं, न कि दूरस्थ लोगों और वस्तुओं से स्वयं को जोड़ने लगते हैं। आर्थिक क्षेत्र में हम आस-पास के लोगों तथा स्वदेशी परंपरा और कौशल द्वारा उत्पादित वस्तुओं का ही उपयोग करेंगे और उन्हें ही सक्षम तथा श्रेष्ठ बनाएंगे।''

भारतीय संस्कृति के अनुरूप व पं. दीनदयाल उपाध्याय जी के शब्दों में कहे तो हमारी जीवन पद्धति युगानुकूल के साथ देशानुकूल होना चाहिए। ग्लोबल वार्मिंग का एक मात्र कारण हम अपनी प्राचीन मनीषा के विचारों के अनुरूप नहीं चले। हमने भी पाश्चात्य पूंजीवादी दृष्टिकोण को अपनाते हुए प्रकृति को निठुर मानकर उसे नियत्रिंत करने का प्रयास किया। जब हमारे प्राचीन विद्वानों ने अपने अनुभवगम्य अध्ययन के आधार पर विश्व में अपने को विश्वगुरु का स्थान दिया था, आज संपूर्ण विश्व को उस ज्ञान की अवश्यकता है।

दिसंबर में पेरिस में आयोजित ग्लोबल वार्मिंग पर सम्मेलन से सारी दुनिया ने उम्मीदें लगा रखी हैं। जो भी धरती पर विविधता भरे जीवन की रक्षा के प्रति संवेदनशील है। वह यही चाहेगा कि यह उम्मीदें पूरी हों और इस सम्मेलन को अपने उद्देश्य में सफलता मिले। परंतु विभिन्न देशों के विरोधाभासी हित इस सम्मेलन के किसी समझौते पर पहुंचने में बाधक है। ❑

जलवायु परिवर्तन के कुप्रभावों में कमी: तकनीक की भूमिका

शशांक द्विवेदी

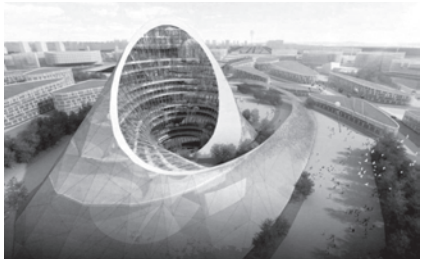

तकनीक के अंधाधुंध प्रयोग से अगर समस्याएं पैदा हुईं तो समाधान भी तकनीक के ही पास मौजूद है। आज पर्यावरण अनुकूल रंगों के इस्तेमाल, हरित भवनों का निर्माण, वायु प्रदूषण संशोधक, कृत्रिम वृक्ष, पर्यावरण अनुकूल और बेहतर उत्पादकता वाले ऊर्जा उपकरणों का प्रयोग आदि ऐसी तमाम तकनीकी रीतियां हैं जो जलवायु परिवर्तन के खतरों को कम कर सकती है। नैनो तकनीक का प्रयोग इस दिशा में और भी क्रांतिकारी युग का सूत्रपात कर सकता है। हालांकि इनमें से कई उपाय फिलहाल प्रायोगिक चरण में ही है लेकिन इससे बेहतर भविष्य की उम्मीद तो जगी ही है

पिछले दिनों प्रधानमंत्री ने जलवायु परिवर्तन को दुनिया के लिए सबसे बड़ी चुनौती मानते हुए साफ-सुथरी ऊर्जा के इस्तेमाल के लिए आक्रामक रूख दिखाया। जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर शुरू से भारत का स्पष्ट रुख रहा है कि कार्बन उत्सर्जन के मामले में विकसित देश अपनी जिम्मेदारी ठीक से निभाएं और सभी देश विकास को नुकसान पहुंचाए बिना जलवायु परिवर्तन के खिलाफ पक्के इरादे के साथ काम करें। इसी क्रम में जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर भारत ने कार्बन उत्सर्जन में 33 से 35 फीसदी तक कटौती का स्पष्ट ऐलान कर दिया जो कि एक बड़ा कदम है। यह कटौती वर्ष 2005 को आधार मान कर की जाएगी। सरकार ने यह भी फैसला किया है कि 2030 तक होने वाले कुल बिजली उत्पादन में 40 फीसदी हिस्सा कार्बनरहित ईंधन से होगा। यानी, भारत साफ सुथरी ऊर्जा के लिए बड़ा कदम उठाने जा रहा है। भारत पहले ही कह चुका है कि वह 2022 तक 1 लाख 75 हजार मेगावाट बिजली सौर और पवन ऊर्जा से बनाएगा। वातावरण में फैले ढाई से तीन खरब टन कार्बन को सोखने के लिए अतिरिक्त जंगल लगाए जाएंगे। अमेरिका, चीन, यूरोपियन यूनियन जैसे देशों ने पहले ही अपने रोडमैप की घोषणा कर दी है लेकिन भारत का रोडमैप इन देशों के मुकाबले ज्यादा प्रभावी दिखता है।

कुप्रभाव रोकथाम में तकनीक की भूमिका

भारत आज सकल रूप से अमेरिका और चीन के बाद कार्बन का तीसरा सबसे बड़ा उत्सर्जक देश है। भारत द्वारा कार्बन उत्सर्जन में 33 से 35 फीसदी तक कटौती करने के लिए हमें विभिन्न तकनीक का सहारा लेना होगा। तकनीक का सहारा लिए बिना यह लक्ष्य हासिल करना मुश्किल होगा। इन तकनीकों का सहारा लेकर कार्बन उत्सर्जन को काफी कम किया जा सकता है। ऐसे प्रमुख तकनीकी उपायों पर इस आलेख में चर्चा की जा रही है।

सफेद छतों का इस्तेमाल

यदि हम घर की छतों पर सफेद पेंट कर दें और सड़कों और पगडंडियों पर हल्के रंग वाले पदार्थो का प्रयोग करें तो हमारे शहर गर्मियों में तापमान में गिरावट महसूस करेंगे। एक रिपोर्ट के अनुसार ग्लोबल वार्मिंग से निपटने के लिए शहरी पर्यावरण में फेरबदल करने का सबसे आसान तरीका यह है कि हम शहर की परावर्तकता (रिलेटिविटी) को बढ़ा दें ताकि सूरज की रोशनी को वापस अंतरिक्ष की तरफ मोड़ा जा सके। हल्के रंगों की सतह वाली शहरी इमारतें गर्मी के मौसम में पारंपरिक इमारतों की तुलना में ठंडी होंगी क्योंकि वे इंफ्रारेड रेडिएशन को परावर्तित कर देंगी। इससे एयर कंडीशनिंग पर खर्च होने वाली ऊर्जा की भी बचत होगी। लगातार

लेखक मेवाड़ यूनिवर्सिटी, चित्तौडगढ़, राजस्थान में उपनिदेशक (शोध) तथा विज्ञान विषयों पर केंद्रित वेबसाइट www.vigyanpedia.com के संपादक है। हिंदी में विज्ञान-प्रौद्योगिकी विषयों पर देश के प्रमुख अखबारों और पत्र-पत्रिकाओं में नियमित लिखते रहते है। विज्ञान लेखन के लिए टीवी चैनल एबीपी न्यूज द्वारा सर्वश्रेष्ठ ब्लॉगर के पुरस्कार से सम्मानित ईमेल: dwivedi.shashank15@gmail.com

पर्यावरण संरक्षण में क्रांति ला सकती है नैनो तकनीक

नैनो तकनीक के क्षेत्र में अधिकतर चीजें फिलहाल प्रायोगिक चरण में हैं लेकिन इनके व्यावहारिक होते ही पर्यावरण संरक्षण की दिशा में क्रांतिकारी सफलता हासिल की जा सकती है। ग्रीनहाऊस गैसों के उत्सर्जन में कमी से लेकर जल प्रवाह तंत्र के उपचार तक कई ऐसे क्षेत्र हैं जहां यह तकनीक अहम भूमिका निभाने वाली है। प्रमुख क्षेत्रों का विवरण निम्नलिखित है:

ग्रीनहाऊस गैसों के उत्सर्जन में कमी

नैनो सोलर सेल व ईंधन सेल जैसे प्रयोग हानिकारक गैसों का उत्सर्जन न्यूनतम करने के साथ ही अधिक प्रभावोत्पादक ऊर्जा उपकरण उपलब्ध करा सकते हैं।

नैनो सोलर सेल: नैनो सोलर सेल सिलिकॉन के स्थान पर ग्रेफीन पर आधारित होगा जो साधारण दृश्य प्रकाश और अवरक्त किरणों, दोनों को विद्युत ऊर्जा में बदल सकता है। इसमें ग्रेफीन की पतली परतों का प्रयोग होगा जिससे इसका लागत मूल्य कम होगा। साथ ही, यह रख-रखाव में आसान होगा, इसे चादर की तरह बिछाया जा सकता है या पेंट की तरह प्रयोग किया जा सकता है। चालकता के गुण अधिक होने के कारण प्रतिरोध का मान होगा जिससे विद्युत ऊर्जा का क्षय कम होगा।

ईंधन सेल/गैस सेल: ईंधन सेल प्रौद्योगिकी जल का अपघटन कर प्राप्त हाइड्रोजन और ऑक्सीजन को संग्रहित कर लेता है। इस प्रक्रिया में ऊर्जा की मांग कम करने के लिए प्लैटिनम नैनो कण का प्रयोग उत्प्रेरक के रूप में किया जाता है जिससे यह पूरी प्रणाली ऊर्जा दक्ष हो जाती है। ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन में कमी के लिए सोलर सेल व ईंधन सेल संयोजन का प्रयोग किया जाएगा जिससे ऊर्जा की प्राप्ति दिन रात सतत रूप से की जाएगी। साथ ही इससे किसी भी हानिकारक गैस का उत्सर्जन होगा।

नैनो जियोलाईट: जियोलाईट प्राकृतिक तौर पर पाया जाने वाला अकार्बनिक छिद्रयुक्त पदार्थ है जो कच्चे तेल को तोड़कर शुद्ध व अधिक मात्रा में पेट्रोल प्राप्त कर सकता है लेकिन प्राकृतिक जियोलाईट की मात्रा अत्यधिक सीमित है। फलत: फिलहाल इसका औद्योगिक उपयोग संभव नहीं दिखता है। तथापि, वैज्ञानिकों ने नैनो तकनीक के द्वारा नैनो जियोलाईट का निर्माण किया है जो प्रति बैरल सर्वाधिक शुद्ध और अधिकतम पेट्रोल दे सकता है। इससे पेट्रोल के कम भंडार से भी अधिक उत्पादकता संभव हो सकेगी। इस तरह यह ऊर्जा संकट से तात्कालिक निवारण के साथ-साथ पर्यावरण के हित में भी है।

पर्यावरण स्वच्छता

नैनो तकनीक पर आधारित रासायनिक संवेदकों के द्वारा पर्यावरण में मौजूद खतरनाक रसायनों को पहचानकर अलग किया जा सकता है। फ्लोरिडा विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं ने ऐसे रासायनिक संवेदक का विकास किया है जो वातावरण से पारे (Hg) के वाष्प को पहचानकर अलग कर सकता है तथा पुनरुपयोग के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

प्रदूषित जल प्रबंधन

हैदराबाद स्थित धात्विकी एवं नवीन तत्व आधुनिक शोध केंद्र के वैज्ञानिकों के जल के शुद्धिकरण के लिए कैंडल फिल्टर का विकास किया है जिसमें चांदी के नैनो कण तथा नैनो चुंबकीय पदार्थ का प्रयोग किया गया है जो क्रमश: जैविक अशुद्धि और भारी तत्वों को छानकर जल को पीने योग्य बना देते हैं। इस तरह के प्रयोग जल संदूषण और जल में अवांछित तत्वों के अपमिश्रण के कुप्रभावों को बहुत हद तक कम कर सकते हैं। वहीं बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने नैनो ट्यूब पर आधारित फिल्टर का विकास किया है जो जल से सूक्ष्मतम स्तर के प्रदूषकों को अलग कर देता है।

इस क्षेत्र में एक और बेहद प्रभावकारी प्रयोग के तहत बंगलुरु स्थित इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस के वैज्ञानिकों ने सेरियम ऑक्साइड और सिल्वर से बने नैनो कण का विकास किया है जो नदियों में जीवाणुओं की संख्या और हानिकारक रंग व रसायन खत्म कर सकते हैं। इसका प्रयोग नदियों की सफाई के लिए किया जा सकता है। इस कार्य के लिए ऊर्जा की प्राप्ति प्रकाश से होती है।

बढ़ रहे कॉर्बन उत्सर्जन के कारण शहर और नगर गर्मी के टापू बनते जा रहे हैं। सूरज की रोशनी सोखने वाली गहरे रंगों वाली इमारतों और पक्की सड़कों की वजह से गर्मी के मौसम में शहरों में तापमान असहनीय हो जाता है।

कुछ समय पहले अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा के ग्लोबल वार्मिंग संबंधी शीर्षस्थ सलाहकार और ऊर्जा मंत्री स्टेवन चु ने लंदन में रॉयल सोसाइटी को बताया था कि बढ़ते हुए तापमान से निपटने के लिए जलवायु में फेरबदल या जियोइंजीनियरिंग का सबसे असरदार तरीका यह है कि हम अपनी छतों को सफेद कर दें। कनाडा में कंकोर्डिया यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर हाशिम अकबरी के नेतृत्व में वैज्ञानिकों की टीम ने प्रो स्टेवन चु के सुझाव का विस्तार से अध्ययन करने के बाद पाया है कि यह तकनीक सचमुच बहुत असरदार है। उन्होंने अनुमान लगाया है कि किसी शहर या नगर में छतों और सड़कों पर हल्के रंग वाले पदार्थों का प्रयोग करने से उनकी परावर्तकता में करीब 10 प्रतिशत की वृद्धि हो जाती है। विशेषज्ञों के अनुसार यदि दुनिया के सारे शहरी क्षेत्रों में छतों को सफेद कर दिया जाए और सड़कें हल्के रंगों वाले सामान से निर्मित की जाएं तो पृथ्वी के तापमान में 0.13 डिग्री फारेनहाइट की कमी की जा सकती है। इससे 130 अरब टन से 150 अरब टन तक कार्बन डाक्साइड उत्सर्जन की बचत होगी।

अकबरी का कहना है कि छतों को सफेद पोतने में कोई अनोखी बात नहीं है। यह टेक्नोलॉजी सैकड़ों वर्ष पुरानी है। इस संबंध में पश्चिमी एशिया का उदाहरण दिया जा सकता है, जहां पारंपरिक रूप से इमारतों में सफेद रंग का इस्तेमाल होता है। ग्रीस में भी सदियों से छतों का रंग सफेद रखा जाता है। इन वैज्ञानिकों ने एन्वायरमेंटल रिसर्च लेटर्स में प्रकाशित अपनी अध्ययन रिपोर्ट में कहा है कि अधिक सौर परावर्तकता से वायुमंडलीय तापमान में गिरावट आएगी और ग्लोबल वार्मिंग के कारण होने वाली तापमान वृद्धि के प्रभाव कम हो

जाएंगे। विशेषज्ञों के अनुसार सड़कों और छतों की सामान्य मरम्मत के दौरान वहां परावर्तक पदार्थ लगा कर शहरों की सौर परावर्तकता बहुत कम खर्च पर बढ़ाई जा सकती है। सौर परावर्तकता को एल्बेडो भी कहा जाता है। इसे शून्य से एक के पैमाने पर नापा जाता है। 1.0 का मतलब पूरी तरह से सफेद यानी पूरी तरह से परावर्तक होता है, जबकि शून्य का मतलब होता है पूरी तरह काला होना। काली सतह सूरज की सारी रोशनी को जज्ब कर लेती है। अकबरी की रिसर्च टीम का कहना है कि सफेद छतों से गर्मियों में इमारतों के एयर कंडिशनिंग बिल में 10-15 प्रतिशत की कमी की जा सकती है क्योंकि इमारत कम मात्रा में गर्मी जज्ब करती है और छतों का ठंडापन अधिक देर तक रहता है। अमेरिका के कई शहरों में लागू बिल्डिंग कोड में छतों को सफेद रखने को कहा जा रहा है। न्यूयॉर्क में 25 लाख वर्ग फुट छतों को सफेद कर दिया गया है। ग्लोबल वार्मिंग के खिलाफ जंग में छतों को सफेद रंग पोतने का सुझाव सचमुच एक नायाब विचार है, जिस पर हमारे नगर योजनाकारों, वास्तुशिल्पियों, सिविल इंजीनियरों और आम जनता को भी गौर करना चाहिए।

बीते पांच वर्षों के रिकार्ड गवाह हैं कि वायुमंडल में कार्बन कणों का निरंतर इजाफा हो रहा है। इसके चलते मौसम चक्र तो बदल ही रहा है, आसमान का रंग भी बदल रहा है। वायुमंडल में लगभग 78 फीसद नाइट्रोजन व शेष मुख्यतया ऑक्सीजन है। नाइट्रोजन सूर्य की किरणों को समाहित करके परावर्तित करती है जिससे नीली चमक पैदा होती है।

इकोफ्रेंडली इमारतें

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूएनईपी) की एक रिपोर्ट के अनुसार इमारतों को पर्यावरण अनुकूल बनाकर, इनसे होने वाले ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को 30 प्रतिशत तक, बिना किसी लागत के कम किया जा सकता है।

कार्बन डाइऑक्साइड स्क्रेपर

ग्लोबल वार्मिंग को रोकने के लिए कार्बन डाइऑक्साइड स्क्रेपर उस तकनीक का नाम है जो खतरनाक प्रदूषकों को सोखने के साथ-साथ वातावरण के तापमान में भी कमी लाने का प्रयास करेगी। इस तकनीक के अंतर्गत बड़े-बड़े शहरों में बहुमंजिला इमारतों में कंक्रीट के बने कार्बन डाइऑक्साइड स्क्रेपर में, बड़े आकार के पेड़ लगाकर इन्हें कार्बन डाइऑक्साइड के शोषक के रूप में स्थापित किया जाएगा।

मरीन क्लाउड

ब्रिटिश वैज्ञानिकों ने ग्लोबल वार्मिंग को घटाने के लिए एक नई तकनीक विकसित की है। ब्रिटिश वैज्ञानिकों ने एक ऐसा जहाज तैयार किया है जो समुद्र के पानी का हवा में छिड़काव कर बादल तैयार करता है। इस तकनीक को 'मरीन क्लाउड' नाम दिया गया है। इसे वर्तमान में प्रशांत महासागर में चलाया जा रहा है। हवा से चलने वाले दो हजार जहाजों का यह संयुक्त बेड़ा समुद्र में इधर-उधर घूमता रहता है। इस तकनीक के द्वारा एक प्रशीतक प्रभाव तैयार किया जाता है जो धरती पर पड़ने वाली सूर्य की रोशनी को अंतरिक्ष में भेजने का कार्य करता है।

कृत्रिम वृक्षों की परिकल्पना

1975 में पहली बार ग्लोबल वार्मिंग शब्द का प्रयोग करने वाले ब्रिटिश वैज्ञानिक वालेस ब्रूकर ने वैश्विक तपन से निपटने के लिए कृत्रिम वृक्षों की अवधारणा पर काम करना प्रारंभ किया है। वालेस ब्रूकर के अनुसार स्टील के बने ये वृक्ष 50 फुट लंबे व 8 फुट चौड़े होंगे तथा वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड गैस को अवशोषित करने के लिए इन वृक्षों में विशेष प्रकार की प्लास्टिक की जालियां लगी होंगी। यह अवशोषित गैस बाद में तरल रूप में जमीन के अंदर पंप कर दी जाएगी।

वायुमंडल प्रदूषक कणों की जानकारी

आईआईटी कानपुर के सेंटर फॉर इनवायरमेंटल साइंस में लगी देश की सर्वाधिक अत्याधुनिक मशीनें (हाइ रिजुलेशन टाइम अप्लाइड एरोसॉल मॉस स्पेक्ट्रोमीटर व सिंगल पार्टिकलसोर स्पैक्ट्रोमीटर) हर क्षण पर्यावरण की निगरानी करते हुए वायुमंडल को गंदा करने वाले कणों की जानकारी दे रही हैं। बीते पांच वर्षों के रिकार्ड गवाह हैं कि वायुमंडल में कार्बन कणों का निरंतर इजाफा हो रहा है। इसके चलते मौसम चक्र तो बदल ही रहा है, आसमान का रंग भी बदल रहा है। वायुमंडल में लगभग 78 फीसद नाइट्रोजन व शेष मुख्यतया ऑक्सीजन है। नाइट्रोजन सूर्य की किरणों को समाहित करके परावर्तित करती है जिससे नीली चमक पैदा होती है। वायुमंडल में जम रही कार्बन की परत से नाइट्रोजन काफी ऊपर है। जिसके चलते नीली चमक कमजोर पड़ रही है।

ग्रीनहाउस गैस पर निगरानी के लिए उपग्रह रूगोसैट इबुकी

जापान के एयरोस्पेस एक्सप्लीरेशन एजेंसी ने 23 जनवरी, 2009 को विश्व का पहला ग्रीनहाउस गैस पर्यवेक्षण उपग्रह यानी गोसैट को एच2ए राकेट से प्रक्षेपित किया, जिसे एजेंसी के द्वारा 'इबुकी' नाम दिया गया। जलवायु परिवर्तन की निगरानी के लिए समर्पित विश्व का यह पहला उपग्रह है। ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन इस उपग्रह ने नजर रखते हुए वायुमंडल में उत्सर्जित एवं वितरित ग्रीनहाउस गैसों का मानचित्र तैयार करते हुए यह भी पता लगाया कि इनका संकेंद्रण कहां-कहां है।

फोटोवोल्टेइक सेल प्रणाली

सूरज से ऊर्जा प्राप्त करने के लिए फोटोवोल्टेइक सेल प्रणाली का प्रयोग किया जाता है। फोटोवोल्टेइक सेल सूरज से प्राप्त होने वाली किरणों को ऊर्जा में तब्दील कर देता है। भारत में सौर ऊर्जा की काफी संभावनाएं हैं क्योंकि देश के अधिकतर हिस्सों में वर्ष में 250-300 दिन सूरज अपनी किरणें बिखेरता है। फोटोवोल्टेइक सेल के जरिए सूरज की किरणों से ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। भारत में पिछले 25-30 वर्षों से सौर ऊर्जा पर काम हो रहा है लेकिन पिछले तीन वर्षों के दौरान इसमें गति आई है। सरकार ने वर्ष 2009 में सौर ऊर्जा को बढ़ावा देने के लिए जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय सौर मिशन का अनुमोदन किया

भारत में सौर ऊर्जा की काफी संभावनाएं हैं क्योंकि देश के अधिकतर हिस्सों में वर्ष में 250-300 दिन सूरज अपनी किरणें बिखेरता है। फोटोवोल्टेइक सेल के जरिए सूरज की किरणों से ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। भारत में पिछले 25-30 वर्षों से सौर ऊर्जा पर काम हो रहा है लेकिन पिछले तीन वर्षों के दौरान इसमें गति आई है।

जिसका उद्देश्य वर्ष 2022 तक ग्रिड विद्युत शुल्क दरों के साथ समानता लाने के लिए देश में सौर ऊर्जा प्रौद्योगिकियों का विकास और संस्थापन करना है। सरकार की इस भागीदारी से लोग सौर ऊर्जा को समझने लगे हैं। सौर ऊर्जा में प्रतिवर्ष लगभग 5 हजार खरब यूनिट बिजली बनाने की संभावना मौजूद है जिसके लिए इस दिशा में तीव्र गति से कार्य किए जाने की आवश्यकता है।

देश की ऊर्जा आवश्कताओं की सतत पूर्ति के लिए वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का सहारा लेकर गुजरात ने अनेक विकास कार्यों के साथ सौर ऊर्जा के क्षेत्र में भी मिसाल कायम की है। गुजरात में 600 मेगावाट के सौर ऊर्जा संयंत्र की स्थापना भारत ही नहीं पूरे एशिया के लिए एक उदाहरण है। गुजरात ने नहर के ऊपर सौर ऊर्जा संयंत्र लगा कर अनूठी मिसाल कायम की है।

देश के टेलीकॉम टॉवर प्रतिवर्ष लगभग 5 हजार करोड़ का तेल जला रहे हैं। यदि वह अपनी आवश्यकता सौर ऊर्जा से प्राप्त करते हैं तो बड़ी मात्रा में डीजल बचाया जा सकता है। सौर ऊर्जा को बढ़ावा देने के लिए लोगों को इसकी ओर आकर्षित करना जरूरी है। सौर ऊर्जा को विकसित करने में जर्मनी ने सराहनीय कार्य किया है। जर्मनी पहले अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आयात पर निर्भर था। उसने अपनी अर्थव्यवस्था सुदृढ़ करने और ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सौर ऊर्जा को विकसित किया। लगभग 10 लाख घरों में छत पर फोटोवोल्विक सेल लगाए गए जो सफल हुए। आज जर्मनी के लाखों लोगों का रोजगार अक्षय ऊर्जा से जुड़ा हुआ है।

नहर के ऊपर सौर ऊर्जा संयंत्र

देश की ऊर्जा आवश्कताओं की सतत पूर्ति के लिए वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का सहारा लेकर गुजरात ने अनेक विकास कार्यों के साथ सौर ऊर्जा के क्षेत्र में भी मिसाल कायम की है। गुजरात में 600 मेगावाट के सौर ऊर्जा संयंत्र की स्थापना भारत ही नहीं पूरे एशिया के लिए एक उदाहरण है। गुजरात ने नहर के ऊपर सौर ऊर्जा संयंत्र लगा कर अनूठी मिसाल कायम की है। इससे बिजली तो बनेगी ही, पानी का वाष्पीकरण भी रुकेगा। नहर पर छत की तरह तना यह संयंत्र दुनिया में पहला ऐसा प्रयोग है। गुजरात के मेहसाणा जिले में स्थापित यह संयंत्र 16 लाख यूनिट बिजली का हर वर्ष उत्पादन करेगा। साथ ही वाष्पीकरण रोककर 90 लाख लीटर पानी भी बचाएगा। यह संयंत्र आम के आम और गुठलियों के दाम की तरह है। चंद्रासन गांव की नहर पर 750 मीटर की लंबाई में यह सौर संयंत्र बनाया गया है। इस संयंत्र की लागत 12 करोड़ रुपए के आसपास हैं। चंद्रासन संयंत्र पहला पायलट प्रोजेक्ट होने की वजह से इसकी लागत कुछ अधिक आई है।

गुजरात में नर्मदा सागर बांध की नहरों की कुल लंबाई 19 हजार किलोमीटर है और अगर इसका दस प्रतिशत भी इस्तेमाल होता है तो 2400 मेगावाट स्वच्छ ऊर्जा का उत्पादन किया जा सकता है। नहरों पर संयंत्र स्थापित करने से 11 हजार एकड भूमि अधिग्रहण से बच जाएगी और 2 अरब लीटर पानी की सालाना बचत होगी सो अलग। यह प्रयोग अन्य राज्यों में भी अपनाया जाना चाहिए।

पूरी पृथ्वी को कार्बन उत्सर्जन से खतरा

पिछले दिनों संयुक्त राष्ट्र समर्थित इंटरगवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज (आईपीसीसी) ने चेतावनी देते हुए कहा कि कार्बन उत्सर्जन न रुका तो नहीं बचेगी दुनिया। क्लाइमेट चेंज 2014 इंपेक्ट, अडाप्टेशन और वलनरेबिलिटी शीर्षक से जारी ढाई हजार पृष्ठीय इस रिपोर्ट को दुनिया भर के 309 लेखकों, 70 देशों के पर्यावरण विशेषज्ञों और 1729 जलवायु विशेषज्ञों व मौसम विज्ञानियों ने गंभीर और व्यापक क्षेत्र में अध्ययन के बाद तैयार किया है। रिपोर्ट के सह प्रमुख क्रिस फील्ड ने कहा है, 'जलवायु परिवर्तन व्यापक रूप ले चुका है। अब यह भविष्य का संकट नहीं रह गया है, बल्कि इसके दुष्परिणाम सामने आने लगे हैं।'

पिछले 20 वर्ष से दुनिया भर में पर्यावरण संरक्षण को लेकर काफी बातें, सम्मेलन, सेमिनार आदि हुए और लगातार हो भी रहें हैं लेकिन जमीनी स्तर पर हालत नहीं बदले या ये कहें की हालात बहुत खराब हो गए है। कार्बन उत्सर्जन कम होने के बजाय बढ़ा है इसके साथ ही दुनिया भर में कई तरह का प्रदूषण भी बढ़ा है। भयंकर वायु प्रदूषण के कारण हालात तो यहां तक हो गए हैं कि दुनिया भर के कई शहर रहने लायक ही नहीं बचे हैं। अधिकांश नदियां, तालाब, पेड़-पौधों, पशु, पक्षियों की प्रजातियां विलुप्त हो चुकी है। कथित विकास पर्यावरण को हर दिन, हर समय, हर जगह लील रहा है। प्रकृति को नुकसान पहुंचाने के परिणाम भी अब दिखने लगे हैं जब पिछले दिनों नेपाल में आए विनाशकारी भूकंप में 8000 से अधिक लोगों को अपनी जान गंवानी पडी और इसके साथ ही भारी जान-माल का नुकसान भी हुआ। दिल्ली एनसीआर सहित पूरे उत्तर भारत में भी भूकंप के तगड़े झटके महसूस किए गए। पर सौभाग्य से ये बड़ा खतरा टल गया लेकिन पूरी दुनिया के सामने सबसे बड़ा सवाल यह है कि इस तरह के बड़े खतरे मसलन भूकंप, बाढ़, बर्फबारी, सुनामी कब तक टलते रहेंगे। क्योकि दुनिया भर में मौसम बदल रहा है। जबरदस्त ठंड और जबरदस्त गर्मी के साथ ठंड के मौसम में बरसात, बरसात के मौसम में ठंड होने लगी है। ऋतु चक्र में बड़ा परिवर्तन दिखने लगा है कब कौन सा मौसम हो जाए अब उसका अनुमान लगाना भी कठिन होने लगा है। बेमौसम बरसात की वजह से ही पूरे देश में 100 लाख हेक्टेयर से ज्यादा की फसल बर्बाद हो गई। इसी वजह से देश एक बड़े कृषि संकट से गुजर रहा है। ये सब जलवायु परिवर्तन और प्रकृति से छेड़छाड़ करने की वजह से हो रहा है जिसके नतीजे आगे भी विनाशकारी ही होंगे। पूरी दुनिया जिस तरह कथित विकास की दौड़ में अंधी हो चुकी है उसे देखकर तो यही लगता है कि आज नहीं तो कल मानव सभ्यता का विनाश निश्चित है। प्राकृतिक आपदाओं का आना और उनका टलना हमें बार बार चेतावनी दे रहा है कि अभी भी समय है और हम अपनी बेहोशी से जाग जाएं, नहीं तो कल कुछ भी नहीं बचने वाला। ❑

नहरों पर संयंत्र स्थापित करने से 11 हजार एकड भूमि अधिग्रहण से बच जाएगी और 2 अरब लीटर पानी की सालाना बचत होगी सो अलग। यह प्रयोग अन्य राज्यों में भी अपनाया जाना चाहिए।

जलवायु परिवर्तन का मजबूत सामना

शरद गुप्ता

भारत ने 2030 तक नवीनीकरण ऊर्जा में अपनी हिस्सेदारी बढ़ाकर 40 फीसदी करने के लिए प्रतिबद्ध है। नवीनीकरण ऊर्जा में अभी भारत की हिस्सेदारी करीब 13 फीसदी को देखते हुए भारत का टारगेट काफी महत्वाकांक्षी है। भारत का कहना है कि इसके महत्वाकांक्षी गोल के साथ सौर और पवन ऊर्जा 2015 में क्रमशः 4060 मेगावॉट और 23.76 गीगावॉट को बढ़ाकर 2022 तक 100 गीगावॉट और 60 गीगावॉट हो जाएगी और इसके बाद भी इसे बढ़ाया जाएगा। इसमें उल्लिखित है कि बायोमास की क्षमता को मौजूदा 4.4 गीगावॉट से बढ़ाकर 2022 तक 10 गीगावॉट करने की योजना है

बार-बार सूखा पड़ने, अचानक झमाझम बारिश होने और बेमौसम बर्फ गिरने को सिर्फ मौसम की अनियमितता मानकर अनदेखी नहीं की जा सकती। हम जानते हैं कि ये सब जलवायु परिवर्तन का नतीजा है। आसान शब्दों में कहें तो जरूरत से ज्यादा औद्योगीकरण और गाड़ियों से उत्सर्जन के कारण वातावरण गरम होता जा रहा है। तापमान बढ़ने के कारण सालाना मानसूनी बारिश के स्तर और अवधि में करीब 10 प्रतिशत की कमी आई है। भारत में कृषि के लिहाज से मानसून की काफी अहमियत है। हिमालय की हिमनदों के तेजी से पिघलने से नदियों की पारिस्थितिकी तंत्र के लिए खतरा पैदा हो गया है, जबकि ये नदियां खेती के लिए जीवनरेखा का काम करती हैं। हिमनदों के पिघलने से समुद्र का जलस्तर बढ़ रहा है, जिससे मुंबई, कोलकाता और चेन्नई जैसे निचले इलाकों में बसे शहरों के लोगों के लिए जोखिम बढ़ गया है।

जलवायु परिवर्तन पर कोई रोक न होने और वैश्विक तापमान बढ़ने का असर मानसूनी बारिश पर पड़ेगा, जो भारत में खेती और पैदावार के लिए काफी अहम है। जलवायु परिवर्तन के कारण पिछले 150 वर्षों में कई बार मानसूनी बारिश कम हुई है। इससे बारिश में 40 से 70 फीसदी तक की कमी आ सकती है। इससे बेमौसम भारी बारिश भी हो सकती है, जिससे जन जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है, पैदावार खराब हो जाती है नतीजतन खाने-पीने की चीजों के दाम बढ़ जाते हैं। पॉट्सडैम इंस्टीटयूट फॉर क्लाइमेट इम्पैक्ट रिसर्च के जैकब स्कोयू और एंड्रस लीवरमैन का पूर्वानुमान है कि दुनियाभर की सरकारें अगर दृढ़ता से जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए कदम नहीं उठाती हैं तो 2150 से 2200 के बीच हर पांचवें वर्ष मानसून कमजोर रहेगा। भारत के पास कोयला और दूसरे जीवाश्म ईंधन का प्रचुर भंडार है लेकिन अभी तक हम इसकी पूरी क्षमता का इस्तेमाल नहीं कर पाए हैं, जो पर्यावरण के लिए वरदान है क्योंकि यह ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में योगदान करेगा। पहले ही उत्सर्जन के मामले में भारत का तीसरा नंबर है। 2012 में 2 गीगाटन के साथ कार्बन उत्सर्जन के मामले में भारत तीसरे नंबर पर है। 9.9 गीगाटन के साथ पहले नंबर पर चीन और 5.2 गीगाटन के साथ दूसरे नंबर पर अमेरिका है। प्रति व्यक्ति के लिहाज से देखें तो भारतीय चीनी नागरिकों के मुकाबले चार गुना और अमेरिकियों के मुकाबले 10 गुना कम उत्सर्जन करते हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि औद्योगिक विकास में भारत अभी भी पीछे चल रहा है।

ग्लोबल वार्मिंग के लिए कौन है सबसे ज्यादा जिम्मेदार

प्रति व्यक्ति औसत उत्सर्जन कम रहने के कारण पिछले दो दशक से वैश्विक जलवायु वार्ता में भारत का दबदबा कायम है। 1992 के रियो पृथ्वी सम्मेलन से ही भारत मजबूती के साथ *एक समान लेकिन अलग-अलग* जवाबदेही के लिए आवाज उठा रहा है। इसे 1997 के क्योटो प्रोटोकॉल में उत्सर्जन से जुड़ी बाध्यकारी शर्तों पर सभी देशों को हस्ताक्षर करना था लेकिन विकासशील देशों ने

लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं। विभिन्न राष्ट्रीय समाचारपत्रों में लगभग तीन दशक का अनुभव है। इनमें द टाइम्स ऑफ इंडिया, इंडियन एक्सप्रेस, हिंदुस्तान आदि प्रमुख हैं। संप्रति दैनिक भास्कर में राजनीतिक मामलों के संपादक हैं। ईमेलः shard.editor@gmail.com

तालिका 1: 2012 में देशों द्वारा उत्सर्जन

देश	CO_2 उत्सर्जन*	प्रतिशत हिस्सा#	प्रति व्यक्ति CO_2 उत्सर्जन**
दुनिया	34.5	100	4.9
चीन	9.86	28.6	7.1
अमेरिका	5.19	15.1	16.4
यूरोपीय संघ	3.74	10.9	7.4
भारत	1.97	5.7	1.6
रूस	1.77	5.1	12.4
जापान	1.32	3.8	10.4

*अरब टन #वैश्विक उत्सर्जन में हिस्सा **टन/व्यक्ति

तब तक उत्सर्जन से संबंधित बाध्यकारी शर्तें मानने से इनकार कर दिया जब तक पहले विकसित देश अपने उत्सर्जन में नाटकीय ढंग से कटौती नहीं करते। क्योटो के एक दशक बाद भी भारत बाध्यकारी शर्तों पर बात-चीत करने को तैयार नहीं है। भारतीय उसी सूरत में बाध्यकारी शर्तों पर बात-चीत करेंगे जब दूसरे देश अपने प्रति व्यक्ति उत्सर्जन को भारत के बराबर ले आए लेकिन फिलहाल इसकी कोई सूरत नजर नहीं आ रही है। यह 2030-2040 तक ही मुमकिन होगा।

विशेषज्ञों का सुझाव है कि कार्बन उत्सर्जन के मौजूदा स्तर के मुताबिक उत्सर्जन घटाने के सभी उपायों को लागू करने के बाद भी 2100 तक 4 डिग्री तापमान बढ़ने के आसार 40 फीसदी, 5 डिग्री तापमान बढ़ने के आसार 10 फीसदी रहेंगे। सबसे बेहतर हालात में तापमान 3.8 डिग्री बढ़ेगा। ये सभी विज्ञान द्वारा तय 2 फीसदी की स्वत: सीमा से ज्यादा है। इसे सभी देशों की सरकारों ने संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रायोजित जलवायु परिवर्तन बातचीत के तहत लक्ष्य के तौर पर स्वीकार किया है। इस मामले में भारत की दलील बिल्कुल साफ है। चीन और अमेरिका पहले ही विकास में काफी आगे निकल चुके हैं, जबकि भारत के कई इलाकों में विकास के लिए जरूरी मानी जाने वाली बिजली तक नहीं पहुंची है। ज्यादातर देशों ने 2039 तक उत्सर्जन में कमी लाने का अपना लक्ष्य तय किया है। संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएफसीसीसी) के लिए प्रस्तुत इस अंडरटेकिंग को राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान का इरादा आईएनडीसी कहा गया है। भारत पर्यावरण के नुकसान को नियंत्रित करने में बड़ी प्रगति कर रहा है। जलवायु परिवर्तन पर रोक के लिए भारत की प्रतिबद्धता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि प्रधानमंत्री पेरिस कन्वेंशन से पहले जलवायु परिवर्तन से संबंधित नारे पर फ्रांस के राष्ट्रपति फ्रांस्वा ओलांद के साथ एक किताब लॉन्च कर रहे हैं। भारत ने जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएफसीसीसी) -दलों के सम्मेलन (सीओपी21)- को अपना आईएनडीसी 1 अक्टूबर को आधी रात को सौंपा है। यह सम्मेलन इस वर्ष पेरिस में होने वाला है। कुल 147 देशों ने समय-सीमा खत्म होने के अपना आईएनडीसी पहले ही यूएनएफसीसीसी को सौंप दिया है। ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में इन 147 देशों का योगदान 87 फीसदी है।

वन, जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरण मंत्री प्रकाश जावड़ेकर का कहना है, ''वैसे तो भारत इस समस्या का हिस्सा नहीं है लेकिन यह निदान का हिस्सा बनना चाहता है।'' ऐतिहासिक तौर पर भारत उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार नहीं रहा है। भारत का प्रति व्यक्ति उत्सर्जन 1.6 टन है और इस हिसाब से भारत 135वें नंबर पर है। इस पायदान पर विकसित देश बहुत कम हैं। लेकिन कुल 1.97 अरब टन कार्बन उत्सर्जन के साथ भारत चीन और अमेरिका के बाद तीसरे नंबर पर है।

भारत ने जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएफसीसीसी) पक्षकार सम्मेलन (सीओपी 21) को अपना आईएनडीसी 1 अक्टूबर को आधी रात को सौंपा है। कुल 147 देशों ने समय-सीमा खत्म होने के अपना आईएनडीसी पहले ही यूएनएफसीसीसी को सौंप दिया है। ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में इन 147 देशों का योगदान 87 फीसदी है।

इस बीच आईईए ने कुछ नीतिगत उपाय पेश किए हैं। अगर इन्हें अपनाया जाता है तो वैश्विक तापमान में बढ़ोतरी को 2 डिग्री तक लाया जा सकता है और इस पर कोई शुद्ध आर्थिक लागत भी नहीं लगेगी। इन कोशिशों में उत्कृष्ट ऊर्जा का बेहतर ढंग से इस्तेमाल, सीमित निर्माण, बिजली बनाने के काम पर निम्न् श्रेणी के कोयले का इस्तेमाल, अपस्ट्रीम तेल और गैस उत्पादन से निकलने वाले मीथेन गैस को घटाना और जीवाश्म ईंधन के उपभोग पर दी जाने वाली सब्सिडी चरणबद्ध तरीके से खत्म करना शामिल है। आईईए की रिपोर्ट में कहा गया है, ''2015 में पेरिस में होने वाली बैठक में दलों के महत्वपूर्ण सम्मेलन का वक्त काफी अहम रहने है। इस दौरान अंतर्राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन पर बातचीत होगी और आवश्यक राष्ट्रीय पॉलिसी लागू होगी। इस दौरान एक अंतर्राष्ट्रीय समझौता भी होने की उम्मीद है। रिपोर्ट में यह भी सुझाव दिया गया है कि भारत ऊर्जा का बेहतर इस्तेमाल करके और ज्यादा बेहतर बिजली सयंत्र लगाकर 27.90 करोड़ टन तक उत्सर्जन घटा सकता है।

भारत का आईएनडीसी लक्ष्य

भारत ने 2022 तक 175 गीगावॉट्स नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता लगाने के आधार पर अपना आईएनडीसी तय किया है। भारत का मकसद अजीवाश्मीय बिजली क्षमता मौजूदा 30 फीसदी से बढ़ाकर 2030 तक 40 फीसदी (अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से) करने का लक्ष्य है। देश ने अपनी उत्सर्जन तीव्रता को भी प्रति यूनिट जीडीपी 33 से 35 फीसदी घटाकर 2030 तक 2005 के लेवल से नीचे लाना और अतिरिक्त पेड़ लगाकर 2.5 से 3 अरब टन कार्बन डाइऑक्सासइड के लिए कार्बन सिंक या अवशोषण पैदा करना लक्ष्य बनाया है। भारत की योजना जलवायु परिवर्तन के असर को लचीला बनाने के प्रयासों को प्राथमिकता देना और लक्ष्य को हासिल करने के लिए पर्याप्त वित्तीय मदद का संकेत देना है। भारत लगातार उत्सर्जन मानकों में सुधार के द्वारा अपने ऑटो के उत्सर्जन को कम करने पर काम कर रहा है। नतीजतन, भारत की उत्सर्जन तीव्रता (जीडीपी की प्रति इकाई कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन) 1990 और 2005 के बीच लगभग 18 प्रतिशत की गिरावट आई है। भारत ने पहले ही 2020 तक उत्सर्जन को 2005 के लेवल से 20 से 25 फीसदी कमी लाने का टारगेट रखा है। नई आईएनडीसी टारगेट के तहत भारत 2030

भारत ने 2022 तक 175 गीगावॉट्स नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता लगाने के आधार पर अपना आईएनडीसी तय किया है। भारत का मकसद गैर जीवाश्म) आधारित बिजली क्षमता मौजूदा 30 फीसदी से बढ़ाकर 2030 तक 40 फीसदी (अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से) करने का लक्ष्य है।

तक 2005 से 33-35 प्रतिशत कमी लाने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

अपने नवीनीकरण ऊर्जा और गैर जीवाश्म ईंधन के लक्ष्य को हासिल करने और ऊर्जा की क्षमता का बेहतर इस्तेमाल करने के लिए भारत को अपनी तीव्रता कम करने के लक्ष्य को आसानी से बढ़ाने लायक होना चाहिए। भारत के आईएनडीसी के तहत वन्य इलाका बढ़ाने की अहमियत समझी गई। 2.5 से 3 अरब टन कार्बन डायऑक्साइड के लिए अतिरिक्त सिंक तैयार करने के लिए जरूरी है 2008-2013 के मुकाबले अगले 15 वर्ष में कम से कम 14 फीसदी औसतन सालाना कार्बन उत्सर्जन घटाना होगा। भारत ने एक संतुलित जलवायु योजना रखी है जो नवीनीकरण ऊर्जा के लक्ष्य से अलग है। इनके जरिए भारत अहम परिवर्तन करने वाला है। आक्रामक विकास एजेंडा के साथ इन कार्यवाहियों का भी प्रस्ताव रखा गया है।

कोई बाध्यता नहीं होने के बावजूद भारत स्वैच्छिक तौर पर उत्सर्जन तीव्रता में कटौती करके 2020 तक इसे जीडीपी के 20-25 फीसदी तक घटाकर 2005 के लेवल से नीचे लाना चाहता है। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए सरकार ने कई तरह के उपाय किए हैं। नतीजतन, 2005-2010 के बीच उत्सर्जन तीव्रता भारत की जीडीपी का 12 फीसदी तक कम हो गया है। आगे भारत की योजना आईएनडीसी के तहत 2030 तक उत्सर्जन तीव्रता को 33 से 35 फीसदी तक घटाकर 2005 के लेवल से नीचे लाना है।

प्रधानमंत्री का राष्ट्रीय एक्शन प्लान

भारत ने 2030 तक नवीनीकरण ऊर्जा में अपनी हिस्सेदारी बढ़ाकर 40 फीसदी करने के लिए प्रतिबद्ध है। नवीनीकरण ऊर्जा में अभी भारत की हिस्सेदारी करीब 13 फीसदी (36 गीगावॉट) को देखते हुए भारत का टारगेट काफी महत्वाकांक्षी है। भारत का कहना है कि इसके महत्वाकांक्षी गोल के साथ सौर और पवन ऊर्जा 2015 में क्रमशः 4060 मेगावॉट और 23.76 गीगावॉट को बढ़ाकर 2022 तक 100 गीगावॉट और 60 गीगावॉट हो जाएगी और इसके बाद भी इसे बढ़ाया जाएगा। इसमें उल्लिखित है कि बायोमास की क्षमता को मौजूदा 4.4 गीगावॉट से बढ़ाकर 2022 तक 10 गीगावॉट करने की योजना है। छोटे और लघु पन बिजली योजनाओं को प्रोत्साहित करने के लिए विशेष कार्यक्रमों का आयोजन किया जाएगा। दूर-दराज के गांवों तक बिजली पहुंचाने के लिए नए और बेहतर डिजाइन वाली पानी मिलों को शुरू किया जाएगा और इन्हें बढ़ावा दिया जाएगा। परमाणु ऊर्जा को मौजूदा 5780 मेगावॉट की क्षमता से बढ़ाकर 2032 तक 63 मेगावॉट करने की योजना है ताकि ईंधन की आपूर्ति सुनिश्चित की जा सके। दक्षता मानकों को बढ़ाकर और पुराने कम क्षमता वाले थर्मल स्टेशनों को ऊर्जा क्षमता में सुधार के लिए अनिवार्य लक्ष्य देकर स्वच्छ कोयले को बढ़ावा दिया जाएगा। भारत इस बात पर भी राजी है कि वह अपने समूचे भौगोलिक क्षेत्र का वन्य इलाका जो 2013 में 24 फीसदी था उसे लंबी अवधि में बढ़ाकर 33 फीसदी करेगा और इसमें यह भी कहा गया है कि 2030 तक भारत का वन्य भूभाग 2.5 से 3 अरब टन तक कार्बन डायऑक्साइड अवशोषित कर लेगा जो इसे बड़े पैमाने पर कार्बन डायऑक्साइड सोखने लायक बना रहा है। हमने क्षमता निर्माण, घरेलू ढांचा और अंतर्राष्ट्रीय वास्तुकला तैयार करने का फैसला किया है ताकि भारत में आधुनिक जलवायु तकनीक का तेजी से विस्तार हो सके और ऐसी भावी तकनीकों के लिए संयुक्त सहयोग से अनुसंधान और विकास हो सके।

बाध्यता नहीं होने के बावजूद भारत स्वैच्छिक तौर पर उत्सर्जन तीव्रता में कटौती करके 2020 तक इसे जीडीपी के 20-25 फीसदी तक घटाकर 2005 के लेवल से नीचे लाना चाहता है। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए सरकार ने कई तरह के उपाय किए हैं। नतीजतन, 2005-2010 के बीच उत्सर्जन तीव्रता भारत की जीडीपी का 12 फीसदी तक कम हो गया है।

तालिका 2: 2009 में कार्बन स्पेस (1850 के बेस ईयर से)

अमेरिका	29%
अन्य विकसित देश	45%
चीन	10%
अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाएं	9%
भारत	3%

उठाए गए कदम

ट्यूबलाइट्स के लिए बीईई रेटिंग पेश की गई है ताकि लोगों को यह पता चल सके कि वे कितनी बिजली खपत कर रहे हैं और वे कम बिजली खपत करने वाले उपकरण खरीदे। सभी चार पहिया गाड़ियों के लिए 2010 से भारत IV उत्सर्जन नियम पेश किया गया है। पवन ऊर्जा के लिहाज भारत दुनिया का चौथा सबसे बड़ा देश है और सरकार पवन चक्की लगाने वाली कंपनियों को छूट देती है। भारत ने नई और नवीनीकरण ऊर्जा के लिए एक मंत्रालय बनाया है जो भारत में ऊर्जा के नए स्रोतों के लिए फंड मुहैया कराती है। मसलन, राजस्थान के भुज में एशिया का सबसे बड़ा सौर तलाब या सोलर पौंड बनाया गया है। इसके साथ ही केरल में एक प्रयोगात्मक महासागर थर्मल ऊर्जा रूपांतरण (OTEC) यूनिट लगाई जा रही है। भारत ने एक राष्ट्रीय जैव ईंधन नीति की घोषणा की है जिसके जरिए जैव ईंधन का विकास गैर कृषि भूमि पर विकसित किया जा जाएगा ताकि कृषि योग्य भूमि का कोई नुकसान न हो। ❑

कृपया ध्यान दें

सदस्यता संबंधी पूछताछ अथवा पत्रिका प्राप्त न होने की स्थिति में कृपया वितरण एवं विज्ञापन व्यवस्थापक से इस पते पर संपर्क करें:

वितरण एवं विज्ञापन व्यवस्थापक

प्रकाशन विभाग, कमरा नं. 48-53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003, फोन नं: 011-24367453, ई-मेल: pdjucir@gmail.com

विकास पथ

साइंस एक्सप्रेस-जलवायु परिवर्तन पर आधारित एक बेजोड़ पहल

प्रतिष्ठित ''साइंस एक्सप्रेस'' को ''जलवायु परिवर्तन'' के मूल विषय पर तैयार किया गया है। इसे 15 अक्तूबर, 2015 से ''साइंस एक्सप्रेस क्लाइमेट एक्शन स्पेशल (एसईपीएएस)'' के रूप में चलाया जा रहा है। ''साइंस एक्सप्रेस-क्लाइमेट एक्शन स्पेशल (एसईसीएएस)'' पर सवार इस अत्याधुनिक प्रदर्शनी का लक्ष्य समाज के विभिन्न हिस्से, विशेषकर छात्रों के बीच इसके बारे में जागरुकता पैदा करना है कि नियंत्रण और सुधार के माध्यम से जलवायु परिवर्तन से निपटा जा सकता है। भारत सरकार के पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय की ओर से सेंटर फॉर एनवायरमेंट एजुकेशन (सीईई) द्वारा सीईसीएएस के 16 कोचों में से 8 कोचों में प्रदर्शनी तैयार की गई है। इसमें विशेष तौर पर विवरणों, मामले से जुड़े अध्ययनों तथा जलवायु परिवर्तन के विभिन्न पहलुओं से संबंधित सामग्रियों, विज्ञान पर जोर देने, प्रभावों, सुधार से जुड़ी गतिविधियों, नियंत्रण से जुड़े समाधानों और नीति संबंधी पहलों को इस तरह पेश किया गया है ताकि छात्रों के साथ-साथ आम लोग भी इसे आसानी से तथा रुचिपूर्वक समझ सकते हैं। एसईसीएएस लगभग सात महीने तक देशभर में लगभग 19,800 किलोमीटर की यात्रा करेगी, जिसमें 20 राज्यों के 64 स्थानों पर इसके ठहराव शामिल होंगे। यह प्रदर्शनी जलवायु परिवर्तन के बारे में एक ठोस संदेश देने के साथ-साथ इसके बारे में विचार-विमर्श और चर्चा के लिए अच्छा अवसर भी उपलब्ध कराएगी। भारत सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय और रेल मंत्रालय की एक बेजोड़ सामूहिक पहल के रूप में सायंस एक्सप्रेस ने देशभर में यात्राएं सफलतापूर्वक पूरी की हैं।

वैज्ञानिक मुद्दे पर जागरुकता पैदा करने के लिए साइंस एक्सप्रेस भारत सरकार की एक बेजोड़ पहल है। एक 16 कोचों वाली वातानुकूलित रेलगाड़ी में सुव्यवस्थित विज्ञान प्रदर्शनी पिछले सात वर्षों में देशभर में सफलतापूर्वक यात्रा करती रही है। कुल मिलाकर इन यात्राओं में 1404 दिनों का समय लगाकर देशभर में 1,22,000 किलोमीटर दूरी तय की गई तथा इसके 391 ठहरावों पर 1.33 करोड़ से भी अधिक आगंतुकों ने इसे देखा। इस प्रकार साइंस एक्सप्रेस देश में सबसे बड़ी, सबसे लंबे समय तक चलने वाली और सबसे अधिक देखी जाने वाली सचल विज्ञान प्रदर्शनी बन गई है और अब तक अपनी यात्रा में इसने छः वर्ल्ड बुक ऑफ रिकॉर्ड अपने नाम दर्ज कराए हैं।

जलवायु परिवर्तन पर आधारित नई वेबसाइट शुरू

पर्यावरण और वन तथा जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा हाल में www.justclimateaction.org नामक एक नई वेबसाइट शुरू की गई, जो जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर आधारित है। यह वेबसाइट विशेष तौर पर पेरिस सम्मेलन तक भारत के रुखों और प्रयासों से अवगत कराने के लिए तैयार की गई है, जिसमें भारत का इंटेंडेड नेशनली डिटर्मिन्ड कंट्रीब्यूशन (आईएनडीसी) शामिल किया गया है। वेबसाइट में पूरे प्रयासों के बारे में पारदर्शिता लाने पर जोर दिया गया है। इसके माध्यम से प्रत्येक हितधारक अपने क्रियाकलाप के बारे में एक अरब लोगों का ध्यान खींच पाता है। इस वेबसाइट और इससे संबंधित सोशल मीडिया की सुविधा यह सुनिश्चित करती है कि देश का प्रत्येक नागरिक एक बेहतर भविष्य के लिए समर्पित हो। यह वेबसाइट अपनी अधिकांश विषय सामग्रियों को दृश्य के रूप में सामने लाती है, जिसे व्यक्तिगत सोशल मीडिया चैनलों पर साझा किया जा सकता है। एक 'ब्रेक अवे एंड प्ले' संरचना के आधार पर तैयार इसके प्रत्येक पृष्ठ, स्टोरी अथवा सेक्शन को विश्वभर में कहीं भी दर्शकों द्वारा पोस्ट अथवा शेयर किया जा सकता है। इसमें 300 जीबी से भी अधिक फिल्मों, रिपोर्टों और तस्वीरों का डाटा शामिल है। इसमें लघु फिल्मों के रूप में समृद्ध विषय सामग्री उपलब्ध कराने पर जोर दिया गया है, ताकि लोगों को इसके साथ आसानी से जोड़ा जा सके और इसमें शामिल सभी विषय सामग्री को देखने में उनकी रुचि हो।

चार राज्यों की ग्रीन इंडिया मिशन योजनाओं को मंजूरी

राष्ट्रीय ग्रीन इंडिया मिशन (जीआईएम) की राष्ट्रीय कार्यपालक परिषद (एनईसी) द्वारा चार राज्यों– मिजोरम, मणिपुर, झारखंड और केरल द्वारा दाखिल संभावित योजनाओं और वार्षिक योजना संचालन (एपीओ) को स्वीकृति दी गई है। इन सभी चार राज्यों की संभावित योजनाओं को 5 से 10 वर्षों की योजना के लिए 90,202.68 लाख रुपये की कुल वित्तीय आयोजना के साथ मंजूर किया गया है, जिसमें इस वित्त वर्ष के लिए 11,195.32 लाख रुपये का वार्षिक योजना संचालन व्यय भी शामिल है। कुल योजना अवधि के दौरान ग्रीन इंडिया मिशन के अधीन इन चार राज्यों में कुल 1,08,335 हेक्टेयर वन तथा गैर-वन क्षेत्र शामिल हैं, जिसमें से 81,939 हेक्टेयर क्षेत्र में मौजूदा वनों को अधिक घना किया जाएगा और 16,396 हेक्टेयर नये क्षेत्र में काम किया जाएगा। मौजूदा वित्त वर्ष के लिए, ये क्षेत्र क्रमशः 28,250 हेक्टेयर और 7,827 हेक्टेयर होंगे। चालू वित्त वर्ष में 27,032 परिवारों और कुल योजना अवधि में 81,233 परिवारों के लिए बायोगैस, सौर उपकरणों, एलपीजी, बायोमास आधारित प्रणालियों और उन्नत चूल्हे जैसे वैकल्पिक ऊर्जा के उपकरणों की मंजूरी दी गई है। इससे वनों पर दबाव घटाने, कार्बन से लाभ प्राप्त करने के साथ-साथ स्वास्थ्य और अन्य लाभ प्राप्त करने में मदद मिलेगी।

जलवायु परिवर्तन और जलचक्र पर उसका प्रभाव

धीप्रज्ञ द्विवेदी

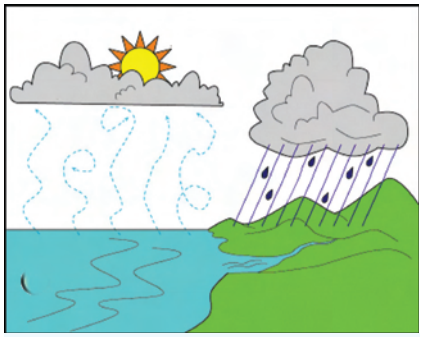

जलवायु परिवर्तन के कारण हिमनदों (ग्लेशियरों) के पिघलने की दर बढ़ गई है जिसके कारण गर्मी के मौसम में नदी में जल प्रवाह बढ़ जाता है। प्रारंभ में तो जल प्रवाह बढ़ेगा और उससे संबंधित समस्याएं जैसे बाढ़, जल जनित रोग इत्यादि बढ़ेंगे। कुछ समय के बाद हिमनदों का आकार घटने लगेगा और नदी में जल मात्रा कम होने लगेगी। जल की मात्रा बढ़ने के अतिरिक्त हिमालयी क्षेत्र में आने वाले परिवर्तनों के कारण नदियों का पथ बदलने की घटनाएं बढ़ जाती हैं। वर्षा के समय में अनियमितता भी इसके कारण आती है

जीवन की निर्भरता जल पर है। कहा भी गया है जल ही जीवन है। जल के महत्व को दर्शाते हुए ऋग्वेद में कहा गया है–

''*आपो ज्योति रसोमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोग*''

अर्थात् भगवान जल का रूप ग्रहण कर जगत का पालन करते हैं। गीता में अध्याय तीन का चौदहवां श्लोक है–

अन्ना द्यवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्न संभवः।।
यज्ञाद भवति पर्यन्यो यज्ञः कर्म समुद्भवः।।

रहीम ने भी लिखा है–

'रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून'

पृथ्वी पर जल के बिना जीवन संभव नहीं है। अतीत की सभी सभ्यताओं का विकास नदियों के किनारे हुआ।

सतत विकास एवं जल

सतत विकास की अवधारणा भी जल के साथ जुड़ी हुई है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 2005-2015 के दशक को ''जीवन के लिए जल का अंतर्राष्ट्रीय दशक घोषित किया था।

संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार, ''जल सतत विकास के मूल में है और सामाजिक-आर्थिक विकास, स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र के लिए एवं खुद मनुष्य के अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण है। यह रोग के वैश्विक बोझ को कम करने के लिए और आबादी के स्वास्थ्य, कल्याण एवं उत्पादकता में सुधार के लिए महत्वपूर्ण है। यह लोगों को उपलब्ध कराई जा रही लाभों और सेवाओं के उत्पादन एवं संरक्षण का केंद्र बिंदु है। जल, जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन के केंद्र में है। साथ ही यह, जलवायु प्रणाली, मानव समाज और पर्यावरण के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

पानी मानव भलाई के मूल में है। यह एक परिमित और अपूरणीय संसाधन है। यह अक्षय तभी है जब अच्छी तरह से प्रबंधित है। आज 1.7 अरब से ज्यादा लोग नदी घाटियों में रहते हैं जहां जल-पुनर्भरण उसके उपयोग से कम है। अगर यही प्रवृत्ति रही तो 2025 तक विश्व की दो-तिहाई आबादी जल की कमी वाले क्षेत्र में रहने के लिए विवश होगी। जल, सतत विकास के लिए महत्वपूर्ण चुनौती है लेकिन यदि सही प्रबंधन किया जाए तो यह आर्थिक एवं पर्यावरणीय व्यवस्था की रीलिअन्स को मजबूत बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। (www.un.org/waterforufdecade) ब्रंटलैंड आयोग ने अपने दस्तावेज ''हमारा साझा भविष्य'' में सतत विकास को परिभाषित किया है ''भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं के साथ समझौता किए बिना वर्तमान का विकास'' अर्थात् पर्यावरण को सुरक्षित रखते हुए, स्थानीय निवासियों की आवश्यकताओं की पूर्ति सतत विकास है।

वर्ष 2000 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने जल एवं सतत विकास को ध्यान में रखते हुए दो प्रकार के लक्ष्य निर्धारित किए। (1) सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्य और (2) जल पर सतत विकास लक्ष्य।

सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्य पर वर्ष 2000 में सहमति व्यक्त की गई थी जिसमें 1990-2015 के बीच स्वच्छ पेयजल एवं बुनियादी स्वच्छता की अनुपलब्धता वाली जनसंख्या को आधा करने का लक्ष्य है अर्थात् जितने लोग उस समय स्वच्छ पेयजल एवं बुनियादी स्वच्छता से वंचित थे उनमें से कम से कम आधे लोगों

लेखिका पर्यावरण विज्ञान में स्नातकोत्तर हैं। अक्षय ऊर्जा तथा पर्यावरणीय संबंधी विषयों पर नियमित रूप से लिखते रहते हैं। प्रतियोगी परीक्षाओं के विद्यार्थियों के बीच यह विषय पढ़ाते भी हैं। ईमेल: dhimesh.dubey@outlook.com

तक इन सुविधाओं को पहुंचाने का लक्ष्य था। लगभग 75 करोड़ लोगों के पास बेहतर पेयजल स्रोत उपलब्ध नहीं हैं और वर्तमान संकेतक पानी की आपूर्ति की सुरक्षा और विश्वसनीयता सुनिश्चित नहीं करते हैं।

जुलाई 2010 में संयुक्त राष्ट्र महासभा ने एक प्रस्ताव स्वीकृत किया जिसमें कहा गया कि महासभा शुद्ध पेयजल एवं स्वच्छता के अधिकार को एक मानव अधिकार के रूप में मान्यता देती है जो जीवन के पूर्ण आनंद एवं मानव अधिकार के लिए आवश्यक है। सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्य की एक समय सीमा 2015 अब पूरी होने को है। वैश्विक समुदाय इस बात का जायजा ले रहा है कि सहस्राब्दि विकास लक्ष्य हमें सतत विकास की ओर लेकर जा रहे हैं। एमडीजी तंत्र, न तो पानी और सतत विकास के एजेंडा और न हीं इसके अन्य क्षेत्रों एवं चिंताओं की सही तरीके से सुलझाने में सक्षम है।

इसमें *सातत्य* पर जोर नहीं दिया गया है साथ ही मानव अधिकारों एवं असमनताओं को भी काफी हद तक नजरअंदाज कर दिया गया है। इसके बाद संयुक्त राष्ट्र के सदस्यों ने यह तय किया कि, मानव अधिकार समानता एवं *सातत्य* (निरंतरता), विकास के एजेंडे के मूल में है। संयुक्त राष्ट्र-जल (यूएन-वाटर) का व्यापक लक्ष्य है ''सभी के लिए सतत जल की उपलब्धता'' (un.org/waterforlifedecade)। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार जल के बिना सतत विकास संभव नहीं है। अत: जल स्रोतों एवं जल चक्र में आने वाले किसी भी बदलाव का सीधा प्रभाव सतत विकास पर पड़ेगा।

जल का उपयोग

मनुष्य द्वारा जल का दोहन एवं उसका प्रयोग भूमिगत जल तथा सतही जल दोनों से किया जाता है। जो जल खर्च होता है तथा वापस नहीं आता है उसे जलव्यय कहते हैं। वैश्विक स्तर पर निकाले गए जल का 60 प्रतिशत भाग उपयोग में आता है। शेष वाष्पीकरण के द्वारा वायुमंडल में चला जाता है। जल के विभिन्न उपयोगों को हम निम्नलिखित हिस्सों में विभाजित कर सकते हैं–

कृषि: वैश्विक स्तर पर उपयोग में लाए कुल जल का लगभग 70 प्रतिशत भाग कृषि में प्रयुक्त होता है। हालांकि यह आंकड़ा अलग-अलग देशों में अलग-अलग है। जैसे कुवैत में 4 प्रतिशत जल ही सिंचाई में काम आता है।

वर्षा आधारित कृषि दुनिया की सर्वप्रमुख कृषि प्रणाली है। इसकी वर्तमान उत्पादकता अधिकतम कृषि प्रबंधन के तहत प्राप्य औसत के आधे से थोड़ा अधिक है। अर्थात् इसमें विकास की संभावनाएं हैं। वर्ष 2050 तक वैश्विक स्तर पर 60 प्रतिशत अधिक अन्न की आवश्यकता होगी और विकासशील देशों में 100 प्रतिशत से भी अधिक होगी।

उद्योग एवं ऊर्जा: ये दोनों सम्मिलित रूप से 20 प्रतिशत पानी का उपयोग करते हैं। विकसित देशों में विकासशील देशों की तुलना में यह अनुपात ज्यादा है।

घरेलू क्षेत्र: यह 10 प्रतिशत पानी का उपयोग करता है। इसके बाद भी दुनिया की 748 मिलियन आबादी को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध नहीं है और 2.5 बिलियन आबादी को बुनियादी स्वच्छता की सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। ये दोनों सतत विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने में बहुत बड़ा अवरोध है।

पृथ्वी पर जल क्षेत्र: यद्यपि पृथ्वी का 70 प्रतिशत भाग जल से ढंका है तथापि उसमें 67.10 पर सागर है। तालिका 1 से स्पष्ट है कि विश्व में उपलब्ध कुल जल का 96.5 प्रतिशत भाग महासागरों, सागरों एवं खाड़ियों में खारा पानी के रूप में है जोकि हमारे लिए अनुपयोगी है। जो उपयोग योग्य जल है उसका 68.7 प्रतिशत बर्फ के रूप में है जिसे हम प्रपयोग में नहीं ला सकते। बाकी बचे में से 30 प्रतिशत भू-जल है यह सतही जल से 30-35 गुना ज्यादा है। कुल उपयोग योग्य जल का 0.04 प्रतिशत वायुमंडल में है। इतनी कम मात्रा में होने के बाद भी यह बहुत महत्वपूर्ण है। यह वायुमंडल में हरित गृहप्रभाव के लिए भी उत्तरदायी है साथ ही जलचक्र के संचलन के लिए भी वैश्विक स्तर पर विभिन्न प्रकार की जलवायु होने के पीछे मुख्य कारण तापमान एवं वायुमंडलीय जल भी है।

जल एक अद्वितीय संसाधन: जल अपनी बहुत सी विशेषताओं के कारण एक अद्वितीय संसाधन है। इसकी कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

- यह एक तापमान के बहुत बड़े विस्तार में 0-100° से. तक द्रव अवस्था में रहता है।
- इसका विशिष्ट ताप उच्चतम है जिसके कारण यह बहुत धीरे-धीरे गर्म और ठंडा होता है और जलीय जीवों को ताप संक्षोभ का सामना नहीं करना पड़ता।
- इसका वाष्पीकरण का गुप्त ताप बहुत ऊंचा है अत: इसके वाष्पीकरण में बहुत ऊष्मा की आवश्यकता होती है।
- यह एक बहुत अच्छा विलायक है जिसके कारण यह पोषक पदार्थों का एक बेहतरीन वाहक है।
- उच्च पृष्ठ तनाव एवं संशक्ति के कारण यह आसानी से ऊंचाई तक चढ़ सकता है जिसे केशिका प्रभाव कहते हैं जिसके कारण पोषक पदार्थ पेड़ों की जड़ों से उनके पत्तों तक आसानी से पहुंच पाते हैं।

तालिका 1: विश्व में उपलब्ध जल का वितरण

	स्रोत	आयतन	जल (%)	मीठा पानी (%)
1.	महासागर सागर एवं खाड़ी	1,338,000	96.5	–
2.	ध्रुवीय बर्फ, ग्लेशियर एवं चोटियों पर बर्फ	24,064	1.74	68-7
3.	भूजल	23,400	1.7	–
	(a) मीठा जल	10,530	0.76	30.1
	(b) खारा जल	12,870	0.94	–
4.	मृदा में नमी	16.5	0.001	0-05
5.	जमीनी बर्फ एवं परमाफ्रास्ट	300	0.022	0-86
6.	झील	176.4	0.013	–
	(a) मीठा जल	91.0	0.007	0-26
	(b) खारा जल	85.4	0.006	–
7.	वायुमंडल	12.9	0.001	0-04
8.	दलदल	11.47	0.008	0-03
9.	नदियां	2.12	0.0002	0-006
10.	जैविक जल	1.12	0.0001	0-003
	कुल	**1,385,984**	**100.0**	100-0

आयतन 1000 धन किमी में। स्रोत: earthobservatory.nasa.gov

- जल में एक विलक्षण (अनियमित) प्रसार गुण है अर्थात् जमने पर इसका आयतन बढ़ जाता है और इसके कारण बर्फ जल में नहीं डूबती और जल के अंदर का जीवन सुरक्षित रहता है। बर्फ ऊष्मा की कुचालक भी है और इस प्रकार बाहर के कम तापमान को पानी के अंदर तक पहुंचने से रोकती है।

जल अपनी इन सभी विशेषताओं के कारण बेहद महत्वपूर्ण संसाधन है। स्थलीय जीवों को जल की लगातार उपलब्धता में जलचक्र का बेहद महत्वपूर्ण योगदान है।

जलचक्र: जल लगातार पर्यावरण में चक्रित होता रहता है। जल के चक्रण की इस प्रक्रिया को जलचक्र कहा जाता है। पृथ्वी के विभिन्न हिस्सों से जल का वाष्पीकरण होता है जो बाद में वर्षा या बर्फबारी के रूप में वापस धरती पर पहुंचता है।

जल चक्र की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह आसानी से अपनी अवस्था बदल सकता है। यह ठोस, द्रव एवं वाष्प तीन अवस्थाओं में पृथ्वी पर उपलब्ध है। जल चक्र पृथ्वी पर उपलब्ध जल के एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित होने और एक भंडार से दूसरे भंडार या एक स्थान से दूसरे स्थान की गति की चक्रिय प्रक्रिया है जिसके द्वारा पृथ्वी पर जल की कुल मात्रा स्थिर रहती है बस उसका रूप एवं स्थान परिवर्तन होता है। अत: यह प्रकृति में जल संरक्षण के सिद्धांत की व्याख्या है। इस चक्र में निम्नलिखित पद होते हैं–

(क) वाष्पीकरण/वाष्पोत्सर्जन, (ख) द्रवण (ग) वर्षण, (घ) अंत:स्पंदन, (ङ) अपवाह, (च) संग्रहण।

प्रतिवर्ष महासागरों से जल की 1-4 इंच परत का वाष्पीकरण होता है जिसमें से 90 प्रतिशत से ज्यादा वापस जलचक्र के द्वारा वापस समुद्र तक पहुंचता है। इसके बाद वाष्प का द्रवण होता है जिससे बादल बनते हैं। फिर वर्षण होता है। जो वर्षण स्थल पर होता है या पहाड़ों पर होता है उसका कुछ भाग जमीन के अंदर भूगर्भीय जल के रूप में पहुंचता है जिसे अंत: स्पंदन कहते हैं। बाकी का भाग सतही जल के रूप में नदियों और झीलों में परिवर्तित होता है। अधिकांश नदियां समुद्रों तक पहुंचती है। इस प्रकार समुद्र से वाष्पीकृत हुआ जल वापस समुद्र तक पहुंचता है। भूगर्भीय एवं सतही जल का कुछ भाग पेड़ पौधों द्वारा अवशोषित होता है जो बाद में वाष्पोत्सर्जन के द्वारा वापस वायुमंडल में पहुंचता है। कुल उपलब्ध जल का केवल 0.801 प्रतिशत ही वायुमंडल में उपलब्ध रहता है जो जल चक्र की पूरी प्रक्रिया के लिए महत्वपूर्ण है।

पूरे विश्व में जल की उपलब्धता जल चक्र पर निर्भर करती है। वर्तमान में हो रहे जलवायु परिवर्तन के कारण जलचक्र के स्वरूप पर भी पड़ रहा है जिसका सीधा असर जीवन के ऊपर होगा।

जलवायु परिवर्तन: जलवायु परिवर्तन, पृथ्वी की एक सामान्य प्राकृतिक प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत हिमयुग और उष्ण युग बारी-बारी से आते रहते हैं। इस बार मुख्य अंतर मानवीय क्रियाकलापों से आया है। मानवीय क्रियाकलापों के कारण जलवायु परिवर्तन की प्रक्रिया तीव्र हो गई है जिसका सीधा असर जीवन एवं जीवन के आधार स्तंभों के ऊपर पड़ रहा है।

जलवायु परिवर्तन का जल स्रोतों एवं जल चक्र पर प्रभाव: वर्तमान में पृथ्वी विज्ञान एवं पर्यावरण नीति से संबंधित सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न जलवायु परिवर्तन एवं जल चक्र पर उसके प्रभाव से जुड़ा है। वैज्ञानिक समुदाय इस बात पर एकमत हैं कि पृथ्वी की जलवायु में परिवर्तन आ रहा है जिसका कारण प्रकृति की परिवर्तनीयता है और साथ ही इस प्रक्रिया को तीव्र करने में मानवजनित कारकों का भी योगदान है जिसमें प्रमुख हैं हरित गृह गैसें एवं एयरोसोल। वैज्ञानिक इस मत पर भी एकमत की ओर बढ़ रहे हैं कि इसका सीधा प्रभाव वायुमंडल में मौजूद जलवाष्प, बादल वर्षा, जल प्रभाव इत्यादि के ऊपर भी पड़ेगा।

उदाहरणस्वरूप, निम्न वायुमंडल का तापमान बढ़ने पर वाष्पीकरण की दर बढ़ेगी, जिसके कारण वायुमंडल के निचले हिस्से (क्षोभ मंडल) में जल की सांद्रता बढ़ेगी जिसके कारण अतिवृष्टि की घटनाएं बढ़ेंगी। साथ ही तापमान ज्यादा होने के कारण बर्फबारी वाले क्षेत्रों में भी बर्फ के स्थान पर जल वर्षा ही होगी। उत्तरी गोलार्द्ध में वसंत ऋतु का आगमन समय से पहले होगा जिसके कारण बर्फ का पिघलना पहले प्रारंभ होगा जिससे नदी के धारा प्रभाव बढ़ जाएगा। जिसके कारण ग्रीष्म और उसके बाद के समय में मीठे पानी की कमी का सामना करना पड़ सकता है।

तापमान बढ़ने के कारण वर्षा के स्वरूप एवं मात्रा में होने वाला परिवर्तन कुछ क्षेत्रों को शुष्क बना सकता है जिसके कारण उन क्षेत्रों में सूखे (अनावृष्टि) का सामना करना पड़ सकता है। पामर अनावृष्टि तीव्रता सूचकांक के अनुसार अनावृष्टि की तीव्रता बढ़ी है जबकि इसी दौरान दक्षिण अमेरिका एवं दक्षिण मध्य अमेरिका में वर्षा की मात्रा बढ़ गई है।

इसके अतिरिक्त क्षोभमंडल का तापमान बढ़ने के कारण ग्लेशियरों के पिघलने की दर बढ़ेगी जिसका सीधा असर वार्षिक नदियों में उपलब्ध जल की मात्रा पर पड़ेगा। इस बात की आशंका व्यक्त की जा रही है कि सन 2050 तक एशिया के वृहद नदी घाटी के

क्षेत्रों में जलचक्र के परिवर्तन के कारण जल की कमी हो सकती है। कुछ क्षेत्रों की औसत वर्षा बढ़ जाएगी और कुछ क्षेत्रों में औसत वर्षा कम हो जाएगी जिसके कारण बाढ़ एवं सूखा जैसी समस्याएं और बढ़ेंगी। साथ ही इसका प्रभाव जल विद्युत परियोजनाओं के ऊपर भी पड़ेगा।

भारत में जल उपलब्धता पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

भारत के जल स्रोतों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को हम निम्नलिखित बिंदुओं के द्वारा दर्शा सकते हैं–

भारत में जलवायु परिवर्तन के कारण जल स्रोतों पर दबाव बढ़ेगा। हिमालयी ग्लेशियर, भारत के वार्षिक नदियों के लिए जल स्रोत हैं। पिछले कुछ दशकों में, जलवायु परिवर्तन और मानवीय गतिविधियों के कारण हिमालयी क्षेत्र में बहुत परिवर्तन आया है। यह प्रमाणित है कि हिमालयी ग्लेशियर 19वीं शताब्दी की तुलना में छोटे होते जा रहे हैं। भारत के लिए सबसे महत्वपूर्ण ग्लेशियर गंगोत्री प्रतिवर्ष 28 मी. की दर से सिकुड़ता जा रहा है।

जलवायु परिवर्तन के कारण हिमनदों (ग्लेशियरों) के पिघलने की दर बढ़ गई है जिसके कारण गर्मी के मौसम में नदी में जल प्रवाह बढ़ जाता है। प्रारंभ में तो जल प्रवाह बढ़ेगा और उससे संबंधित समस्याएं जैसे बाढ़, जल जनित रोग इत्यादि बढ़ेंगे। कुछ समय के बाद हिमनदों का आकार घटने लगेगा और नदी में जल मात्रा कम होने लगेगी। जल की मात्रा बढ़ने के अतिरिक्त हिमालयी क्षेत्र में आने वाले परिवर्तनों के कारण नदियों का पथ बदलने की घटनाएं बढ़ जाती हैं। वर्षा के समय में अनियमितता भी इसके कारण आती है।

महाराष्ट्र, गुजरात और गोवा के तटीय क्षेत्रों पर समुद्र सतह बढ़ने के कारण बहुत नुकसान हो सकता है। इसके कारण तटीय क्षेत्रों में बाढ़ का खतरा होगा। साथ ही कृषि भूमि एवं अन्य भूमि भी समुद्र के अंदर समाहित हो जाएगी। इसका सीधा असर वहां रहने वाले लोगों पर होगा जिनका वहां से विस्थापन होगा तथा समुद्री जल के जमीनी जल से मिलने के कारण पेय जल की समस्या भी बढ़ेगी। भारत के पूर्वी तट पर चक्रवातों की संख्या बढ़ जाएगी। साथ ही गंगा के मैदान में बाढ़ की विभिषिका भी भयावह होती जाएगी। ❑

(पृष्ठ 34 से जारी ...)

जुड़े संकटों ने भी आर्थिक विकास पर असर दिखाया है।

उपसंहार

बहरहाल, ग्लोबल वार्मिंग यानी जलवायु परिवर्तन आज पृथ्वी के लिए सबसे बड़ा संकट बन गया है। इसे लेकर पूरी दुनिया में हाय तौबा मची हुई है। इसको लेकर कई तरह की भविष्यवाणियां भी की जा चुकी है, दुनिया अब नष्ट हो जाएगी, पृथ्वी जलमग्न हो जाएगी, सृष्टि का विनाश हो जाएगा। ज्यादातर ऐसा शोर पश्चिम देशों से ही उठता रहा है, जिन्होंने अपने विकास के लिए ना जाने प्रकृति के विरूद्ध कितने ही कदम उठाए हैं और लगातार उठ ही रहे हैं। आज भी कार्बन डाई आक्साइड उत्सर्जन करने वाले देशों में 70 प्रतिशत हिस्सा पश्चिमी देशों का ही है जो विकास की अंधी दौड़ का परिणाम है। मगर वे इस पर जरा भी कटौती नहीं करना चाहते। हालांकि प्रत्येक साल इस गंभीर समस्या को लेकर विश्व स्तर पर शिखर सम्मेलन का भी आयोजन किया जाता है लेकिन परिणाम ढाक के तीन पात ही रहते हैं। जबकि दुनिया को जलवायु परिवर्तन के भीषण असर से बचाने के लिए ऐसा करना नितांत आवश्यक है। असल में जलवायु परिवर्तन एक ऐसा मुद्दा है जो पूरी दुनिया के लिए चिंता की बात है और इसे बिना आपसी सहमति और ईमानदार प्रयास के हल नहीं किया जा सकता। भूमंडलीकरण के कारण आज पूरा विश्व एक विश्वग्राम में तब्दील हो चुका है। वक्त कुछ करने का है न कि सोचने का। जाहिर सी बात है कि इसके लिए कुछ देश एवं कुछ संगठन तब तक ज्यादा कुछ नहीं कर पाएंगे जब तक दुनिया के धनी देश प्रयास न करें। ❑

(पृष्ठ 44 से जारी ...)

प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करती है।[19] ऐसे में भारत जैसे देशों को जलवायु परिवर्तन को लेकर ज्यादा सचेत रहने की जरूरत है। मानव शरीर रूपी मशीन को प्राकृतिक रूप से चलने के लिए धरती तत्व, जल तत्व, आग तत्व, आकाश तत्व व वायु तत्व रूपी पांच तत्वों को संतुलित करने की जरूरत पड़ती है। इन तत्वों का असंतुलन मनुष्य के शरीर में व्याधियों को उत्पन्न करता है। जलवायु की जब हम बात करते हैं तो इसमें मुख्य रूप से दो तत्वों की बात होती है। पहला जल व दूसरा वायु। इन दोनों तत्वों का संतुलित रहना मानव स्वास्थ्य के लिए अति आवश्यक है।

हमें पूरी उम्मीद है कि पेरिस सम्मेलन में विश्व के देश तापमान वृद्धि रोकने के उपायों, ईंधन में कटौती, ऊर्जा उपयोग, प्रदूषण नियंत्रण की नई तकनीकों जैसे तमाम विषयों पर जरूर ध्यान देंगे। इन प्रश्नों के उत्तर में ही जलवायु परिवर्तन से होने वाली तबाही को रोकने व वैश्विक स्वास्थ्य रक्षा का सूत्र छुपा हुआ है। ❑

संदर्भ सूची

1. http://zeenews.india.com/hindi/science/crop-damage-of-200-billion-by-2050-due-to-increase-in-global-temperature/263713
2. http://zeenews.india.com/hindi/science/global-warming-could-change-the-shape-of-the-earth-study/271912
3. http://www.adb.org.Documents/Books/Economics-Climate-Chant3-SEA.default.asp
4. http://zeenews.india.com/hindi/science/2014-was-the-warmest-year-so-far/264335
5. http://www.who.int/mediacentre/commentaries/climate-change-conference/en/
6. http://zeenews.india.com/hindi/science/biggest-threat-to-peoples-health-from-climate-change/261527
7. http://www.scientificamerican.com/article/twelve-diseases-climate-change-may-make-worse/
8. http://www.searo.who.int/EN/Section10/Section2537_14458.htm
9. http://nlep.nic.in/pdf/Progress%20report%2031st%20March%202014-15%20-.pdf
10. http://www.who.int/gho/neglected_diseases/schistosomiasis/en/
11. http://www.who.int/campaigns/tb-day/2014/event/en/
12. 12वीं योजना के लिए आईसीएमआर की वार्षिक प्रदर्शन मूल्यांकन समिति के वयाधि विशेष दस्तावेज/डेंगू/चिकनगुनिया/हाई फीवर
13. विश्व स्वास्थ्य आंकड़े (2008): विश्व स्वास्थ्य संगठन, जेनेवा
14. स्टर्न एन. द इकनॉमिक क्लाइमेट चेंज: द स्टर्न रिव्यू, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2007
15. http://www.scidev.net/en/health/climate-change-insect-borne-disease/opinions/climate-change-brings-natural-disasters-and-disease.html
16. http://zeenews.india.com/hindi/india/india-can-show-the-way-to-deal-with-climate-change-modi/255028
17. http://zeenews.india.com/hindi/business/green-technologies-need-to-be-developed-on-war-footing-arun-jaitley/254557
18. http://pib.nic.in/newsite/PrintHindiRelease.aspx?relid=41882
19. http://en.wikipedia.org/wiki/IPCC_Fourth_Assessment_Report

एक और हिमयुग की आहट

आलोक कुमार

हिमयुग वातावरण में मौजूद गैसों के अनुपात में परिवर्तन से आता है। कार्बन उत्सर्जन की बढ़ती मात्रा को लेकर दुनिया के सुधिजन चिंतित है और जतन कर रहे हैं कि अनुशासन के जरिए इस पर प्रतिबंध लगाया जाए। यह हमारे वश में है। प्रतिबंध से हिमयुग में पदार्पण को हमेशा के लिए न सही लेकिन कुछ समय के लिए टाला जा सकता है। इसके अलावा ऐसे कई कारक हैं जिन पर इंसान का वश नहीं है। मसलन हिमयुग का पदार्पण पृथ्वी के सूर्य की परिक्रमा पथ में परिवर्तन से हो सकता है। पृथ्वी के तापमान को सूर्य के ताप ने संतुलित कर रखा है। परिक्रमा पथ में परिवर्तन से सूर्य से आ रहा ताप कम या ज्यादा होते ही हिम का आच्छादन बढ सकता है

जीवाष्म के जलने से वायुमंडल में कार्बन की मात्रा बढ़ रही है। कार्बन उत्सर्जन की वजह से धरती का तापमान बढ़ रहा है। वैज्ञानिक चेतावनी के मुताबिक यह हिम युग की आहट है। यह विरोधाभासी लग सकता है कि जब तापमान बढ़ रहा है, तो गर्मी बढ़नी चाहिए। गर्मी से हिम यानी बर्फ जमने की प्रक्रिया स्वत: धीमी हो जानी चाहिए और हिमयुग का खतरा कम होना चाहिए लेकिन वैज्ञानिक अवधारणा ठीक उलट है। ग्रीनलैंड और अंटाकर्टिक पर जमे हिम के अध्ययन से पता लगा है कि हजारों लाख वर्ष पहले ग्लेशियर बनते वक्त यहां बर्फ ने वायुमंडलीय गैस को बुलबुले के रूप में ग्रहण कर लिया था। मतलब कार्बन डाइ ऑक्साइड में ताप को छिपा लेने की प्रवृति होती है। अनुमान के मुताबिक गहन हिमयुग में वायुमंडल में कार्बन की मात्रा बढ़कर 90 प्रतिशत तक पहुंच जाती है। तब जीवन की संभावना नहीं के बराबर रह जाती है। जीवन का सीधा संबंध ऑक्सीजन की मौजूदगी और सुनिश्चित तापमान से है।

कार्बन-ऑक्सीजन अनुपात

एक ओर जहां ऑक्सीजन की मौजूदा मात्रा के बने रहने पर संकट गहरा है, तो वहीं धरती का तापमान असाध्य तरीके से बढ़ता जा रहा है। यह पृथ्वी पर जीवन के लिए खतरा है। इसके लिए विकास के नाम पर जारी औद्योगिकीकरण में प्राकृतिक गैस और तेल के जलने से अंधाधुध कार्बन उत्सर्जन की प्रक्रिया को दोषी माना जा रहा है। तापमान को नियंत्रित करने के लिए जल का वाष्पीकरण की प्रक्रिया पर असर पड़ रहा है। कार्बन डाइ ऑक्साइड शोधित करने की स्वत: प्राकृतिक क्रिया है। पेड़ पौधे यानी जंगल कार्बन डाइ ऑक्साइड ग्रहण कर ऑक्सीजन छोड़ने का काम करते हैं। पेड़ पौधों की पत्तियां, टहनियों में कार्बन संचित रहता है। उसे जलाने से कार्बन उत्सर्जित होता है। शहरीकरण के कारण जंगल खत्म करने की प्रवृति बढ़ी है। पृथ्वी की हरियाली में ह्रास आया है। जंगल और हरियाली का होना पर्यावरण संतुलन के लिए जरूरी है। जंगल बादलों में मौजूद वाष्पीकृत जल को पृथ्वी पर गिरने के लिए आकर्षित करता है। यह एक ऋतुचक्र के अंतर्गत होता रहा है लेकिन पर्यावरण असंतुलन ने ऋतुचक्र को प्रभावित करना शुरू कर दिया है। जिसकी वजह से धरातल के कई हिस्से अतिवृष्टी और अनावृष्टी का शिकार बन रही है।

अमेरिका की अंतरिक्ष संस्था नासा के जारी आंकड़ों के मुताबिक सामान्य परिस्थिति में वायुमंडल में नाइट्रोजन और ऑक्सीजन गैस की बहुलता है। नाइट्रोजन और ऑक्सीजन ही वायुमंडल का नब्बे प्रतिशत गैस हैं। कार्बन डाइ ऑक्साइड का प्रतिशत 0.00035000 है। औद्योगिकीकरण की वजह से बीती सदियों में कार्बन डाइ ऑक्साइड की मात्रा में 25 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हुई है। संभवत इससे ही अंटार्कटिका पर हिम जमने की प्रक्रिया बढ़ने लगी है। औद्योगिकीकरण से बढ़ रहे कार्बन उत्सर्जन से वायुमंडल में कार्बन और मिथेन के प्रतिशत का बढ़ना वायुमंडल का तापमान घटाने की वजह है। यह बता रहा है कि हम हिमयुग के दौर की ओर बढ़ चले हैं।

लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं। फिलहाल न्यूज पोर्टल www.sabkikhabar.com से जुड़े हुए हैं। ईमेल: aloksamay@gmail.com

कार्बन डाइ ऑक्साइड की बहुलता से क्या हो सकता है? पृथ्वी का पड़ोसी ग्रह बुध इसकी मिसाल है। बुध पर कार्बन डाइ ऑक्साइड की मात्रा पृथ्वी की तुलना में एक लाख गुणा अधिक है। वहां का तापमान 463 डिग्री सेंटीग्रेट (865 डिग्री फॉरेनहाइट) है। यह तापमान सीसा जैसे धातु को पिघला देने के लिए काफी है।

हिमयुग की कल्पना

धरती पर हिमयुग एक सतत प्रक्रिया है। हजारों लाखों वर्षों के अंतराल पर होती रहती है। विघटन की वजह से पृथ्वी पर हिम की परतों और ग्लेशियरों के विस्तार से होता है। धरती बर्फ की चादर ओढ़ लेती है। हालांकि हिम युग के आदि और अंत को लेकर रहस्य बरकरार है। फिर भी वैज्ञानिक मानते हैं कि पिछला हिमयुग 25 लाख 80 हजार साल पहले शुरू हुआ था और 11 हजार साल पहले समाप्त हुआ। हिमयुग में पृथ्वी के सतह और वायुमंडल का तापमान लंबे अरसे के लिए कम हो जाता है। इस युग में कुछ अधिक ठंडे तो कुछ कम ठंडे काल होते हैं। आखिरी हिमयुग 20 हजार वर्षों पहले अपने चरम पर था। तब धरती पर बर्फ की मोटी चादर थी। बड़े भू-भाग पर ग्लेशियर फैला था।

धरती पर हिमयुग एक सतत प्रक्रिया है। हजारों लाखों वर्षों के अंतराल पर होती रहती है। विघटन की वजह से पृथ्वी पर हिम की परतों और ग्लेशियरों के विस्तार से होता है। धरती बर्फ की चादर ओढ़ लेती है। हालांकि हिम युग का आदि और अंत को लेकर रहस्य बरकरार है। फिर भी वैज्ञानिक मानते हैं कि पिछला हिमयुग 25 लाख 80 हजार साल पहले शुरू हुआ था और 11 हजार साल पहले समाप्त हुआ।

हिमयुग की आहट के पर यूरोपीय आयोग के संयुक्त अनुसंधान केंद्र (जेआरसी) की अध्ययन रिपोर्ट आई है। इसमें वैश्विक तापमान में करीब तीन डिग्री सेल्सियस की वृद्धि का अनुमान है। यह पर्यावरण विदों की ओर से वैश्विक तापमान में दो डिग्री सेल्सियस से कम करने के निर्धारित प्रयास के महत्व को रेखांकित करता है। यह कार्बन उत्सर्जन में कटौती के लिए जरूरी है। जेआरसी की अध्ययन रिपोर्ट पेरिस में होने जा रहे संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन 2015 में लिए जाने वाले फैसलों का आधार बनने जा रही है। सम्मेलन 30 नवंबर से 11 दिसंबर तक है। सम्मेलन में लिए जा सकने वाले फैसले के लिए 155 देशों ने वर्तमान जलवायु परिवर्तन की दशा को सुधारने के लिए अपना इंटेंडेड नेशनली डिटरमाइंट कंट्रीब्यूशन (आईएनडीसी) प्रतिबद्धता रिपोर्ट सौंपी है।

इन प्रतिबद्धता रिपोर्टों के अध्ययन के आधार पर जेआरसी के वैज्ञानिकों का आंकलन का निष्कर्ष है कि यदि आइएनडीसी को बिना शर्त सामूहिक रूप से और पूर्णत लागू किया गया तो 2010 के स्तर से 2030 तक वैश्विक उत्सर्जन में 17 फीसदी की वृद्धि होगी। वैश्विक तापमान की वृद्धि पर नियंत्रण के लिए वैश्विक उत्सर्जन को कम करने के लिए और ज्यादा अनुशासन की जरूरत पड़ेगी।

कार्बन उत्सर्जन से वातावरण में मौजूद गैसों के अनुपात में परिवर्तन का गंभीर खतरा बना हुआ है। औद्योगिकीकरण के बाद से कार्बन डाइ ऑक्साइड के उत्सर्जन में सौ गुना बढ़ोत्तरी हुई है। पिछले डेढ़ दशक में यह 40 गुना बढ़ गया है। इसका उत्सर्जन आम प्रयोग के वातानुकूलक उपकरणों, फ्रीज, कंप्यूटर, बस, ट्रक, स्कूटर, कार आदि से होता है। कार्बन डाइ ऑक्साइड के उत्सर्जन का सबसे बड़ा स्त्रोत पेट्रोलियम ईंधन और परंपरागत चूल्हे हैं। कोयला बिजली घर ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन के प्रमुख स्त्रोत हैं। ऊर्जा के लिए हाइड्रो क्लोरो-फ्लोरो कार्बन का प्रयोग हो रहा है। यह कार्बन डाइ ऑक्साइट की तुलना में एक हजार गुना ज्यादा हानिकारक गैस बताया जाता है।

नासा के भौतिक वैज्ञानिकों का कहना है कि यदि तीसरे विश्वयुद्ध में परमाणु शस्त्र का प्रयोग हो तो आसमान को कालिख से भर देने वाली असीमित परमाणु ऊर्जा निकलेगी। यह कालिख सूरज की रोशनी और धरती के बीच जम जाएगी और इससे हिमयुग का सूत्रपात हो जाएगा। वैज्ञानिक राय है कि वातावरण के मौजूदा गैस अनुपात में बदलाव और सूर्य की परिक्रमा मार्ग के परिवर्तन जैसी परिस्थितियां हिमयुग का नींव रखेंगी। फिलहाल पृथ्वी का एक तिहाई भाग जमीन और शेष पानी है। यह पानी जलवायु को नियंत्रित करता है। समुद्री पानी की ऊपरी परत गर्म और निचली ठंडी होती हैं। पिछले कुछ समय से ऊपरी गर्म परतें पतली हो रही हैं। इससे महासागर ठंडे हो रहे हैं और तापमान में गिरावट आ रही है।

कार्बन उत्सर्जन अथवा ग्लोबल वार्मिंग के अलावा हिमयुग धरती के कक्ष में परिवर्तन की वजह से आ सकता है। इस परिवर्तन में धरती के सूर्य की परिक्रमा करने अनोखापन शामिल है। उसके अक्ष में झुकाव के परिणाम और धुरी पर धूर्णन गति के धीमी होने से तापमान में स्वाभाविक गिरावट आती है। यह हजारों वर्षों के अंतराल के बाद होता रहा है। फिर लाखों वर्ष का सफर धरती की जलवायु को उष्ण इंटरग्लेशियल से शीत हिमयुग में तब्दील करता है। वैज्ञानिकों के मुताबिक इंटरग्लेशियल और हिमयुग के तापमान में महज दस डिग्री सेंटीग्रेड अंतर होता है।

विज्ञान की पत्रिका 'नेचर जिओसांइस' में वैज्ञानिकों का आकलन है कि स्वीकृत खगोलीय मॉडल के अनुसार अगला हिमयुग आगामी 1500 वर्ष के दौरान आ सकता है। लोरिडा विश्वविद्यालय के प्राध्यापक और रिपोर्ट के सह लेखक जिम चौनल के अनुसार अंटार्कटिका में ग्लोबल वार्मिंग से बर्फ की मोटी परतें पिघल रहीं हैं और इससे समुद्र के आकार में बढ़ोत्तरी हो रही है। समुद्र का जलस्तर बढ़ रहा है। इस अध्ययन में खगोलीय मॉडल का इस्तेमाल किया गया। मौजूदा पैटर्न के आंकडों से संकेत निकाला गया है कि ऐसे ही बदलाव की रफ्तार बने रहे तो धरती पर गर्मी का वर्तमान ग्राफ पर अगले 1500 वर्ष में रोक लग जानी चाहिए।

'नेचर जिओसांइस' में वैज्ञानिकों का आकलन है कि स्वीकृत खगोलीय मॉडल के अनुसार अगला हिमयुग आगामी 1500 वर्ष के दौरान आ सकता है। फ्लोरिडा विश्वविद्यालय के प्राध्यापक और रिपोर्ट के सह लेखक जिम चौनल के अनुसार अंटार्कटिका में ग्लोबल वार्मिंग से बर्फ की मोटी परतें पिघल रहीं हैं और इससे समुद्र के आकार में बढ़ोत्तरी हो रही है। समुद्र का जलस्तर बढ़ रहा है।

फिर हमारी धरती हिम युग की ओर लुढ़कती चली जाएगी।

हालांकि कुछ वैज्ञानिकों का यह भी मानना है कि ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन से हिमयुग आने में देरी हो सकती है। यूनिवर्सिटी कॉलेज लंदन, कैंब्रिज और फ्लोरिडा विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं का निष्कर्ष है कि कार्बन डाई आक्साईड का उत्सर्जन अब रूक भी जाए तो धरती को ठंडा होने में वक्त लगेगा।

पृथ्वी के हिमयुग से बाहर निकलने की प्रक्रिया के बारे कहा जाता है कि समुद्र की तरंग से धरती गर्म होती है। फिर आंतरिक परिवर्तनों से भूखंड यानी नए टापू-द्वीप, पहाड़ बनते हैं। भूखंड की वजह से नदियों का उद्गम संभव होता है। पौराणिक वर्णन में वराह पुराण में समुद्र से पृथ्वी के बाहर निकलने की कथा है।

वैज्ञानिक अवधारणाओं के मुताबिक धरती का हिमयुग में चले जाना और फिर उससे वर्षों बाद बाहर आना स्वाभाविक तौर पर जारी सतत् प्रक्रिया का हिस्सा है। हिमखंडों के बीच डायनासोर आदि के अवशेष गवाह हैं कि धरती पर मौजूदा जीवों से ज्यादा विशाल जीव मौजूद रहे थे। हिमयुग ने उनको लील लिया। हिमयुग के खतरे की आहट है कि ठंढ में अमेरिका के कई हैविटेशन वाले इलाकों में धरती का तापमान शून्य से पचास डिग्री तक पहुंच जाना और 2010 में यूरोप में शून्य से पंद्रह डिग्री नीचे गिर गया था। पृथ्वी के हिमयुग से बाहर निकलने की प्रक्रिया के बारे कहा जाता है कि समुद्र की तरंग से धरती गर्म होती है। फिर आंतरिक परिवर्तनों से भूखंड यानी नए टापू-द्वीप, पहाड़ बनते हैं। भूखंड की वजह से नदियों का उद्गम संभव होता है। पौराणिक वर्णन में वराह पुराण में समुद्र से पृथ्वी के बाहर निकलने की कथा है। यह हिमयुग के बाद धरती के फिर से विकास की कथा को दर्शाता है।

हिमयुग वातावरण में मौजूद गैसों के अनुपात में परिवर्तन से आता है। कार्बन उत्सर्जन की बढ़ती मात्रा को लेकर दुनिया के सुधिजन चिंतित है और जतन कर रहे हैं कि अनुशासन के जरिए इस पर प्रतिबंध लगाया जाए। यह हमारे वश में है। प्रतिबंध से हिमयुग में पदार्पण को हमेशा के लिए न सही लेकिन कुछ समय के लिए टाला जा सकता है। इसके अलावा ऐसे कई कारक हैं जिनपर इंसान का वश नहीं है। मसलन हिमयुग का पदार्पण पृथ्वी के सूर्य की परिक्रमा पथ में परिवर्तन से हो सकता है। पृथ्वी के तापमान को सूर्य के ताप ने संतुलित कर रखा है। परिक्रमा पथ में परिवर्तन से सूर्य से आ रहा ताप कम या ज्यादा होते ही हिम का आच्छादन बढ सकता है।

हिमयुग के पदार्पण की अन्य वजह पृथ्वी की सतह के नीचे की टैक्टॉनिक प्लेट्स हैं। इनके खिसकने से पृथ्वी की सतह में बदलाव की आशंका है। वैज्ञानिक कारणों में हिमयुग में जाने की एक वजह वृहस्पति और शनि ग्रह के पृथ्वी के खगोलीय चक्र में आने पर गुरुत्वाकर्षण में आने वाला चक्रीय बदलाव बना है। यह पृथ्वी की दिशा और झुकाव में आंशिक बदलाव ला रहा है। धरती के ध्रुव पर सूर्य के प्रकाश की पहुंच में कमी आ रही है। अलास्का, उत्तरी कनाडा और साइबेरिया में साल भर बर्फ का आच्छादन बना हुआ है।

हिमयुग की परिकल्पना के अन्य कारण में पृथ्वी का आंतरिक स्पंदन है। इसकी वजह से वातावरण में बदलाव का सिलसिला जारी है। बदलाव का यह आभास ज्वालामुखी फटने अथवा भूकंप आदि के समय निरंतरता किया जा सकता है। स्पष्ट आभास है कि अंदरूनी प्लेट्स निरंतर खिसक रही हैं। कार्बन उत्सर्जन एवं अन्य कारणों से वातावरण में मौजूद गैसों के अनुपात में परिवर्तन आ रहा है। इससे हवा और समुद्री धाराएं प्रभावित होंगी। सूर्य से निकलने वाली ऊर्जा के पृथ्वी तक पहुंचने की रफ्तार में परिवर्तन, विशाल उल्कापिंडों का पृथ्वी पर आ गिरना और बड़े-बड़े ज्वालामुखियों के फटने से पैदा होने वाली नई ऊर्जा परिस्थिति से धरती पर हिमयुग

वैज्ञानिक अवधारणाओं के मुताबिक धरती का हिमयुग में चले जाना और फिर उससे वर्षों बाद बाहर आना स्वाभाविक तौर पर जारी सतत् प्रक्रिया का हिस्सा है। हिमखंडों के बीच डायनासोर आदि के अवशेष गवाह हैं कि धरती पर मौजूदा जीवों से ज्यादा विशाल जीव मौजूद रहे थे। हिमयुग ने उनको लील लिया।

आ सकता है। पृथ्वी का मौसम खगोलीय ऊर्जा को ग्रहण करने और उत्सर्जन के संतुलन पर निर्भर है। यह संतुलन कार्बन उत्सर्जन की मौजूदा रफ्तार से सीधे प्रभावित हो रही है। (http://www3.epa.gov/climatechange /science/causes.html) ❑

(पृष्ठ 50 से जारी ...)

निष्कर्ष

आज के दौर में मानव विकास की दौड़ में इतना आगे बढ़ गया है कि उसे अपने पर्यावरण की ओर देखने का समय नहीं है। वह यह भूलता जा रहा है कि उसे पृथ्वी पर रहना है। विश्व में प्रत्येक व्यक्ति में चाहे वह बच्चा हो या वृद्ध अपने पर्यावरण के प्रति सजगता, जागरूकता, चेतना और पर्यावरण अनुकूलन को विकसित करने की आवश्यकता है और तभी इस गंभीर समस्या का समाधान किया जा सकता है। वर्तमान समय में आवश्यकता इस बात की भी है कि मनुष्यों द्वारा पर्यावरण के साथ समन्वयात्मक, सहयोगात्मकता और सामन्जस्य पूर्ण संबंध को अपनाया जाए। साथ ही साथ हम अपने शास्त्र और प्राचीन संस्कृति को अपनाए और अपने संविधान में पर्यावरण संरक्षण के प्रावधानों का पालन करें। ❑

संदर्भ

1. अथर्ववेद 12/1/12
2. डा. भार्गव रणजीत, 'भारतीय पर्यावरण इतिहास' के झरोखे से, पृ. 8
3. ऋग्वेद के नदी सूक्त 10/75/5
4. ए. मापाजी सिनजेला, ''डेवलपिंग कंट्रीज पर्सेप्शन्स आफ इनवायर मेण्टल प्रोटेक्शन एंड एकनामिक डेवलपमेन्ट'', आईजेआईएल वाल्यूम 24 (1984) पृ0 489'
5. पुष्पेश पंत ''21वीं शताब्दी में अंतर्राष्ट्रीय संबंध'', मैकग्रा हिल एजुकेशन, नई दिल्ली, 2014, पृ. VIII-47
6. आरसी अग्रवाल, ''भारतीय संविधान का विकास तथा राष्ट्रीय आंदोलन'', एस. चंद एंड कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली, 2000, पृ. 55
7. वही पृ. 50
8. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी, ''भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व'', प्रथम संस्करण, 1981, पृ. 35

क्या आप जानते हैं?

कार्बन संग्रहण (सिक्वेस्ट्रेशन)

कार्बन संग्रहण (सिक्वेस्ट्रेशन) एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा कार्बन डाईऑक्साइड के वायुमंडलीय अथवा मानव-निर्मित स्रोतों, (जैसे– विशाल स्थैतिक औद्योगिक स्रोत) से कार्बन डायक्साइड का संग्रहण करके लंबे समय तक इसका भंडारण किया जाता है ताकि बाद में इसका इस्तेमाल किया जा सके। बिजली संयंत्रों, तेल-शोधकों, कोयला और गैस संयंत्रों, इथेनॉल, सीमेंट उत्पादन और प्राकृतिक गैस प्रसंस्करण संयंत्रों जैसे मानव-निर्मित बड़े स्थल इनमें शामिल हैं। इस प्रक्रिया के तीन मुख्य चरण हैं। पहले चरण में इन उपर्युक्त स्रोतों से कार्बन डायक्साइड का संग्रहण करना शामिल है। दूसरे चरण में इस प्रकार संग्रहित कार्बन डायक्साइड का आयतन घटाकर पाइपलाइनों, रेल-गाड़ियों, ट्रकों अथवा जलयानों के माध्यम से इसे दूसरे स्थानों तक ले जाना शामिल है। तीसरे चरण में इस कार्बन डाईऑक्साइड का लंबे समय तक पृथ्वी की सतह में भूमिगत चट्टानी परतों की गहराई में भंडारण करना शामिल है।

मुख्यत: कार्बन संग्रहण के दो प्रकार हैं: भूगर्भीय और भूतलीय संग्रहण। भूतलीय संग्रहण में पेड़-पौधों द्वारा जड़ों, शाखाओं और मृदा में कार्बन डाईऑक्साइड का संग्रहण कराया जाता है, ताकि वे प्रकाश संश्लेषण में इसका इस्तेमाल कर सकें तथा जब ये पौधे मुरझाते हैं तो संग्रहित कार्बन के घटक को मिट्टी में मिलाकर उसे अधिक उर्वरता प्रदान करते हैं। इस प्रकार, यह निश्चित तौर पर प्राकृतिक तौर पर अपेक्षाकृत अधिक समय तक पेड़-पौधों और मिट्टी में अधिक मात्रा में कार्बन के अवशोषण के लिए भूमि प्रबंधन तकनीकों का इस्तेमाल करता है।

दूसरी ओर, भूगर्भीय संग्रहण में संग्रहित कार्बन डाईऑक्साइड को बालू-पत्थर, बेसाल्ट, डोलोमाइट, शेल, सेलिन संरचनाओं और कोयला खानों जैसे ठोस चट्टानी संरचनाओं में प्रविष्ट करके उसका भंडारण शामिल है। ये परतें मजबूत और ठोस चट्टानों के नीचे होती हैं, ताकि ऊपर की ओर बहकर निकलना रोका जा सके। सुरक्षित भंडार की समुचित जांच करके ही कार्बन डाईऑक्साइड को इसमें प्रविष्ट कराया जाता है, ताकि वह बहकर नष्ट न हो।

यदि हम अमरीका का उदाहरण सामने रखें, तो पाएंगे कि बिजली उत्पादन संयंत्रों से 40 प्रतिशत से अधिक कार्बन डाईऑक्साइड उत्सर्जित होती है। यदि इस प्रौद्योगिकी को 500 मेगावाट क्षमता वाले कोयला आधारित संयंत्र में लागू किया जाता है तो ग्रीन हाऊस गैस उत्सर्जन की उतनी मात्रा को रोका जा सकता है, जितना कि 6 करोड़ 20 लाख पेड़ लगाने से संभव होता है और मोटे तौर पर 3,00,000 घरों से वार्षिक विद्युतीय उत्सर्जन से भी बचा जा सकता है। अत: स्पष्ट है कि यह तकनीक पर्यावरण के अनुकूल है। इस प्रकार संग्रहित और भंडारित कार्बन डाईऑक्साइड का पेय पदार्थ बनाने, खाद्य विनिर्माण, कागज और लुगदी उद्योग, धातु मिश्रण और तेल उद्योगों में बहु-विध इस्तेमाल होता है। कार्बन संग्रहण की अवधारणा, विशेषकर मौजूदा समय में महत्वपूर्ण साबित हो रही है और आने वाले समय में इसका महत्व और भी अधिक होगा, क्योंकि इससे सीमेंट उत्पादन और प्राकृतिक गैस प्रसंस्करण संयंत्रों से काफी मात्रा में ग्रीन हाऊस गैस उत्सर्जन में कमी लाने में मदद मिलती है। इस प्रकार, निश्चित तौर पर इस प्रौद्योगिकी के महत्व को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता, खासकर तब, जब हमें जलवायु परिवर्तन जैसी खतरनाक वैश्विक स्थिति से निपटने के लिए प्रयास करना है।

प्रस्तुति: वाटिका चंद्रा, उपसंपादक (योजना, अंग्रेजी) ईमेल: vchandra.iis2014@gmail.com

योजना अब फेसबुक पर

आपकी लोकप्रिय पत्रिका **'योजना'** अब फेसबुक पर हिंदी में **योजना हिंदी** नाम से पृष्ठ के साथ आधिकारिता रूप से मौजूद है। इस पृष्ठ को फेसबुक द्वारा सत्यापित भी किया जा चुका है। सुधि पाठकों से निवेदन है कि हमारे पृष्ठ पर आएं और हमारी गतिविधियों तथा आगामी अंकों के बारे में ताज़ी जानकारी प्राप्त करें।

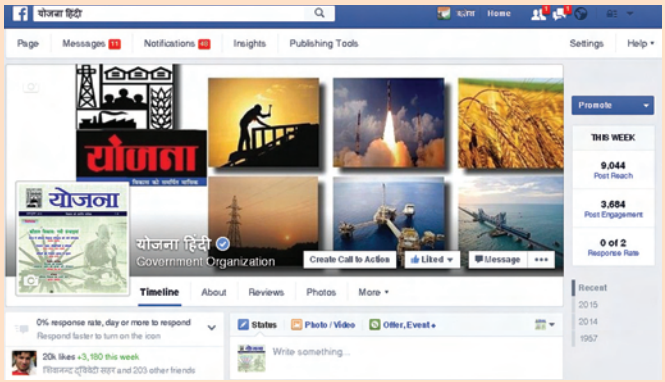

योजना हिंदी के फेसबुक पेज को 23,000 से ज्यादा तथा अंग्रेजी पृष्ठ YOJANA JOURNAL को 1.72 लाख से ज्यादा LIKES हासिल हो चुकी हैं। इस समर्थन के लिए पाठकों का धन्यवाद।

हमारा पता : http://www.facebook.com/Yojanahindi **फेसबुक पर मिलें, Like करें और सुझाव दें।**

'लीजेंड्स ऑफ इंडियन सिल्वर स्क्रीन' का लोकार्पण

दादा साहब फाल्के पुरस्कार से सम्मानित विजेताओं पर केंद्रित पुस्तक 'लीजेंड्स ऑफ इंडियन सिल्वर स्क्रीन का लोकार्पण केंद्रीय सूचना एवं प्रसारण मंत्री श्री अरुण जेटली ने भारतीय अंतर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सव 2015 के दौरान गोवा में किया। यह प्रकाशन विभाग की नवीनतम पुस्तक है। लोकार्पण के मौके पर अभिनेत्री सोनाक्षी सिन्हा, फिल्म निर्देशक कबीर खान और एक अन्य अभिनेत्री देविका भिसे भी मौजूद थीं।

प्रकाशन विभाग विभिन्न विधाओं में पुस्तकों का प्रकाशन करता रहा है। इसी क्रम में भारतीय फिल्म जगत में योगदान करने वाली विभूतियों पर भी विभाग द्वारा लगातार दस्तावेज रूपी प्रकाशनों का प्रयास किया जाता रहा है। यह नवीनतम प्रकाशन इसी की एक कड़ी है। पुस्तक में 1992 से 2014 तक के 23 पुरस्कार विजेताओं पर केंद्रित आलेखों का संग्रह इनमें दिलीप कुमार, गुलजार, के बालचन्दर, शिवाजी गणेशन, भूपेन हजारिका, हृषिकेश मुखर्जी, मजरुह सुल्तानपुरी, आशा भोसले आदि प्रमुख हैं। लेखकों में प्रख्यात फिल्म लेखक व समालोचक जैसे सैबाल चटर्जी, रसेल ड्वेयर, जय अर्जुन सिंह आदि शामिल हैं।

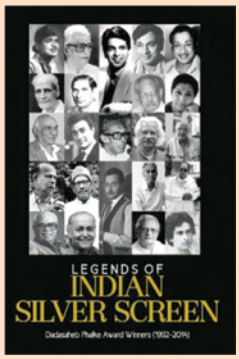

इससे पहले प्रकाशन विभाग द्वारा कन्साइंस ऑफ रेस: इंडियाज ऑफबीट सिनेमा, समय सिनेमा और इतिहास, भारतीय सिनेमा के सौ साल तथा ग्रेट मास्टरर्स ऑफ इंडियन सिनेमा जैसी किताबें प्रकाशित हो चुकी हैं जो भारतीय फिल्म जगत पर केंद्रित हैं।

प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय की एक मीडिया इकाई है जो इतिहास, कला, साहित्य, सांस्कृति, विज्ञान, राष्ट्रीय विभूतियों, नेताओं आदि पर पुस्तकों और विकास तथा संस्कृति केंद्रित विषयों पर मासिक पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन के जरिए सूचनाओं के प्रसारण तथा भारत की विरासत के लगातार संरक्षण के लिए प्रयत्नशील है।

राष्ट्रीय एकता दिवस पर 'एकता दौड़' का आयोजन

देश के प्रथम गृहमंत्री व उप प्रधानमंत्री सरदार वल्लभ भाई पटेल की जयंती पर नई दिल्ली के राजपथ पर ''एकता दौड़'' का आयोजन किया गया जहां प्रधानमंत्री ने एकत्रित लोगों को शपथ दिलाई और 'एकता दौड़' को झंडी दिखाकर रवाना किया। इस मौके पर एकत्रित युवाओं और छात्रों को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि देश की एकता सरदार पटेल ने एक सूत्र में पिरोई थी। प्रधानमंत्री ने कहा कि सरदार पटेल ने हमें 'एक भारत' दिया था और अब यह हमारी जिम्मेदारी है कि हम इसे 'श्रेष्ठ भारत' बनाएं। उन्होंने कहा कि एकता, शांति और सौहार्द वे सिद्धांत जिस पर चलकर 125 करोड़ भारतीय आगे बढ़ सकते हैं।

प्रधानमंत्री ने 1920 के दशक में अहमदाबाद के मेयर के रूप में साफ-सफाई अभियान और महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण के प्रस्ताव सहित सरदार पटेल द्वारा उठाए गए कदमों का स्मरण किया। श्री नरेंद्र मोदी ने नई योजना 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की रूपरेखा रखी, जिस पर केंद्र सरकार राज्यों के साथ तालमेल में कार्य कर रही है। उन्होंने कहा कि इस योजना के तहत दो राज्य एक वर्ष की अवधि के लिए अनोखी साझेदारी करेंगे। इस अवधि के दौरान चयनित दोनों राज्यों के बीच सांस्कृतिक और शैक्षिक आदान-प्रदान किया जाएगा, जिससे इन राज्यों के लोगों को एक दूसरे को समझने और करीब आने का अवसर मिलेगा। उन्होंने कहा कि प्रत्येक वर्ष अलग-अलग राज्य एक-दूसरे के साझेदार हो सकते है।

स्रोत: प.सू.का

सार-संक्षेप

वन्य कार्बन सिंक बढ़ाने की दिशा में भारत के आईएनडीसी लक्ष्य

- अतिरिक्त वन एवं पादप क्षेत्र के जरिए 2.5-3 अरब टन कार्बन डाइऑक्साइड के समकक्ष अतिरिक्त कार्बन सिंक का सृजन (अनुमानित 68 से 82 करोड़ कार्बन भंडार वृद्धि)
- ग्रीन इंडिया मिशन का का पूर्ण अनुपालन
- हरित राजमार्ग नीति की शुरूआत: राजमार्गों के किनारे 14 हजार किमी लंबी ट्री-लाईनण परियोजना लागत का एक प्रतिशत भाग वृक्षारोपण के लिए सुरक्षित किया जा सकता है
- नदियों के किनारे वृक्षारोपण: नमामि गंगे परियोजना का एक भाग
- कार्बन सिंक बढ़ाने की दिशा में वित्त आयोग की ओर से प्रोत्साहन: केन्द्रीय पूल से राज्य पूल में निधि अंतरण (इसमें वन क्षेत्र की हिस्सेदारी को 7.5 प्रतिशत महत्व दिया जा रहा है)
- काष्ठ/बायोमास ईंधनकी खपत में कमी
- पूरक वनाच्छादन निधि प्रबंधन एवं नियोजन प्राधिकरण (सीएएमपीए) द्वारा राज्यों को 6 अरब अमेरिकी डॉलर का प्रस्ताव
- अन्य नीतियां: रेड(आरईडीडी) प्लस, राष्ट्रीय कृषि वानिकी नीति, संयुक्त वन प्रबंधन, राष्ट्रीय वनाच्छादन कार्यक्रम

अजीवाश्मीय ऊर्जा आधारित बिजली को प्रोत्साहन: भारत के आईएनडीसी लक्ष्य

- 2030 तक स्थापित विद्युत ऊर्जा क्षमता का 40 प्रतिशत अजीवाश्मीय स्रोतों से प्राप्त करना
- अजीवाश्मीय ऊर्जा क्षमता में 2015 तक 33 प्रतिशत छलांग
- भारत की नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता विस्तार योजना दुनिया की ऐसी सबसे बड़ी योजनाओं में शामिल
- इस क्षेत्र में 2022 तक 175 गीगावाट के लक्ष्य का परिणाम कार्बन डाइऑक्साइड में 32 करोड़ 60 लाख टन प्रतिवर्ष कमी के रूप में सामने आएगा
- पवन ऊर्जा, सौर ऊर्जा, जल ऊर्जा, बायोमास एवं नाभिकीय ऊर्जा को सम्मिलित करना।
- देश के सभी टोल नाकों और पेट्रोल पंपों को सौर ऊर्जा से जोड़ना।
- 25 सौर पार्कों के विकास की स्कीम जारी नहर के ऊपर सौर परियोजना, कृषकों के लिए 1000 सौर पंप, भारत द्वारा वैश्विक सौर गठबंधन की अध्यक्षता, पवन ऊर्जा और कचरे से ऊर्जा के नए मिशन, हरित ऊर्जा कॉरिडोर परियोजनाएं जो नवीकरणीय ऊर्जा वाले पौधों को बचाएं।

भारत के आईएनडीसी लक्ष्य तकनीकी विकास एवं हस्तांतरण

- नयी पर्यावरण तकनीक का तीव्र विसरण करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय ढांचा तथा घरेलू मापदंड तैयार करना एवं संयुक्त रिसर्च एवं विकास के लिए खाका तैयार करना।
- जीसीएफ के द्वारा महत्वपूर्ण प्रौद्योगिकियों को बढ़ावा देना।
- अनुसंधान एवं विकास में वैश्विक संभागिता।
- भारत के आईएनडीसी प्रस्तावों में प्रारंभिक एवं

मंगल मिशन पर पहली हिंदी एटलस पुस्तक

देश के विभिन्न अंतरिक्ष मिशनों खासकर मंगल मिशन पर जागरुकता के लिए पहली हिंदी एटलस पुस्तक रिलीज की गई। यह अन्य विकसित देशों के अंतरिक्ष एवं नाभिकीय ऊर्जा विभाग द्वारा जारी अन्य जानकारियां भी प्रदान करेगा।

देश के वैज्ञानिकों द्वारा आपस में हिंदी में वार्तालाप करना विदेश से आए वैज्ञानिकों को अपने भारतीय साथी वैज्ञानिकों के साथ हिंदी में जानकारी साझा करने को उत्साहित करेगा। अंतरिक्ष एवं परमाणु विभाग जैसे वैज्ञानिक विभागों के द्वारा हिंदी को बढ़ावा देने से ऐसे नवयुवक वैज्ञानिकों एवं प्रतिभाओं को आगे आने का एक मंच मिलेगा जो प्रतिभावान हैं किंतु अंग्रेजी का पर्याप्त ज्ञान नहीं है।

जलवायु परिवर्तन: अब तक के वैश्विक प्रयास एक नजर में

1997– क्योटो प्रोटोकॉल: उत्सर्जन में कटौती का वादा

1992– रियो डे जेनेरियो: पर्यावरण और विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन, जिसके बाद जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएफसीसीसी) बना।

1995– बर्लिन: यूएनएफसीसीसी का पहला पक्षकार सम्मेलन (सीओपी) हुआ जिसमें उत्सर्जन का लक्ष्य तय किया गया।

1997– क्योटो: जापान के क्योटो में पक्षकार क्योटो प्रोटोकॉल के तहत उत्सर्जन का लक्ष्य तय करने पर राजी हुए।

2007– बाली: राष्ट्रीय उचित शमन क्रिया (नामा) पेश, स्वैच्छिक शमन प्रयास में विकासशील देश शामिल।

2009-2010 (कोपेनहेगन एवं कैनकन सीओपी): सामूहिक कार्रवाई और प्रमुख विकासशील देशों (भारत सहित) के लिए व्यापक अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था स्वैच्छिक शमन प्रतिज्ञाओं का ऐलान ।

2011– डरबन सीओपी: 2020 के बाद के लिए नए समझौते तय करने के लिए एडीपी पेश।

वार्सा एवं लीमा सीओपी: सभी देशों के लिए आईएनडीसी

वार्सा में 19वीं सीओपी: सभी देशों को आईएनडीसी तैयार करना और पेरिस में 21वीं सीओपी में पेश करना है।

2014– लीमा: 20वीं सीओपी, आईएनडीसी पर ज्यादा स्पष्टता: प्राथमिकताओं के अनुसार शमन नहीं बल्कि अन्य घटकों को शामिल करने का सुझाव।

स्वैच्छिक राष्ट्रीय लक्षित सहयोग (आईएनडीसी)

वार्सो में वर्ष 2013 में आयोजित 19वें सीओपी (पक्षों के सम्मेलन) में यह निर्णय किया गया था कि वर्ष 2020 के बाद जलवायु परिवर्तन के नियंत्रण के लिए एक मार्ग निर्देश तैयार करके सार्वजनिक तौर पर उसकी घोषणा करेंगे। इसे प्रत्येक देश के लिए इंटेंडेड नेशनली डिटर्मिन्ड कंट्रीब्यूशन (आईएनडीसी) के रूप में जाना जाएगा और यह दिसंबर 2015 में पेरिस में जलवायु परिवर्तन पर आधारित संयुक्त राष्ट्र संधि कार्यक्रम से जुड़े पक्षों (सीओपी-2) के सम्मेलन में पेश होने वाले नए अंतर्राष्ट्रीय जलवायु समझौते का हिस्सा होगा। आईएनडीपी राष्ट्रीय नीति से जुड़े लक्ष्यों को ध्यान में रखेगा और विभिन्न देश अपनी-अपनी प्राथमिकताओं, परिस्थितियों और क्षमताओं के संदर्भ में अपनी ओर से योगदान निर्धारित करेंगे। इसके साथ एक वैश्विक कार्यक्रम भी जुड़ा होगा, जो भविष्य में कार्बन उत्सर्जन में कमी लाने और जलवायु के अनुकूलन की दिशा में सामूहिक तौर पर काम करेगा।

आईएनडीसी के माध्यम से जलवायु परिवर्तन पर नियंत्रण करने, घरेलू परिस्थितियों और विकास की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विभिन्न उत्सर्जनों में कमी लाने के उद्देश्य से प्रत्येक देश की पहुंच का पता चलेगा, जिससे वे भविष्य में कार्बन मुक्त और जलवायु परिवर्तन पर नियंत्रण के साझा लक्ष्य तक पहुंचने के लिए अंतर्राष्ट्रीय समुदाय की मदद करने अथवा मदद लेने में सक्षम होंगे। पेरिस में नवंबर-दिसंबर 2015 में जलवायु परिवर्तन पर आधारित संयुक्त राष्ट्र संधि कार्यक्रम (यूएनएफसीसीसी) के पक्षों के सम्मेलन (सीओपी-2) में विभिन्न आईएनडीसी को पेश किया जाएगा, जहां जलवायु परिवर्तन पर आधारित एक नया अंतर्राष्ट्रीय समझौता होना है।

भारत का स्वैच्छिक राष्ट्रीय लक्षित सहयोग: एक नजर में

भारत का आईएनडीसी स्वच्छ ऊर्जा को बढ़ावा देने की नीतियों और ऐसे कार्यक्रमों विशेषकर, अक्षय ऊर्जा, ऊर्जा आत्मनिर्भरता कम मात्रा में कार्बन उत्सर्जन और प्रतिरोधक शहरी केंद्रों को विकसित करने, कचरे को संपदा के रूप में विकसित करने, सुरक्षित, चुस्त और टिकाऊ हरित परिवहन प्रणाली, प्रदूषण में कमी लाने और वनाच्छादन तथा पेड़-पौधे लगाकर कार्बन का अवशोषण बढ़ाने से जुड़े भारत के प्रयासों के आस-पास केंद्रित है। यह जलवायु परिवर्तन से निपटने में नागरिकों और निजी क्षेत्र से भी योगदान प्राप्त करता है। आईएनडीसी के प्रस्ताव निम्नलिखित पर आधारित हैं:

1. टिकाऊ रहन-सहन, 2. अपेक्षाकृत स्वच्छ आर्थिक विकास, 3. सकल घरेलू उत्पाद पर आधारित उत्सर्जन घटाना, 4. गैर-जीवाश्म ईंधन आधारित बिजली का हिस्सा बढ़ाना, 5. कार्बन का अवशोषण (वन द्वारा) बढ़ाना, 6. अपनाना, 7. धन जुटाना, 8. प्रौद्योगिक हस्तांतरण और क्षमता निर्माण।

आईएनडीसी के कुछ मुख्य बिंदु हैं:

- संरक्षण और सुधार की परंपराओं और मूल्यों पर आधारित स्वास्थ्य और टिकाऊ रहन-सहन पर जोर देना।
- आर्थिक विकास के अनुषंगी स्तर पर किसी तरीके की तुलना में जलवायु के अनुकूल और स्वच्छ तरीके अपनाना।
- वर्ष 2030 तक अपने सकल घरेलू उत्पाद पर आधारित उत्सर्जनों में वर्ष 2005 के स्तर से 33 से 35 प्रतिशत कमी लाना।
- प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और ग्रीन क्लाइमेट फंड सहित किफायती अंतर्राष्ट्रीय वित्तपोषण के बल पर वर्ष 2030 तक गैर-जीवाश्म ईंधन आधारित ऊर्जा संसाधनों से कुल मिलाकर बिजली की स्थापित क्षमता के लगभग 40 प्रतिशत लक्ष्य तक पहुंचना।
- वर्ष 2030 तक अतिरिक्त वनाच्छादन और पेड़-पौधे के बल पर अतिरिक्त 2.5 से 3 अरब टन कार्बन डायक्साइड का अवशोषण सुनिश्चित करना।
- जलवायु परिवर्तन के संवेदनशील क्षेत्रों, विशेषकर कृषि, जल संसाधन, हिमालयी क्षेत्र, समुद्रतटीय क्षेत्र, स्वास्थ्य और आपदा प्रबंधन जैसे क्षेत्रों से जुड़े विकास कार्यक्रमों में निवेश बढ़ाकर जलवायु परिवर्तन पर बेहतर नियंत्रण कायम करना।
- संसाधन की आवश्यकता और संसाधन की कमी को ध्यान में रखते हुए जलवायु परिवर्तन को रोकने और नियंत्रित करने के उपर्युक्त उपायों को लागू करने के लिए अपने देश से विकसित देशों से नयी और अतिरिक्त निधि जुटाना।
- भारत में जलवायु से जुड़ी अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी को शीघ्रतापूर्वक लाए जाने और भविष्य में ऐसी प्रौद्योगिकियों के लिए संयुक्त तौर पर सामूहिक अनुसंधान और विकास के लिए क्षमता निर्माण, घरेलू कार्यक्रम और अंतर्राष्ट्रीय अवसंरचना तैयार करना।

प्रकाशक व मुद्रक: डॉ. साधना राउत, अपर महानिदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय (भारत सरकार) द्वारा प्रकाशन विभाग के लिए ब्रजबासी आर्ट प्रेस लिमिटेड, ई-46/11, ओखला औद्योगिक क्षेत्र, फेस-2, नयी दिल्ली-110020 से मुद्रित एवं प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सी.जी.ओ. परिसर, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110003 से प्रकाशित। संपादक: ऋतेश पाठक

रजि.सं.डीएल (एस)-05/3231/2015-17
Reg.No. D.L.-05/3231/2015-17 at RMS, Delhi
23 नवंबर, 2015 को प्रकाशित • 29-30 नवंबर, 2015 को डाक द्वारा जारी

Licenced under U (DN)-55/2015-17
आर.एन.आई. 951/57
R.N.I. 951/57

अध्यापन कार्य यानि राष्ट्र का निर्माण

Useful Books	Code	Price
UGC-NET Teaching & Research Aptitude (General Paper-I)	420	315.00
UGC-NET Teaching & Research Aptitude (Gen. Paper-I)	1553	355.00
UGC-NET Teaching & Research Aptitude (Gen. Paper-I)	1761	345.00
UGC-NET Geography	336	225.00
UGC-NET Geography (Paper-II & III)	1735	599.00
UGC-NET Obj. Geography (Paper II)	320	215.00
UGC-NET English (Paper-II)	925	225.00
UGC-NET English Litt. (Paper II)	940	115.00
UGC-NET English (Paper II & III)	1549	310.00
UGC-NET English Literature (Paper II & III)	1723	330.00
UGC-NET English Literature (Paper II & III)	1736	475.00
UGC-NET PWB English (Paper II & III)	1809	235.00
UGC-NET Commerce (Paper-II)	968	199.00
UGC-NET Commerce (Paper-II)	888	445.00
UGC-NET Commerce (Paper-II & III)	1861	515.00
UGC-NET Computer Science (Paper-II & III)	894	750.00
UGC-NET Physical Education (Paper-II & III)	931	445.00
UGC-NET Management (Paper-II)	1653	455.00
UGC-NET Management (Paper-II & III)	1813	499.00
UGC-NET Management (Paper-III)	1701	450.00
UGC-NET Education (Paper-II)	1522	325.00
UGC-NET Education (Paper-III)	1531	430.00
UGC-NET Education (Paper-III)	1860	275.00
UGC-NET Education (Paper-II & III)	1815	399.00
UGC-NET PWB Education (Paper-II & III)	1803	235.00
UGC-NET Visual Art (Paper-II)	1752	180.00
UGC-NET Economics (Paper-II & III)	1775	635.00
UGC-NET Sociology (Paper-II)	1755	330.00
UGC-NET Sociology (Paper-III)	1772	460.00
UGC-NET Psychology (Paper-II)	1765	390.00
UGC-NET Psychology (Paper-III)	1770	350.00
UGC-NET Mass Communication and Journalism (Paper-II & III)	1764	510.00
UGC-NET History (Paper-II & III)	1769	540.00
UGC-NET History (Paper-II & III) Facts At a Glance (With Multiple Choice Questions)	1773	390.00
UGC-NET Home Science (Paper-II & III)	1771	525.00
UGC-NET Political Science (Paper-II & III)	1777	670.00
UGC-NET Library & Information Science (Paper-II & III)	1785	355.00
UGC-NET Social Work (Paper-II & III)	1791	325.00
UGC-NET PWB Human Resource Management (Paper-II & III)	1810	255.00

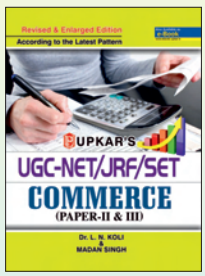

यू.जी.सी.-नेट/जे.आर.एफ./सेट

परीक्षा की विभिन्न आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए परीक्षोपयोगी विशेष सामग्री

उपयोगी पुस्तकें	Code No.	Price
UGC-NET प्रैक्टिस वर्क बुक जनरल पेपर-I	2226	180.00
UGC-NET जनरल पेपर-I (*डॉ. लाल, जैन एवं डॉ. वशिष्ठ*)	200	325.00
UGC-NET जनरल पेपर-I (*डॉ. मिथिलेश पाण्डेय*)	271	420.00
UGC-NET जनरल पेपर-I (*डॉ. के. कौटिल्य*)	2242	390.00
UGC-NET संस्कृत (द्वितीय प्रश्न-पत्र)	574	140.00
UGC-NET संस्कृत (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	2328	560.00
UGC-NET अर्थशास्त्र (*डॉ. अनुपम अग्रवाल*)	521	499.00
UGC-NET हिन्दी (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	567	415.00
UGC-NET हिन्दी (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	2258	395.00
UGC-NET भूगोल (द्वितीय प्रश्न-पत्र) (*डॉ. एम. एस. सिसोदिया*)	54	299.00
UGC-NET भूगोल (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	2191	499.00
UGC-NET राजनीति विज्ञान (द्वितीय प्रश्न-पत्र)	685	325.00
UGC-NET राजनीति विज्ञान (तृतीय प्रश्न-पत्र)	201	510.00
UGC-NET इतिहास (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	204	575.00
UGC-NET इतिहास (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र) महत्वपूर्ण तथ्य (वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तरों सहित)	2212	450.00
UGC-NET इतिहास (द्वितीय प्रश्न-पत्र)	714	310.00
UGC-NET इतिहास (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	2206	525.00
UGC-NET वाणिज्य (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	682	430.00
UGC-NET वाणिज्य (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	1226	470.00
UGC-NET वाणिज्य (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	2256	355.00
UGC-NET संगीत (द्वितीय प्रश्न-पत्र)	779	60.00
UGC-NET संगीत (द्वितीय प्रश्न-पत्र)	1323	65.00
UGC-NET संगीत (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	2204	250.00
UGC-NET मनोविज्ञान (द्वितीय प्रश्न-पत्र)	1048	215.00
UGC-NET मनोविज्ञान (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	1022	715.00
UGC-NET मनोविज्ञान (द्वितीय प्रश्न-पत्र)	2195	380.00
UGC-NET मनोविज्ञान (तृतीय प्रश्न-पत्र)	2210	370.00
UGC-NET गृह विज्ञान (द्वितीय प्रश्न-पत्र)	1336	240.00
UGC-NET गृह विज्ञान (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	1337	530.00
UGC-NET समाजशास्त्र (द्वितीय प्रश्न-पत्र)	2261	355.00
UGC-NET समाजशास्त्र (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	127	495.00
UGC-NET समाजशास्त्र (तृतीय प्रश्न-पत्र)	2267	395.00
UGC-NET समाजशास्त्र (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	2268	750.00
UGC-NET दृश्य कला (द्वितीय प्रश्न-पत्र)	10	220.00
UGC-NET दृश्य कला (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र) (**लेखिका :** डॉ. आभा सिंह)	2244	235.00
UGC-NET शिक्षाशास्त्र (द्वितीय प्रश्न-पत्र)	2081	310.00
UGC-NET शिक्षाशास्त्र (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	2269	380.00
UGC-NET शिक्षाशास्त्र (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र) (**लेखिका :** विनीता यादव)	2273	395.00
UGC-NET शारीरिक शिक्षा (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	2270	410.00
UGC-NET जनसंचार एवं पत्रकारिता (द्वितीय एवं तृतीय प्रश्न-पत्र)	2201	540.00

उपकार प्रकाशन (An ISO 9001:2000 Company)
2/11 ए, स्वदेशी बीमा नगर, **आगरा**-282 002 फोन : (0562) 4053333, 2530966; फैक्स : (0562) 4053330
• E-mail : **care@upkar.in** • Website : **www.upkar.in**
• **नई दिल्ली** 23251844/66 • **हैदराबाद** 66753330 • **पटना** 2673340 • **कोलकाता** 25551510 • **लखनऊ** 4109080 • **हल्द्वानी मो.** 7060421008

YH-215/2015